डॉ. उदयवीर शर्मा का रचनात्मक साहित्य : एक मूल्यांकन

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

कला संकाय

शोधार्थी
प्रियंका शर्मा

शोध निर्देशकः
डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली

सह शोध निर्देशकः
डॉ. कंचना सक्सेना

हिन्दी विभाग
राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

2018

प्रमाण पत्र

हमें यह प्रमाणित करते हुए प्रसन्नता है, कि शोध–प्रबन्ध **''डॉ. उदयवीर शर्मा का रचनात्मक साहित्य : एक मूल्यांकन''** शोधार्थी प्रियंका शर्मा (RS/1410/13) ने कोटा विश्वविद्यालय, कोटा के कला संकाय में पीएच. डी. (हिन्दी) के नियमानुसार निम्नलिखित आवश्यकताओं के साथ हमारे निर्देशन में पूर्ण किया है।

1. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार कोर्स वर्क पूर्ण किया है।
2. शोधार्थी ने 200 दिन के आवासीय आवश्यकता नियम को पूरा किया है।
3. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार समय–समय पर अपने कार्य का प्रगति प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है।
4. शोधार्थी ने विभाग व संस्था प्रधान के समक्ष अपना शोध कार्य प्रस्तुत किया है।
5. शोधार्थी का बताई गई शोध पत्रिका में शोध पत्र का प्रकाशन हुआ है।

हम इस शोध–प्रबन्ध को कोटा विश्वविद्यालय, कोटा की पी-एच.डी.(हिन्दी) उपाधि प्रदत्त किये जाने हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की अनुशंसा करतें हैं।

दिनांक :

सह शोध निर्देशकः
(डॉ. कंचना सक्सेना)

शोध निर्देशकः
(डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली)

शोध सार

डॉ. उदयवीर शर्मा हिन्दी और राजस्थानी के प्रतिष्ठित मूर्धन्य साहित्यकार है। आप बहुआयामी प्रतिभा के धनी है। आपने कविता, कहानी, ललित–निबन्ध, एकांकी, आलोचना, शोधकाव्य, लोक साहित्य आदि साहित्य की प्रत्येक विधाओ में काव्य रचना की है। आपके साहित्य में मानव और मानवता का भाव केन्द्र में रहा है। आपने अपने जीवन का आनन्द साहित्य सृजन में ही माना है।

आप सबसे पहले एक सुहृदय कवि है। सहज–सरल व्यक्तित्व के धनी है। आप प्रकृति और गाँव के कवि है। आपके साहित्य में प्रकृति रची बसी दिखाई देती है। आपके काव्य में ग्रामीण सभ्यता, संस्कृति, परम्परा और जीवन मूल्य के दर्शन होते है। इतिहास, लोक साहित्य और शोध के क्षेत्र में भी गाँव की सहजता का आकर्षण ही दिखाई देता है।

आपके इन्ही रचनात्मक साहित्यों से आत्मसात करवाने के लिए यह शोध कार्य किया गया है। इसमें आपके समग्र लेखन की पहचान एवं उपलब्धियों कों सार्थकता व श्रेष्ठता के सन्दर्भ में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। डॉ. शर्मा के लेखन में प्रौढ़ता, गंभीरता और मौलिकता की छाप है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध **सात अध्यायों** में विभक्त हैं। **प्रथम अध्याय – भारतीय भाषा परिवार और राजस्थानी** मे भाषा की उत्पति, भाषा के विकास का क्रम, भारतीय भाषा परिवार मे राजस्थानी भाषा व उसकी बोलियों पर विचार प्रकट कियें गयें है। भाषा के स्वरूप लिखित व मौखिक रूपों की व्याख्या की गयी है। राजस्थानी भाषा की विशेषताओं का वर्णन किया गया है। राजस्थानी भाषा का स्वरूपगत अध्ययन किया गया है। **डॉ. उदयवीर शर्मा** ने अपने साहित्य रचना के लिए राजस्थानी को ही विशेष महत्त्व दिया ।

द्वितीय अध्याय – डॉ. उदयवीर शर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व में डॉ. शर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए उनकी प्रमुख रचनाओं, पारिवारिक पृष्ठ भूमि, शिक्षा तथा साहित्य योगदान पर चर्चा करते हुए उन्हें प्राप्त सम्मान एवं पुरस्कार आदि का विवरण दिया गया हैं। उनकी सृजनात्मकता के विविध आयामों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया हैं।

तृतीय अध्याय – रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : पद्य में **डॉ. उदयवीर** के रचनात्मकता का विभाजन कर पद्य काव्य के वैशिष्टय को बताते हुए इसमें निहित लोक कल्याण की भावना को उद्धृत किया गया है, इनका प्रकृति से जुड़ाव दर्शाया गया है।

चतुर्थ अध्याय – रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : गद्य में **डॉ. उदयवीर** के गद्य के रचनात्मक पहलू यथा निबंध, एकांकी, लघुकथा आदि विविध रचनाओं की विषय वस्तु को उद्धृत करने का प्रयास किया है। डॉ. उदयवीर कवि के साथ–साथ एक श्रेष्ठ लेखक भी है, यह भी सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।

पंचम अध्याय – **गद्य–पद्य की रचनात्मकता का मूल्यांकन** में **डॉ. उदयवीर** गद्य व पद्य की रचनात्मकता का मूल्यांकन विभिन्न पहलूओं के आधार पर किया गया है। डॉ. शर्मा के विविध सामाजिक दृष्टिकोणों को विभिन्न बिन्दुओं के माध्यम से व्यक्त करके मूल्यांकन किया गया है।

षष्ठ अध्याय – **रचनात्मक कार्य की उपलब्धि एवं योगदान** में **डॉ. उदयवीर शर्मा** के कार्य की उपलब्धि एवं योगदान को उजागर किया गया है। उनकी व्यापक चिंतन शैली, मानवतावादी सोच, सांस्कृतिक मूल्य चेतना, पर्यावरण पर आदि पर शोध किया गया है।

सप्तम अध्याय – उपसंहार में इस शोध निष्कर्ष को प्रस्तुत करने के बाद मेरे द्वारा **डॉ. उदयवीर जी** का लिया गया **साक्षात्कार** भी प्रस्तुत किया गया हैं। इस **साक्षात्कार** में **डॉ. उदयवीर जी** के जीवन, समाज, धर्म, राजनीति आदि के काव्यों के बारे में शर्मा जी के विचार प्रस्तुत किये गये हैं।

इस प्रकार इस शोध प्रबन्ध में डॉ. उदयवीर शर्मा के समग्र रचनात्मक साहित्यों का मूल्यांकन का अध्ययन का प्रयास किया गया है।

दिनांक ....

प्रियंका शर्मा

पीएच.डी. (हिन्दी) शोधार्थी

पंजीयन क्रमांक – (RS/1410/13)

राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.)

घोषणा शोधार्थी

मै **प्रियंका शर्मा** (शोधार्थी, हिन्दी विभाग) यह घोषणा करती हूँ कि मेरा यह शोध–प्रबन्ध ''**डॉ. उदयवीर शर्मा का रचनात्मक साहित्य : एक मूल्यांकन "** जो मेरे द्वारा प्रस्तुत किया गया है, यह मेरा अपना शोधकार्य है। मैने यह शोधकार्य **डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली** (से.नि. प्राचार्य, कॉलेज शिक्षा, राज.) निर्देशन व **डॉ. कंचना सक्सेना** (विभागाध्यक्ष, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा) के सह निर्देशन मे पूर्ण किया है। यह मेरा अपना मौलिक कार्य है। मैने अपने विचारों को अपने शब्दों में प्रस्तुत किया है, और जहाँ दूसरे विचारों और शब्दों का प्रयोग किया गया है, वे मरे द्वारा मान्य स्रोतो से लिए गये है। अपरिहार्य स्थिति में ली गई ऐसी हर सामग्री का यथास्थान सन्दर्भ एवं आभार व्यक्त कर दिया गया है, जो कार्य इस शोध प्रबन्ध मे प्रस्तुत किया गया है।

मैं यह भी घोषणा करती हूँ कि मैने विश्वविद्यालय के सभी अकादमिक नियमों का निष्ठा एवं ईमानदारी से पालन किया है, तथा किसी तथ्य को गलत प्रस्तुत नहीं किया है। मैं समझती हूँ कि मेरे द्वारा किसी भी नियम उल्लंघन पर मेरे खिलाफ प्रशासनिक कार्यवाही की जा सकती है। मेरे खिलाफ जूर्माना भी लगाया जा सकता है यदि मैने किसी स्रोत से बिना, उसका नाम दर्शाये या जिस स्रोत से अनुमति की आवश्यकता हो, बिना अनुमति के लिया हो ।

दिनांक :

प्रियंका शर्मा

शोधार्थी (RS/1410/13)

प्रमाणित किया जाता है कि कि शोधार्थी प्रियंका शर्मा (RS/1410/13) द्वारा दी गयी उपर्युक्त सभी सूचनाएं मेरी जानकारी के अनुसार सही है।

दिनांक :

सह शोध निर्देशक
(डॉ. कंचना सक्सेना)

शोध निर्देशक
(डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली)

प्राक्कथन

मानव हृदय में जब से समझ एवं श्रद्धा का विकास हुआ है, तब से साहित्य के प्रति अनुराग दिखाई देता है। साहित्य मनोवेगों की सृष्टि है। इसका मुख्य उद्देश्य विभिन्न समस्याओं एवं मनःस्थितियों को उजागर करना है। इसमे सहित के भाव का समावेश है। समाज का उत्थान–पतन, उसकी चेतना के विकास का मूल स्रोत हृदयंगम करने हेतु साहित्य का ज्ञान आवश्यक है। साहित्य जनता की चित्तवृतियों का प्रतिबिम्ब होता है, जैसे–जैसे जनता की चित्तवृतियों में अन्तर उत्पन्न होता है, वैसे–वैसे साहित्य में भी अन्तर दिखाई देता है।

हिन्दी एवं राजस्थानी के प्रतिष्ठित एवं समर्थ रचनाकार **डॉ. उदयवीर शर्मा** बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी है। इन्होने गद्य एवं पद्य में अपनी सृजनात्मकता से नए आयाम स्थापित किये है। डॉ. शर्मा मूल रूप से कवि है और कवि की कविता का प्रभाव हर भाषा पर दिखाई देता है। बाह्य संसार की क्रिया–प्रतिक्रिया परिवेश से टकराते हुए रचनाकार की अनुभव संपदा से कभी गद्य तो कभी पद्य के रूप मे अभिव्यक्त होती है।

पुस्तकालय में अध्ययन करते हुए मैंने **डॉ. उदयवीर शर्मा** के साहित्य को पढ़ा। इनके साहित्य को जब मैंने पढ़ा तो मैंने इसमें पाया कि इनके साहित्य नवीन भाव–बोध को लेकर लिखे गये है।

मैंने अपने मन के इन भावों को जब अपने शोध निर्देशक **डॉ. बद्रीप्रसाद जी** के समक्ष रखा तो उन्होनें मेरी भावनाओं को समझते हुए मुझे इसी डॉ. उदयवीर शर्मा का रचनात्मक साहित्य के अन्वेषण हेतु प्रेरित किया। यद्यपि यह मेरे लिए सर्वथा नवीन विषय था पर मन में यह अटूट विश्वास था कि मैं इस क्षेत्र में प्रमाण पुष्ट अध्ययन अनुशीलन कर पाऊँगी। अतः यही मेरे शोध का विषय बना।

प्रस्तुत शोध प्रबंध **सात अध्यायों** में विभक्त हैं **प्रथम अध्याय मे** भाषा की उत्पति, भाषा के विकास का क्रम, भारतीय भाषा परिवार मे राजस्थानी भाषा व उसकी बोलियों पर विचार प्रकट कियें गयें है। भाषा के स्वरूप लिखित व मौखिक रूपों की व्याख्या की गयी है। राजस्थानी भाषा की विशेषताओं का वर्णन किया गया है। राजस्थानी भाषा का स्वरूपगत अध्ययन किया गया है।

द्वितीय अध्याय में डॉ. उदयवीर शर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए उनकी प्रमुख रचनाओं, पारिवारिक पृष्ठ भूमि, शिक्षा तथा साहित्य योगदान पर चर्चा करते हुए उन्हें प्राप्त सम्मान एवं पुरस्कार आदि का विवरण दिया गया हैं। उनकी सृजनात्मकता के विविध आयामों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया हैं।

तृतीय अध्याय में **डॉ. उदयवीर** शर्मा के रचनात्मकता का विभाजन कर पद्य काव्य के वैशिष्टय को बताते हुए इसमें निहित लोक कल्याण की भावना को उद्धृत किया गया है, इनका प्रकृति से जुड़ाव दर्शाया गया हैं।

चतुर्थ अध्याय में **डॉ. उदयवीर** शर्मा के गद्य के रचनात्मक पहलू यथा निबंध, एकांकी, लघुकथा आदि विविध रचनाओं की विषय वस्तु को उद्धृत करने का प्रयास किया है। डॉ. उदयवीर कवि के साथ–साथ एक श्रेष्ठ लेखक भी है यह भी सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।

पंचम अध्याय में **डॉ. उदयवीर** शर्मा गद्य व पद्य की रचनात्मकता का मूल्यांकन विभिन्न पहलुओं के आधार पर किया गया है। डॉ. शर्मा के विविध सामाजिक दृष्टिकोणों को विभिन्न बिन्दुओं के माध्यम से व्यक्त करके मूल्यांकन किया गया है।

षष्ठ अध्याय में **डॉ. उदयवीर शर्मा** के कार्य की उपलब्धि एवं योगदान को उजागर किया गया है। उनकी व्यापक चिंतन शैली, मानवतावादी सोच, सांस्कृतिक मूल्य चेतना, पर्यावरण आदि पर शोध किया गया है।

सप्तम अध्याय उपसंहार में इस शोध निष्कर्ष को प्रस्तुत करने के बाद मेरे द्वारा **डॉ. उदयवीर जी** का लिया गया **साक्षात्कार** भी प्रस्तुत किया गया हैं इस **साक्षात्कार** में **डॉ. उदयवीर जी** के जीवन, समाज, धर्म, राजनीति आदि के काव्यों के बारे में शर्मा जी के विचार प्रस्तुत किये गये हैं।

इस शोध कार्य हेतु सर्वप्रथम मैं अपने महाविद्यालय (**राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा**) के प्राचार्य, हिन्दी विभाग व पुस्तकालय के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती हूँ। मैं हिन्दी विभागाध्यक्ष **डॉ. मुरलिया शर्मा व डॉ. कंचना सक्सेना** के प्रति हृदय से कृतज्ञता प्रकट करती हूँ, जिन्होंने समय–समय पर मुझे शोध सम्बन्धी सुझाव दिये जिनसे मुझे काफी संबल मिला।

मेरे पूज्य गुरूवर **डॉ. बद्रीप्रसाद जी** की शुभकामनाएँ और मार्गदर्शन मेरे शोध कार्य में सहायक रहें उनकी कृपा दृष्टि से ही मेरा यह कार्य सुगम हो पाया हैं। मैं उनका सहृदय से आभार प्रकट करती हूँ। इन्होंने मेरी यथा संभव सहायता की तथा हमेशा उत्साहित एवं अग्रसर रहने हेतु प्रेरित किया। मैं गुरुवर **डॉ. गोरधन सिहं शेखावत** का भी हृदय से आभार व्यक्त करना चाहूगीं जिन्होने मेरे मार्गदर्शन के साथ–साथ शोध सामग्री भी उपलब्ध करायी।

अपने पिता (ससुर) श्री **प्रहलाद चन्द्र लाटा** (से. नि. जिला आयुर्वेद अधिकारी) एवं माता (सास) श्रीमती **शकुन्तला देवी** के आशीर्वाद का ही यह सुफल हैं कि मैं अपना यह शोध प्रबन्ध पूर्ण कर पायी हूँ। मैं अपने पति श्रीमान् सिद्धार्थ लाटा (व्याख्याता, हिन्दी) और अपनी बहन विभा कौशिक (शोधार्थी, केन्द्रीय विश्वविद्यालय) की भी आभारी हूँ, जिनके स्नेहशील उत्साहवर्धन से मैं पीएच. डी. के लिए प्रेरित हुयी। मेरे इस शोध प्रबन्ध में सहायक करने वाले सहपाठियों व मित्रों की आभारी हूँ जिनके सहयोग से ही मैं अपने शोधकार्य को इस रूप में प्रस्तुत कर पायी हूँ। अपनों के प्रति आभार प्रदर्शन के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं।

मैं कन्हैया लाल स्वामी का भी धन्यवाद ज्ञापन करती हूँ, जिन्होंने इस शोध कार्य टंकण और मुद्रण कार्य में सहयोग किया।

अंत में मैं इसे लघु शोध प्रबन्ध को माँ शारदा के कर कमलों में सादर समर्पित करते हुए यह कामना करती हूँ कि मेरा यह शोधकार्य मां शारदा के साहित्य भंडार में यत्किंचित अभिवृद्धि करेगा और उनका आशीर्वाद मेरे भावी शोध कार्य की दिशा को प्रशस्त करने में सहायक सिद्ध होगा। मैं उनके चरणों में नत् मस्तक नमन करती हूँ।

दिनांक ....

प्रियंका शर्मा

पीएच.डी. (हिन्दी) शोधार्थी

पंजीयन क्रमांक–. (RS/1410/13)

राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.)

डॉ. उदयवीर शर्मा का रचनात्मक साहित्य : एक मूल्यांकन

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय – भारतीय भाषा परिवार और राजस्थानी 01–49

(अ) राजस्थानी भाषा का उद्‌भव

(आ) राजस्थानी भाषा की बोलियाँ

भाषा का स्वरूप–

1. मौखिक
2. लिखित

(इ) राजस्थानी भाषा की विशेषताएं

(क) निश्चित भूभाग

(ख) जनसंख्या

(ग) साहित्य सृजन

(घ) शब्द कोष

(ङ) व्याकरण

(च) लिपि

(ई) राजस्थानी बोली का स्वरूपगत अध्ययन

द्वितीय अध्याय – डॉ. उदयवीर शर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व 50–75

(अ) संक्षिप्त जीवनी

(आ) शिक्षा–दीक्षा

(इ) सृजनात्मकता के विविध आयाम : एक परिचय

(क) प्रकृति काव्य

(ख) प्रशस्ति काव्य

(ग) संबोधन काव्य

(घ) मुक्तक काव्य

(ङ) निबंध, एकांकी, लघुकथा, संस्मरण इत्यादि

(च) इतिहास

(छ) समीक्षा ग्रंथ

(ज) संग्रह सम्पादन

तृतीय अध्याय – रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : पद्य 76–123

(क) प्रकृति काव्य

(ख) संबोधन काव्य

(ग) मुक्तक काव्य

(घ) भक्ति काव्य

(ङ) कथा काव्य

(च) विविध

चतुर्थ अध्याय – रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : गद्य 124–153

(क) ललित निबंध

(ख) एकांकी

(ग) लघुकथा

(घ) भावात्मक गद्य

(ङ) विविध

पंचम अध्याय – गद्य–पद्य की रचनात्मकता का मूल्यांकन 154–196

(अ) कथ्यगत चेतना

(आ) प्रकृति और मानव प्रेम का समन्वय

(इ) सांस्कृतिक दृष्टिकोण

(क) इतिहास

(ख) युगबोध

(ई) मानवतावादी दृष्टि

(उ) मानवमूल्यों का समर्थन

(ऊ) परम्परावादी दृष्टि

षष्ठ अध्याय – रचनात्मक कार्य की उपलब्धि एवं योगदान 197–225

(अ) सांस्कृतिक मूल्य चेतना

(आ) जीवन दृष्टि की व्यापकता

(इ) पारम्परिक चितंन शैली

(ई) युगबोध का स्वर

(उ) समरसता की महत्ता

(ऊ) मानवतावादी सोच

(ए) इतिहास और संवेदना से प्रेरणा

(ऐ) पर्यावरण पर सोच

उपसंहार 226–236

शोध संक्षिप्तिकरण –		237–240
सन्दर्भ –		241–245
	(क) आधार ग्रंथ	
	(ख) सन्दर्भ ग्रंथ सूची	
	(ग) पत्र – पत्रिकाएं	
	(घ) शब्दकोष	
सक्षात्कार	**–**	246–256
विद्वानों के विचार	**–**	257–259
शोध प्रस्तुतीकरण	–	260–271
शोध–आलेख	–	272–288
छायाचित्र	**–**	289–291

संक्षिप्ताक्षर

इस शोध–प्रबन्ध में कुछ स्थानों पर संक्षिप्ताक्षरों का प्रयोग किया गया है। जिन्हें निम्न प्रकार समझें।

1. ई.पू. – ईसा पूर्व
2. वि.स. – विक्रम संवत्
3. डॉ. – डॉक्टर
4. पृ. – पृष्ठ
5. अनु. – अनुवाद / अनुवादक /अनुदान
6. मु.ले. – मुख्य लेखक
7. मू.ले. – मूल लेखन / मूल लेखक
8. आ. – आचार्य
9. प्र. सं. – प्रधान सम्पादक
10. पं. – पंडित
11. सं. – सम्पादक / संवत्
12. बी.ए. – बेचलर ऑफ आर्टस् (स्नातक)
13. बी.एड. – बेचलर ऑफ एज्युकेशन (शिक्षा स्नातक)
14. एम.ए. – मास्टर ऑफ आर्टस् (स्नातकोत्तर)
15. पीएच.डी. – डॉक्टर ऑफ फिलॉसाफी (विद्या वाचस्पति)
16. रा.मा.वि. – राजकीय माध्यमिक विद्यालय
17. हा.सै. – हायर सैकण्डरी
18. सी.हा.सै. – सीनियर हायर सैकण्डरी
19. स्व. – स्वर्गीय
20. प्र.अ. – प्रधान अध्यापक (प्रधानाध्यापक) / प्रथम अध्याय
21. ठा. – ठाकुर
22. रा.सा.अ. – राजस्थान साहित्य अकादमी
23. पू. – पूज्य

प्रथम–अध्याय

भारतीय भाषा परिवार और राजस्थानी 01–49

(अ) राजस्थानी भाषा का उद्‌भव

(आ) राजस्थानी भाषा की बोलियाँ

भाषा का स्वरूप

1. मौखिक
2. लिखित

(इ) राजस्थानी भाषा की विशेषताएं

(क) निश्चित भू–भाग

(ख) जनसंख्या

(ग) साहित्य सृजन

(घ) शब्द कोष

(ङ) व्याकरण

(च) लिपि

(ई) राजस्थानी बोली का स्वरूपगत अध्ययन

प्रथम–अध्याय

भारतीय भाषा परिवार और राजस्थानी

(अ) राजस्थानी भाषा का उद्‌भव –

माँ भारती व शेखावाटी (राजस्थान) के विद्‌वद सपूत डॉ. उदयवीर शर्मा ने हिन्दी व राजस्थानी दोनो भाषाओं मे समान रूप से रचना की है। आपने गद्य व पद्य साहित्य की प्रत्येक विधा मे अपनी लेखनी को साकार बनाया है। डॉ. उदयवीर ने हिन्दी के अतिरिक्त राजस्थानी को अपनी भाषा के रूप में महत्त्व दिया है। राजस्थानी का अपना अलग महत्त्व है, और यह अपनी विशेषताओं के कारण सभी को एकता के सूत्र में बांध कर अपने भावाभिव्यक्ति प्रदान करती है, इसलिए यहाँ राजस्थानी भाषा का विशद् विश्लेषण किया गया है।

संस्कृत समस्त भारतीय भाषाओं की जननी है और संस्कृत से ही पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तथा आधुनिक भारतीय भाषाओं का जन्म हुआ। कुछ विद्वानों ने भारतीय आर्य भाषा कुल और विभिन्न भाषाओं का परिचय भी प्रस्तुत किया है। डॉ. हीरालाल माहेश्वरी ने राजस्थानी भाषा को भारतीय आर्य कुल की ही एक समृद्ध और संपन्न भाषा माना है। उनके अनुसार ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय आर्य भाषाओं को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।[1]

डॉ. सीताराम लालस के मतानुसार भारतीय भाषाओं का विधिवत् इतिहास प्रमाणिक रूप से उपलब्ध नहीं है, तथापि उसकी साधारण रूपरेखा ऋग्वेद से आज तक उपलब्ध है। भारत के भाषा–परिवारों पर विचार करते समय आर्य परिवार और अनार्य (द्रविड) परिवार की और हमारा ध्यान सर्वप्रथम जाता है।

उत्तर भारत में आर्य भाषाएं और दक्षिण भारत में द्रविड परिवार की भाषाएं। कुछ विद्वानों ने अनार्य भाषाओं को छोड़कर सभी परिष्कृत भाषाओं का उद्‌गम वैदिक भाषा से माना है। श्री किशोरसिंह बार्हस्पत्य ने अपने एक शोधपत्र में इस संबंध में एक चित्र प्रकाशित करके एक भाषा का दूसरी भाषा से संबंध माना है। इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है जो निम्नानुसार है[2] –

---

1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल (ई. पू. 1500 से 500 ई. पू. तक) ऋग्वेद से इस काल की भाषा का कुछ पता चलता है। यद्यपि उसकी भाषा सहित्यिक है, बोलचाल की नहीं। मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा (500 ई. पू.) तक।

2. श्री किशोरसिंह बार्हस्पत्य का झालरापाटन से प्रकाशित 'सौरभ' अक्टूबर 1920 का एक लेख ।

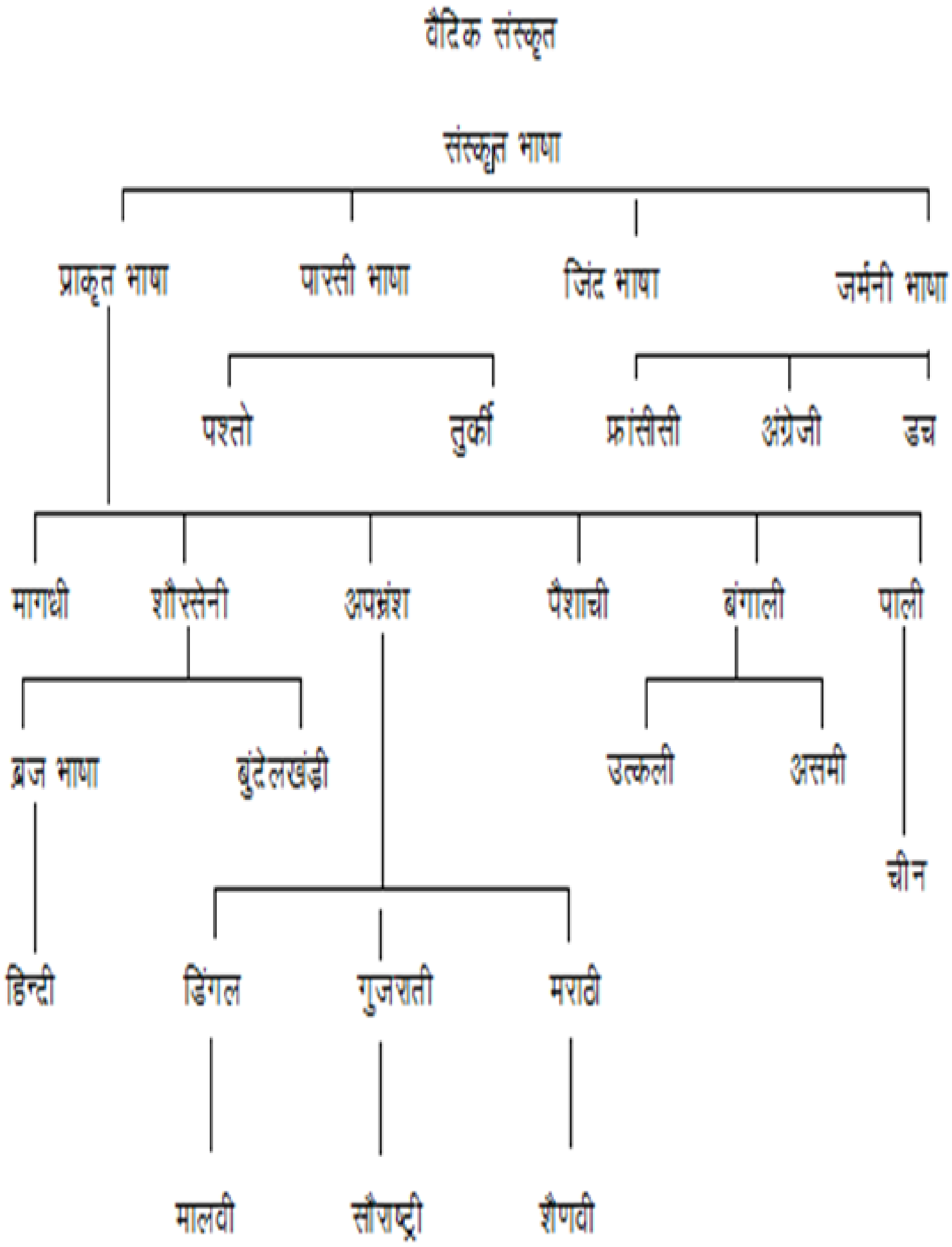
वैदिक संस्कृत
संस्कृत भाषा
प्राकृत भाषा
पारसी भाषा
जिंद भाषा
जर्मनी भाषा
पश्तो
तुर्की
फ्रांसीसी
अंग्रेजी
डच
मागधी
शौरसेनी
अपभ्रंश
पैशाची
बंगाली
पाली
ब्रज भाषा
बुंदेलखंडी
उत्कली
असमी
चीन
हिन्दी
डिंगल
गुजराती
मराठी
मालवी
सौराष्ट्री
शैणवी

डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा ने अपनी पुस्तक भाषा विज्ञान की भूमिका में यह स्वीकार किया है कि संसार मे अनेक भाषाए बोली जाती है, इन्ही भाषा के अधार पर विश्व के भाषा परिवारों की संख्या अनिश्चित है। इन भाषा परिवारों में से 12 से लेकर 100 तक भाषा परिवार अपेक्षाकृत निर्विवाद एवं प्रमुख माने गये है। जिसके अन्तर्गत उन्होंने निम्नलिखित 18 भाषा परिवारों का उल्लेख किया है–

विश्व के भाषा परिवार

1. भारत यूरोपीय परिवार
2. द्रविड़ परिवार
3. बुरूशस्की परिवार
4. उराल अल्ताई परिवार
5. काकैशी परिवार
6. चीनी परिवार
7. जापानी–कारियाई परिवार
8. अन्युत्तरी (हाइपरबोरी परिवार)
9. वास्क परिवार
10. समीहामी परिवार

भौगोलिक दृष्टि से उपर्युक्त 1 से 10 तक की (यूरेशिया) भाषाएं यूरोप और एशिया से संबंधित हैं।

11. सूडानी परिवार
12. बन्तू परिवार
13. होतेन्तोत–बुषमैनी परिवार

क्रम संख्या 10 से 13 अफ्रीका से संबंधित किन्तु 10 संख्यक भाषा उभयनिष्ठ होकर एशिया और अफ्रीका से जुड़ी हुई है।

14. मलय बहुद्वीपीय परिवार
15. पापुई परिवार
16. आस्ट्रेलियाई परिवार
17. दक्षिण पूर्व एशियाई परिवार

क्रम संख्या 14 से 17 तक के भाषा परिवार प्रशान्त महासागर के द्वीप पुंज से जुड़े हुए है।

18. अमेरिकी परिवार (अमेरिका)

हिन्दी भारत–यूरोपीय भाषा परिवार की भाषा है। इसी प्रकार कुछ अन्य विद्वानों ने भारोपीय भाषाओं के मूल भाषा के रूप में 'पूर्णप्राख' नामक नयी भाषा की कल्पना की है। कुछ विद्वान इस 'पूर्णप्राख' को ही अपभ्रंश के रूप मे स्वीकार करते है। भारतीय भाषाओं के विद्वान् डॉ. सुनीतिकुमार चटुर्ज्या ने अपनी पुस्तक[3] में आर्यभाषाओं का एक वर्गीकरण प्रस्तुत किया है।

मानव उत्पति से लगाकर आजतक यह शोध का विषय बना हुआ है कि मानव ने कब बोलना आरम्भ किया, भाषा की उत्पति किस प्रकार हुई, उसने कब लिखने की कला सीखी, इस सम्बध में कुछ भी निश्चित रूप से कहना दुष्कर कार्य है। भाषा के विकास के सम्बध में केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है। यह तो तय है कि भाषा का विकास एक निश्चित क्रम से ही हुआ है।

भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार भाषाओं का उद्गम स्त्रोत कठिनता से सरलता की ओर रहा है। सभी भाषाओं के दो स्वरूप परिलक्षित होते हैं। एक लौकिक स्वरूप, दूसरा आभिजात्य स्वरूप। लौकिक आमजन के व्यवहार का रूप होता है, जबकी अभिजात्य स्वरूप मे साहित्य रचना होती रही है।

संस्कृत भी लौकिक व वैदिक संस्कृत के रूप में प्रसिद्ध रही है। सभी भाषाएं प्रारंभ में लौकिक काव्य के रूप में प्रकट होती हैं, और धीरे–धीरे उनका व्याकरण समस्त अभिजात्य स्वरूप प्रकट होने लगता है। आर्य परिवार की आधुनिक भाषाएं मूल रूप सें संस्कृत ही विकसित हुई है। इसलिए इनके शब्द और व्याकरण में लगभग समानता दिखाई देती है। लोक की प्रवृत्ति भाषा के सरल स्वरूप की ओर होती है। अतः जब भी व्याकरण सम्मत क्लिष्ट भाषा का अधिक प्रचलन होने लगता है तब सरल लौकिक भाषा के रूप में जनभाषाओं का विकास होने लगता है।

भाषा का जो वर्तमान स्वरूप आज हमें प्राप्त हो रहा है उसे इस आधुनिक रूप प्राप्त करने के लिए कई पड़ाओं से गुजरना पड़ा है। भाषाओं के वंशवृक्ष से राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति और उसका विकास कुछ स्पष्ट होता है। भारतीय भाषाओं के विकास का एक निश्चित क्रम माना गया हे, जिसको विकास के वंश वृक्ष से समझा जा सकता है। जो निम्न प्रकार है –

——————

3. The Origin and Development of the Bengali Language Part I, by S K Chattergee, Page 6

भाषा विकास वृक्ष

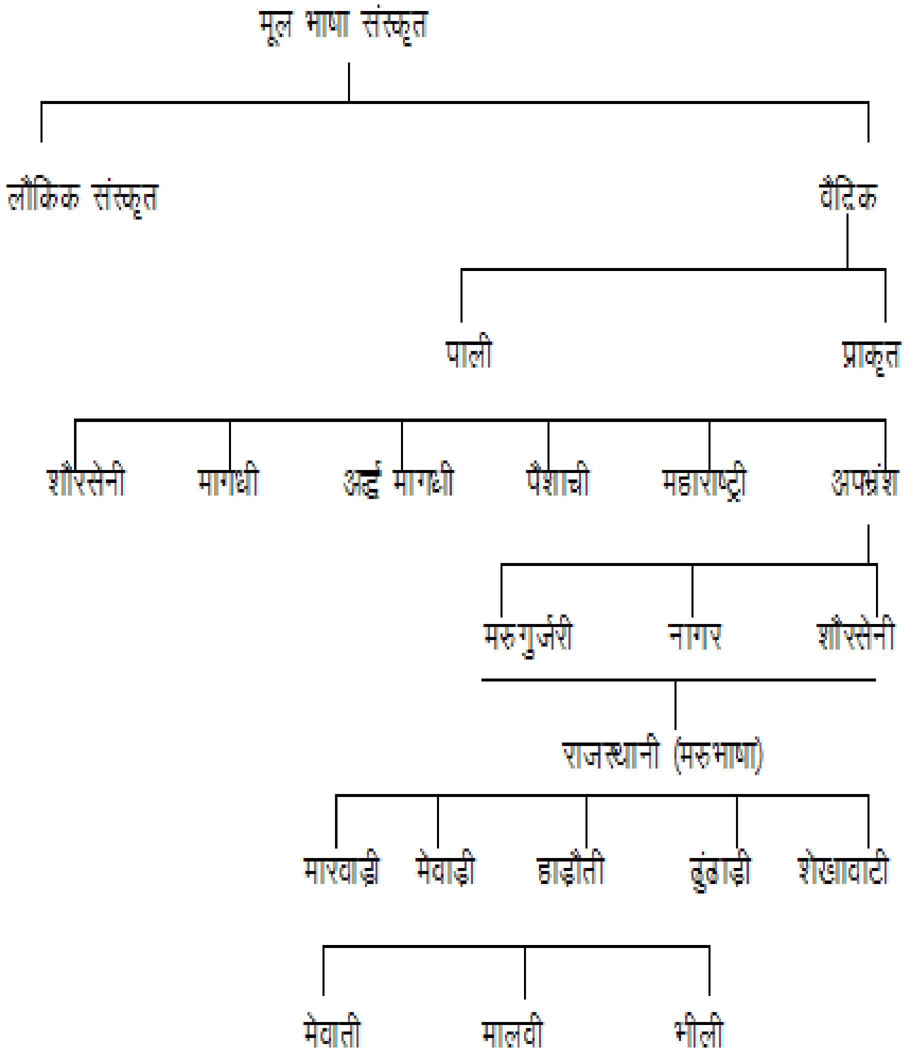
मूल भाषा संस्कृत
लौकिक संस्कृत
वैदिक
पाली
प्राकृत
शौरसेनी
मागधी
अर्द्ध मागधी
पैशाची
महाराष्ट्री
अपभ्रंश
मरुगुर्जरी
नागर
शौरसेनी
राजस्थानी (मरुभाषा)
मारवाड़ी
मेवाड़ी
हाड़ौती
ढूंढाड़ी
शेखावाटी
मेवाती
मालवी
भीली

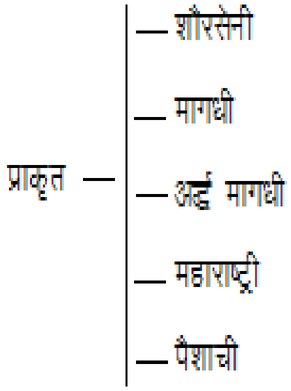
प्राकृत
शौरसेनी
मागधी
अर्द्ध मागधी
महाराष्ट्री
पैशाची

भारतीय आर्य भाषा परिवार

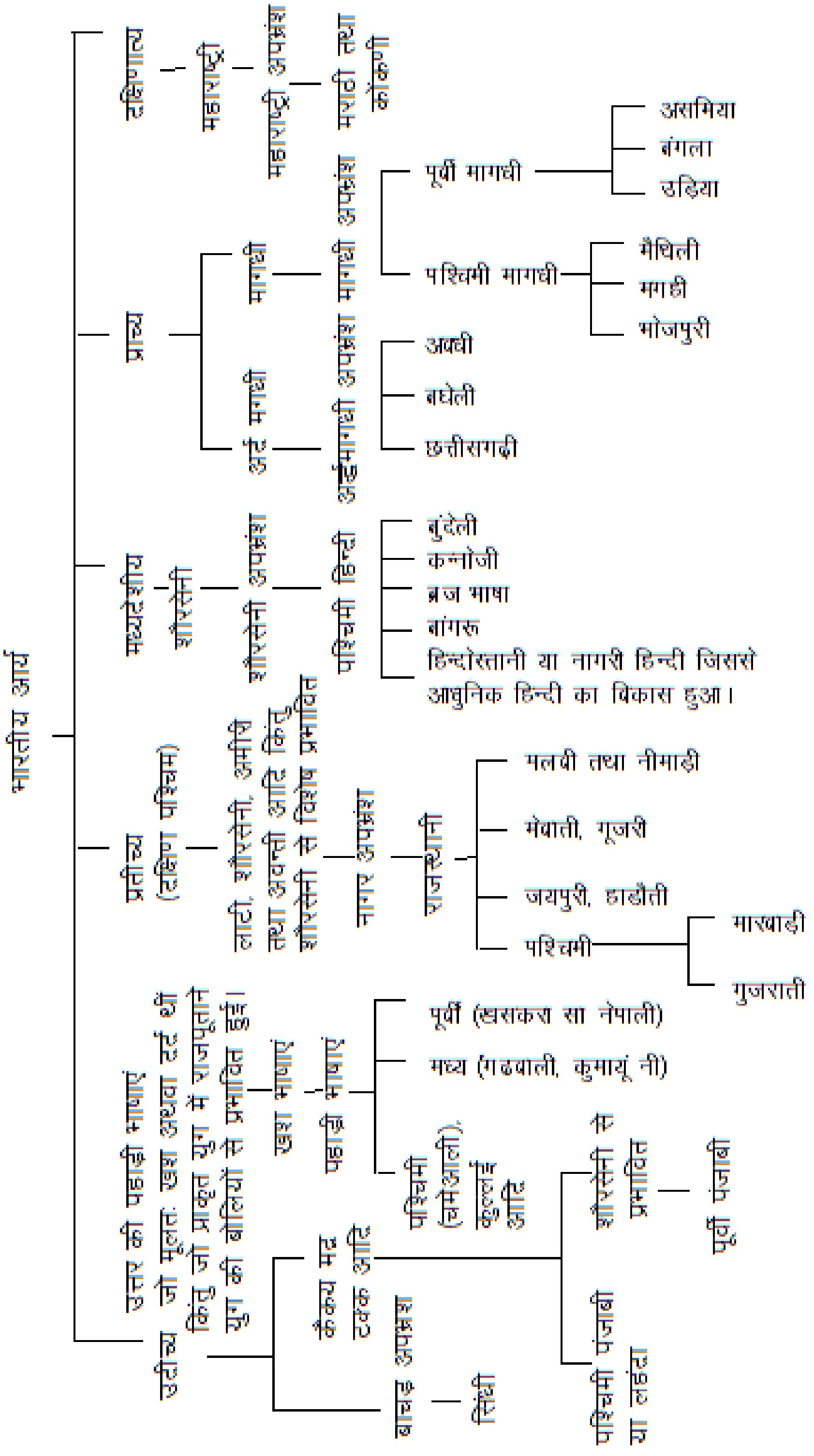

प्राचीन समय मे राजस्थानी के विभिन्न नाम प्रचलित रहे हैं यथा मरुभाषा, मरुवाणी, डिंगल, मरुदेशीय भाषा, मारवाड़ी आदि। जैनयति उद्योतनसूरि द्वारा रचित **'कुवळयमाला'** नामक प्रसिद्व ग्रंथ में जिन अठारह भाषाओं का उल्लेख किया गया है, उनमें मरुभाषा के रूप में राजस्थानी का नामोल्लेख है।[4] इसका रचनाकाल वि. सं. 835 दिया है और रचनास्थल जालोर बताया गया है।

इसका अभिप्राय यह है कि विक्रम की 9वीं सदी से राजस्थानी का यह मरुभाषायी स्वरूप लोक प्रचलित हो गया था। किसी भाषा को लोक प्रचलित होने में कम से कम 50 वर्षों का समय लगता है। अतः राजस्थानी भाषा के उद्भव का समय यदि 8वीं शताब्दी मान लें तो असंगत न होगा।

भाषा वैज्ञानिकों ने अपभ्रंश भाषाओं का अंतिम समय 1000 वि. सं. माना है। अपभ्रंश से ही आधुनिक भारतीय भाषाओं का जन्म हुआ है, जिनमें राजस्थानी भाषा भी एक है। इसका अभिप्राय यह है कि लगभग 200 वर्षों तक अपभ्रंश और मरुभाषा का जो मिलाजुला स्वरूप हमें प्राप्त होता है, वह अपभ्रंश प्रधान है, और 1200 विक्रमी सं. के बाद अपभ्रंश पर मरुभाषा का प्रभाव अधिक बढ़ने लगा।

अपभ्रंश से भारतीय भाषाओं की उत्पति मानी गई है, लेकिन निश्चित रूप से यह कहना कि किस प्रकार अपभ्रंश से मरुभाषा अथवा राजस्थानी की उत्पत्ति हुई बहुत कठिन है। इस संबंध में भाषा विज्ञान के विद्वानों ने अपने अपने मत प्रकट किये जिनमे अनेक मतभेद है।

इस संबंध में मुख्य तीन दृष्टिकोण अधिक चर्चित हुए हैं – **प्रथम** राजस्थानी की उत्पति शौरसेनी अपभ्रंश से, **द्वितीय** मरुगुर्जरी अपभ्रंश से और **तृतीय** नागर अपभ्रंश से। कुछ भाषा वैज्ञानिक विद्वान राजस्थानी का उद्गम शौरसेनी अपभ्रंश से मानते हैं, जिनमें डॉ. उदयनारायण तिवारी, डॉ. नामवरसिंह तथा विदेशी विद्वान रिचर्ड्स प्रमुख है।[5]

---

4. कुवळयमाला –(पृ. 87) 'अप्पा तुप्पा' भणिरे अह पेच्छइ मारुऐ तत्तो 'नउरे भल्लउं' भणिरे अह पेच्छद गुज्जरे अवरे 'अम्हं काउं तुम्हें' काउं तुम्हं' भणिरे अह पेच्दइ लाडे 'भाइ य भइणी तुब्भे' भणि रे अह मालवे दिट्ठे।

5. (क) प्राकृत भाषाओं का व्याकरण –रिचर्ड पिशेल, अनु. डॉ. हेमचंद जोशी, पृ. 6–7,पैरा 5

(ख) पुरानी राजस्थानी (मू. ले. एल. पी. नैस्सीतोरी), अनु. डॉ. नारायणसिंह, अध्याय 1, भूमिका पृ. 1

(ग) हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास – डॉ. उदयनारायण तिवारी, पृ. 178

डॉ. मोतीलाल मेनारिया की मान्यता है कि मध्य एशिया को छोड़कर जिस समय हमारे पूर्व पूर्वज प्राचीन आर्य पंजाब में आकर बसे थे और उस समय जो भाषा बोलते थे उसके एक रूप से वैदिक संस्कृत की भी उत्पत्ति हुई। इस वैदिक संस्कृत का ही परिवर्तित साहित्यिक रूप संस्कृत कहलाया और जन साधारण की बोलचाल की भाषाएं प्राकृत के नाम से प्रसिद्ध हुई। काल क्रमानुसार इन प्राकृतों को विद्वानो ने दो भागों में विभक्त किया है –

(अ) पहली प्राकृतें।

(ब) दूसरी प्राकृतें।

पहली प्राकृतों का प्रतिनिधित्व पालि और अर्द्ध मागधी करती हैं जिनमें बौद्धों और जैनों के ग्रन्थ लिखे गये थे। दूसरी प्राकृतों में शौरसेनी, मागधी और महाराष्ट्री मुख्य थीं। धीरे–धीरे इन प्राकृतों का भी साहित्यिक संस्कार होने लगा और ये सभी क्लासिक भाषाएं बन गईं।

जनसाधारण की भाषा का जो प्रवाह इनके साथ–साथ अबाध रूप से चल रहा था वह उत्तरोत्तर बढ़ता गया और कालान्तर में नवीन भाषा के रूप में आविर्भूत होकर अपभ्रंश नाम से प्रसिद्ध हुआ। अपभ्रंश के कई भेद–उपभेदों का पता चलता है। **'प्राकृत चंद्रिका'** में इसके सत्ताईस भेद गिनाये गये है।

किंतु डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने शौरसेनी, अपभ्रंश से राजस्थानी के उद्‌गम के प्रति संदेह प्रकट किया है।[6] राजस्थानी की उत्पति के सम्बध में अनेक मत प्रचलित है, उनमें विदेशी विद्वान डॉ. ग्रियर्सन ने राजस्थानी की उत्पत्ति नागर अपभ्रंश एंव पश्चिमी हिन्दी से मानी है।[7]

डॉ. उदयनारायण तिवारी ने **"हिन्दी भाषा का उद्‌भव एवं विकास**" पुस्तक में **डॉ. ग्रियर्सन** के मतानुसार ही राजस्थानी की उत्पत्ति को स्वीकार किया है। नागर अपभ्रंश के संबंध में अपने अपने मत रहे है, नागर अपभ्रश का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करते हुए डॉ. धीरेन्द्र वर्मा कहते हैं, कि "नागर अपभ्रंश गुजरात के उस भाग में बोली जाती है, जहां आजकल नागर ब्राह्मण रहते हैं।" नागर ब्राह्मणों के क्षेत्र को ही नागर क्षेत्र कहा गया है। नागर ब्राह्मण विद्वता व विद्यानुराग के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। कदाचित् नागर ब्राह्मणों के नाम से ही इसका नागरी अपभ्रंश का नाम पड़ा और इन्ही के कारण इसे नागर अपभ्रंश कहा जाने लगा।

——————————

6. हिन्दी भाषा का इतिहास – डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, भूमिका, पृ. 49 व 50 पर दी गई फुटनोट की टिप्पणी।

7. लिग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, वोल्युम IX Part II

डॉ. मोतीलाल मेनारिया ने प्राकृतों का ही परिवर्तित रूप अपभ्रंश माना है और अपभ्रंश को आधुनिक आर्यभाषाओं के रूप में स्वीकार किया है। डॉ. मेनारिया के अनुसार अपभ्रंश के 27 रूपों में से शौरसेनी अपभ्रंश का प्रचार क्षेत्र अत्यंत व्यापक रहा है। उसी से ही पश्चिमी अपभ्रंश और पूर्वी अपभ्रंश इन दो रूपों में राजस्थानी का विकास माना है।[8] आपके अनुसार कोई ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अपभ्रंश से पृथक होकर इसने स्वतंत्र भाषा के रूप में विकसित होना प्रारंभ किया होगा।[9]

डॉ. हीरालाल माहेश्वरी के अनुसार भी अब तक अपभ्रंश का जो साहित्य प्राप्त हुआ है उसका बहुलांश पश्चिमी अपभ्रंश एक प्रकार से गुर्जर अपभ्रंश ही है। इस गुर्जर अपभ्रंश से राजस्थानी का विकास हुआ। शौरसेनी अपभ्रंश पश्चिमी हिन्दी की विभिन्न बोलियों का मूलाधार रही है।[10]

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने शौरसेनी अपभ्रंश को ही राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति का आधार स्वीकार किया हैं।

अब यह प्रश्न उठता है कि विक्रम की 9 वीं शताब्दी से लेकर अर्थात् लगभग 1200 वर्षों का विशाल और समृद्ध जो राजस्थानी साहित्य प्राप्त होता है, उसकी प्रमुख विशेषताएं क्या हैं तथा उस भाषा का काल विभाजन किन आधारों पर किया जाय ?

(आ) राजस्थानी भाषा की बोलियां –

भाषा, विभाषा, बोली, उपबोली – भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा को चार बिन्दुओं में विभाजित किया है – बोली, उपबोली, विभाषा और भाषा। इनके प्रारंभिक स्वरूप को 'बोली' माना है। उसे 'बोली' और 'उपबोली' के वर्गों में विभाजित किया है।

'बोली' से अभिप्राय भाषा के उस प्रारंभिक स्तर से है जिसका मौखिक स्वरूप एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्तियों तक सीमित होता है। वह 'बोली' बोले जाने में ही अधिक प्रयुक्त होती है। बोली भाषा का प्रारभिंक स्वरूप होता है। यह प्रायः मौखिक रूप में ही पाई जाती है। बोली का क्षेत्र सीमित होता है। जैसे–जैसे बोली का क्षेत्र बढ़ता है, तो वही बोली भाषा का रूप धारण कर लेती है।

---

8. डॉ. मोतीलाल मेनारिया – राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ. 4
9. डॉ. मोतीलाल मेनारिया – राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ. 4
10. डॉ. हीरालाल माहेश्वरी – सांस्कृतिक राजस्थानी पृ. 2

भाषा परिवार

भाषा का विकास क्रम

प्रथम अवस्था – { मूल भाषा } (मूलस्थान और उसकी भाषा)

|

द्वितीय अवस्था – { विभाषा }

|

तृतीय अवस्था – { बोली (उपभाषा) }

|

चतुर्थ अवस्था – { उप बोली }

डॉ. भोलानाथ तिवारी उपभाषा की परिभाषा लिखते हुए कहते हैं – "बोली या उपभाषा उस सीमित क्षेत्र की भाषा को कहा जाता है, जिसके बोलने वालों का उच्चारण लगभग एक जैसा हो तथा जिसमें रूप, वाक्य रचना, शब्द समूह तथा अर्थ सम्बन्धी कोई स्पष्ट और महत्त्वपूर्ण भिन्नता न हो।"[11]

आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा भौगोलिक क्षेत्रों के आधार पर ही भाषा, उपभाषा का अन्तर स्पष्ट करते हैं – "भाषा और विभाषा का अन्तर बहु व्यापकता और अल्प व्यापकता का है जिसके मूल में भौगोलिक सीमा काम करती है। अंग्रेजी में विभाषा को 'डायलेक्ट' कहते है।"[12]

"भाषा और बोली में कोई तात्विक अन्तर नहीं है, बोली ही अनुकूल परिस्थितियां पाकर भाषा बन जाती है।"[13] भाषा विज्ञान का यह भी नियम है कि बोली का विकसित स्वरूप ही भाषा है। इसलिए भाषा के अविकसित रूप को बोली तथा विकसित रूप को भाषा कहा जाता है।

भाषा को व्याकरण की कसौटी पर भी कसा जाता है। बोली का मौखिक स्वरूप होने के कारण उसका व्यवहारिक स्वरूप नहीं होता इसलिए उसे व्याकरण के नियमों में बांधकर नहीं परखा जा सकता। विश्व की जो भाषा जितनी ज्यादा समृद्ध होगी उसकी बोलियां, उपबोलियां अधिक होगी।

---

11. भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, पृ. 37

12. आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, भाषा विज्ञान की भूमिका, पृ. 58

13. आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, भाषा विज्ञान की भूमिका, पृ. 70

जिस प्रकार हिन्दी भाषा की अवधी, मैथिली, ब्रज, खड़ी बोली आदि प्रमुख बोलियां हैं। उसी प्रकार राजस्थानी भाषा की भी कई बोलियां हैं और उन बोलियों की भी उपबोलियां हैं जिन्हें स्पष्ट रूप से निम्न मानचित्र के माध्यम से देखा जा सकता है–

राजस्थानी भाषा की प्रमुख बोलियां और उनके क्षेत्र

मरु भाषा (मरुदेशीय भाषा, डिंगल)

(राजस्थानी बोलियां)

क्र.स.	**बोली**	**क्षेत्र**
1.	**मारवाड़ी**	(प्राचीन मारवाड़, जैसलमेर, बीकानेर रियासतों का भूभाग) जोधपुर, बीकानेर, मेड़ता, नागौर, जैसलमेर, बाड़मेंर का भौगोलिक क्षेत्र
2.	**मेवाड़ी**	(मेवाड़ रियासत) आधुनिक उदयपुर, भीलवाड़ा, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, चित्तौड़ का भूभाग
3.	**ढूंढाड़ी**	(प्राचीन जयपुर रियासत ढूंढ़ाड़ जनपद) आधुनिक जयपुर, अजमेर, टौंक, बांदीकुई, रींगस फुलेरा
4.	**हाडौती**	(प्राचीन कोटा, बून्दी, झालावाड़ रियासत, हाडौती जनपद का भूभाग) आधुनिक कोटा, बूंदी झालावाड़ जिलों का भौगोलिक क्षेत्र
5.	**शेखावाटी**	(प्राचीन शेखावाटी जनपद का भौगोलिक क्षेत्र) आधुनिक सीकर, झुंझनू, चूरू जिलों का भूभाग
6.	**मेवाती**	भील, गरासिया और मीणों जैसी आदिवासी जातियों द्वारा बोली जाने वाली बोलियां, पहाड़ी क्षेत्र, अरावली हिमाचल तथा जम्मू और कश्मीर का कुछ पहाड़ी क्षेत्र
7.	**मालवी**	(प्राचीन मालवा जनपद आधुनिक मध्यप्रदेश राज्य के रतलाम, झागुवा, सीतामऊ का भौगोलिक क्षेत्र)
8.	**पहाड़ी**	भील, गिरासिया और मीणों जैसी आदिवासी जातियों द्वारा बोली जाने वाली बोलियां, पहाड़ी क्षेत्र, अरावली हिमाचल तथा जम्मू और कश्मीर का कुछ पहाड़ी क्षेत्र

राजस्थानी बोलियों की प्रमुख उप बोलियां

क्र.स.	मारवाड़ी	मेवाड़ी	ढूढाड़ी	मेवाती	माळवी
1.	गोडवाड़ी (1)जाळोरी (2)देवड़ावाटीजोधपुरी	बागड़ी (1)डूंगरपुर (2)बांसवाडी	तौरावाटी	अहीरवाटी (1) अलवरी (2) भरतपुरी (3)गुड़गांवक्षेत्रीय	नीमाड़ी
2.	जोधपुरी	भीली	जयपुरी	मेवाती	रांगड़ी
3.	जैसलमेरी(थळी))		काठैड़ी		
4.	बाड़मेरी(थळी)		राजावाटी		
5.	बीकानेरी		शाहपुरी		
6.			अजमेरी		
7.			किशनगढी		

डिंगल तथा पिंगल–

राजस्थानी भाषा के दो रूप दिखाई देते है, डिंगल और पिंगल। प्राचीन समय से ही राजस्थानी भाषा के नाम के साथ डिंगल शब्द जुड़ा हुआ रहा है। कुछ विद्वान डिंगल को राजस्थानी का प्राचीन स्वरूप मान उसे भाषा के रूप में स्वीकार करते हैं। कुछ विद्वान इन्हे भाषा के रूप मे स्वीकारते है, तो कुछ विद्वानों की दृष्टि से डिंगल और पिंगल दो काव्य शैलियां हैं। वास्तव में इन्हे काव्य शैली के रूप मे ही स्वीकारा गया है। इन दोनों ही काव्य शैलियों का प्रचलन आदिकाल से लेकर उत्तरमध्यकाल तक राजस्थानी काव्य में स्पष्ट दिखाई देता है।

साहित्यिक दृष्टि से देखे तो डिंगल पश्चिमी राजस्थानी का साहित्यिक रूप है। इसका अधिकांश साहित्य चारण कवियों द्वारा लिखित है, जबकि पिंगल पूर्वी राजस्थानी का साहित्यिक रूप है, और इसका अधिकांश साहित्य भाट जाति के कवियों द्वारा लिखित है। न्याय संगत यही दृष्टिगत होता है कि डिंगल काव्य शैली ही है, क्योंकि प्राचीन राजस्थानी काव्य में ही इस शैली के उदाहरण उपलब्ध होते हैं। डिंगल को काव्य शैली मानने वाले विद्वानों के अनुसार डिंगल में राजस्थानी शब्दों का बाहुल्य होता है, और वह मुख्य रूप से पूर्वी राजस्थान के चारणों द्वारा रचित होने के कारण काव्य की चारण शैली भी कहलाती है।

राजस्थानी में विशिष्ट प्रकार के छंदों व अलंकारों का प्रयोग होता है। अलंकारों में 'वैणसगाई' मुख्य माना जाता है और छंदों मे दूहा, धमाळ, सुपंखरो त्रिबंकड़ो, नीसांणी, झूलणा, कवित्त, झड़लुपत, ईलोल, साथक अडल, सेवार, सवैयो, छोटो साणोर, जांगडौ साणोर, खुड़द साणोर, पंखालो, सिंहचलो, लहचाल, अरटियो, झड़मुगट, हंसावली, पाड्गत, सतखणों, दीपक, चोटियो, चित्तविलास, शुद्ध नीसाणी, गखत नीसाणी, नीसाणी गघ्घार मारू, नीसाणी झींगर, नीसाणी वार, वीरकंठ, बड़ो साणोर, शुद्ध सैणौट आदि प्रमुख है। इन सभी मे वैण सगाई का विशिष्ट महत्त्व रहा है।

कुछ विद्वान डिंगल को चारणों की एक अलग भाषा के रूप में डिंगल स्वीकार करते है। डिंगल काव्य शैली में काव्य पाठ करने का अभ्यास चारण जाति में पीढ़ी–दर–पीढ़ी करवाया जाता था इसलिए इसमें आशुकवियों की भी एक विस्तृत श्रृंखला दिखाई देती है।

डिंगल शैली में तुकबंदी को अधिक महत्त्व दिया जाता है और शब्द चमत्कार के द्वारा काव्य को कर्णप्रिय बनाने का प्रयास किया जाता है। इसीलिए आलोचकों का यह मत विचारणीय है कि डिंगल काव्य अलंकारों से बोझिल है। तुकबंदी और शब्द चमत्कार उसका काव्यत्व नष्ट कर देते हैं। डिंगल काव्य के संबंध मे निम्नलिखित विद्वानों के विचार दृष्टव्य हैं –

डॉ. एल. पी. टैसीटरी की धारणा थी कि **डिंगल** शब्द का असली अर्थ अनियमित तथा गंवारू है। ब्रजभाषा परिमार्जित थी और साहित्य शास्त्र के नियमों का अनुसरण करती थी, पर डिंगल इस संबंध में स्वतंत्र थी इसलिए इसका यह नाम पड़ा।'[14] डॉ. हरिप्रसाद शास्त्री के अनुसार जिसे आज डिंगल के नाम से जाना जाता है, 'प्रारम्भ में इस भाषा का नाम 'डगल' था, पर बाद में पिंगल शब्द के साथ तुक मिलाने के लिए डिंगल कर दिया गया।'[15]

इस संबंध में **डॉ. मोतीलाल मेनारिया** की मान्यता है कि प्रारम्भ से डिंगल एक तरह से चारणों, भाटों की भाषा थी और ये लोग अपनी काव्य रचनाएं बहुधा इसी भाषा में किया करते थे। कालान्तर में यही भाषा काव्य भाषा बन कर उभरी और सभी इन्ही भाषाओं मे काव्य रचना करने लगे। यह भाषा काव्य के अनावश्यक बोझ को कम करके सरलता का समर्थन किया गया है।

——————

14. Dr. Tessitory-Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. X No. 10 Page 376
15. हरिप्रसाद शास्त्री : प्रिसिमिनरी रिपोर्ट आन दी ऑपरेशन इन दी सर्च ऑफ एम. एस. एस. ऑफ बार्डिक क्रानिकल, पृ. 15

चारण भाट राज दरबार मे रहकर अपने आश्रयदाताओं के लिए साहित्य रचना किया करते थे। अपने आश्रयदाताओं के कार्यकलापों का, उनके शौर्य–पराक्रम का, ये लोग बहुत बढ़ा चढ़ा कर वर्णन किया करते थे। धन के लोभ से कायर को शूर, कुरूप को सुन्दर, मूर्ख को पंडित और कृपण को दानी कह देना इसके लिए एक साधारण बात थी।[16] इसके अतिरिक्त और भी कई विद्वानों ने 'डिंगल' की उत्पत्ति और विकास को भाषा का ही विकास माना है। परंतु कुछ विद्वानों का मत ठीक इसके विपरीत है। कुछ विद्वान डिंगल को स्वतन्त्र भाषा के रूप मे तथा कुछ ने डिंगल को भाषा की एक शैली ही स्वीकार किया है।

वास्तव में डिंगल को भाषा नहीं माना जा सकता, यह पिंगल के समानान्तर काव्य की एक शैली ही है। **डॉ. उदयसिंह भटनागर** के विचार इस विचारधारा को संपुष्ट कर देते है – 'एक स्वतंत्र भाषा के लिए यह आवश्यक है कि उसके रूपों का बोलचाल में प्रयोग होना चाहिए। इस दृष्टि से देखे तो डिंगल में कोई स्वतंत्र रूप योजना अथवा काव्य विन्यास नहीं दिखाई पड़ता। उसकी रूप योजना और वाक्य विन्यास का आधार राजस्थानी बोलियों में रहा है।

डिंगल इन बोलियों से स्वतंत्र नहीं है और न कोई स्वतंत्र बोली है। इसका संबंध सदा चारण, भाट राव, ढाढी, मोतीसर आदि जातियों से ही रहा है जिनका उल्लेख **डॉ. हरिप्रसाद शास्त्री ने और डॉ. मेनारिया** ने अपने ग्रंथ में किया है। ये जातियां सारे राजस्थान के राज परिवारों से संबंध रखती आई हैं। इनका कार्य विरुद और गाथाएं रचना और गाना है। इन्ही के गीतो और इनकी भाषा के नाम से प्रसिद्ध हुई। राज दरबार से संबंधित और प्रभावित अन्य लोगों ने भी इस शैली में रचना की है, अस्तु प्रधान रूप से डिंगल का संबंध इन्हीं जातियों से था।[17] **डॉ. गोवर्धन शर्मा** इसकी पुष्टि में लिखते हैं 'डिंगल भाषा नहीं शैली मात्र है।'[18]

पिंगल– मध्यकालीन राजस्थानी काव्य–भाषा में पिंगल काव्य शैली के रूप में प्रचलित रही है। पिंगल का काव्य भाषा के रूप में मुख्यतया भक्ति काव्य के रूप में अधिक प्रचलित हुआ इसलिए कुछ विद्वानों ने पिंगल की परिभाषा करते हुए कहा है कि पिंगल भाषा का ऐसा काव्य रूप है जिसमें ब्रजभाषा की प्रधानता है। इस भाषा रूप मे स्वभाविक सरसता होती है।

——————

16. मोतीलाल मेनारिया, डिंगल में वीर रस, पृ. 7
17. उदयसिंह भटनागर, डिंगल भाषा, हिन्दी अनुशीलन, नं. 8, अंक 3, पृ. 95
18. डॉ. गोवर्द्धन शर्मा, डिंगल साहित्य, पृ. 128

डिंगल की तरह ही पिंगल भी विशिष्ट काव्य शैली के रूप में प्रसिद्ध हुई। यह राजस्थान व ब्रज क्षेत्र में विकसित हुआ जिसमें राजस्थानी शब्दों का प्रयोग बढ़ने लगा। इसलिए इसे कुछ लोग राजस्थानी मिश्रित ब्रज की संज्ञा देते हैं।

डॉ. श्यामसुन्दरदास – 'जो लोग ब्रजभाषा में कविता करते थे उनकी भाषा 'पिंगल' कहलाती थी और इसमें भेद करने के लिए मारवाड़ी भाषा का उसी की ध्वनि पर गढा हुआ 'डिंगल' नाम पड़ा है।'[19]

डॉ. एल. पी. टैसीटरी –'ब्रजभाषा परिमार्जित थी और साहित्य शास्त्र के नियमों का अनुसरण करती थी, पर डिंगल इस संबंध में स्वतंत्र थी इसलिए उसका यह नाम पड़ा।'[20]

डॉ. ग्रीयर्सन – पिंगल और डिंगल दो भिन्न–भिन्न भाषाएं हैं जो क्रमशः शौरसेनी अपभ्रंश और गुर्जरी अपभ्रंश से ही उत्पन्न हुयी हैं।'[21]

डॉ. चटर्जी – अवहटी ही राजस्थान मे पिंगल नाम से ख्यात थी ।

इसका क्षेत्र दिल्ली के आस–पास का रहा है। **सूरजमल** ने इसका क्षेत्र दिल्ली और ग्वालियर के मध्य स्वीकार किया है। राजस्थानी साहित्य के आदिकाल से ही पिंगल के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की जानकारी हमें मिलती है। पिंगल मे ब्रज क्षेत्रीय भाषा शैली के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। जिनमें 'पृथ्वीराज रासो', 'छत्रसाल रासो', 'विजयपाल रासो', 'राजविलास', 'राणारासो', 'हम्मीर रासो', 'अवतार चरित', 'पांडुयषेन्दुचंद्रिका' तथा सूर्यमल्ल मीसण का 'वंशभास्कर' आदि प्रमुख हैं।

भक्ति रचनाओं में और वह काव्य जो सन्त काव्य से जुड़ा हुआ है उसमें पिंगल का ही परिचय हमें मिलता है। **डॉ. हीरालाल माहेश्वरी** का मानना है कि संतों का उद्देश्य सरल भाषा में अपने विचारों का प्रचार–प्रसार करना था, इसलिए वे स्थान–स्थान पर यात्राएं करते थे। उनकी 'सधुक्कड़ी' भाषा में राजस्थानी की झलक दिखाई देती है।[22] साधु एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते थे, उनके देशाटन के कारण सभी भाषाओं का प्रभाव सधुक्कड़ी मे दिखाई देता है।

राजस्थानी साहित्य के आदिकाल से लेकर आधुनिक काल में कई ऐसे महान् साहित्यकार हुए हैं जिन्होंने स्वत्रतंत्र रूप से पिंगल में समान रूप से साहित्य का सर्जन किया है। उनके नाम इस प्रकार से हैं।

——————

19. डॉ. श्यामसुन्दर दास, हिन्दी शब्द सागर की भूमिका, पृ. 28

20- L.P. Tessitory – Journal of the Asiastic Society of Bengal, Vol. 10,P.376

21- Griorson, Linguiestc Survey of India , Vol. 1, P. 127

22- H. L. Maheswari, History of Rajasthan Litt. P. 8

आदिकाल–कवि चंद, नल्लसिंह, नरपति, कवि दलपत, कवि शाड्.र्गधर।

पूर्व मध्यकाल–तत्त्ववेत्ता (निम्बार्क सम्प्रदाय) कृष्णदास (पयहारी), अग्रदास, नाभादास, मीराँबाई, कुशललाभ, परशुराम।

उत्तरमध्यकाल–महाराज जसवन्तसिंह बिहारी, कविजान, नरहरिदास, डूंगरसी, जोगीदास कुलपति, मानजी, वृन्द हरिनाभ, दयाल, मुरली, नागरीदास, हितवृन्दावनदास, सूदन, देवकर्ण, हरिचरणदास, सुन्दर कुंवरि, उम्मेदराम, बुधसिंह, हम्मीर, सोमनाथ, प्रतापसिंह, महाराजा मानसिंह, कविराजा बांकीदास, गवरीबाई, जवानसिंह, किशनजी।

भक्तकवि (संत सम्प्रदायों से जुड़े)– दादूजी, रज्जबजी, जनगोपाल, सुन्दरदास, राघवदास, दयाबाई, सहजोबाई–(रामस्नेही)–शाहपुरा, रामचरणदास, (खेड़ापा) हरिरामदास, (रैण)दरियावजी, दयालदास।

आधुनिक काल– कविराजा सूरजमल्ल मीसण, स्वरूपदास, प्रतापकंवरिबाई, गणेशपुरी, गुलाबजी, किशनजी, बालाबख्श, केशरीसिंह बारहठ, अमृतलाल, मोहनसिंह, अलवर के ईश्वरसिंह, फतहकरण, हरनाथ आदि।

भाषा का स्वरूप –

भाषा विज्ञान के अनुसार बोली ही भाषा का रूप ग्रहण करती है इसलिए भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा को दो स्वरूप में स्वीकार किया है।

(1) मौखिक स्वरूप

(2) लिखित स्वरूप

मौखिक स्वरूप को लौकिक साहित्य और लिखित साहित्य को अभिजात्य साहित्य की परिभाषा दी जाती है। भाषा का आरम्भिक रूप मौखिक ही होता है। भाषा वैज्ञानिकों की यह भी मान्यता है कि कोई भी भाषा सर्वप्रथम मौखिक स्वरूप में ही विकसित होती है, बाद मे उसका लिखित स्वरूप की आवश्यकता के अनुसार प्रकट होने लगता है। इसलिए उसका लोकसाहित्य उतना ही प्राचीन होता है। लोकसाहित्य के अन्तर्गत काव्य को ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना है, अतएव लोकसाहित्य में लोकगीतों को प्राचीनतम रचनाएं स्वीकार की गई है।

विद्वानों का यह मत रहा है कि एक बोली जो लगातार कई वर्षों तक लोकप्रयोग में आती रहे वह धीरे–धीरे परिनिष्ठित भाषा का रूप ले लेती है वह बोली जो भाषा का रूप ग्रहण करती है उसके लिए भाषा वैज्ञानिकों ने छः तत्त्वों को आवश्यक माना है। वे तत्त्व – (1) निश्चित भू–भाग (2) जनसंख्या (3) शब्द–कोष (4) व्याकरण (5) लिपि (6) साहित्य–भंडार हैं।

(इ) राजस्थानी भाषा की विशेषताए–

राजस्थानी भाषा के संबंध में कुछ ऐसी भ्रांति लोगों के मन में घर की हुई है कि यह एक स्वतंत्र–स्वायत्त भाषा न होकर बोलियों का समूह मात्र है। कुछ लोग इसे हिन्दी की उपभाषा या एक बोली की संज्ञा दे देते हैं जो अज्ञानता का सूचक है। राजस्थानी भाषा की परंपरा के अध्ययन से यह स्पष्टतः सिद्ध होता है कि राजस्थानी एक स्वतंत्र भाषा है तथा भाषा वैज्ञानिकों ने किसी भी भाषा को भाषा स्वीकार करने के लिए कसौटी के रूप में जिन छः तत्त्वों का निर्धारण किया हैं, वे निम्न प्रकार है – (1) निश्चित भू–भाग (2) जनसंख्या (3) शब्द–कोष (4) व्याकरण (5) लिपि (6) साहित्य–भंडार हैं। राजस्थानी भाषा इनकी कसौटी पर खरी उतरती है। इसे विशद् रूप से इस प्रकार देखा जा सकता है।

(क) निश्चित भू–भाग –

राजनीति विज्ञान के विद्वान जिस प्रकार राज्य की कल्पना में निश्चित भू–भाग की अनिवार्यता को सिद्ध करते हैं, और यह माना जाता है कि बिना भू–भाग के राज्य हो ही नहीं सकता या उसकी कल्पना ही निर्मूल है, ठीक उसी प्रकार भाषा के लिए भी यह निर्धारित आवश्यकता मानी गई है कि जिस विचार के आदान–प्रदान को भाषा का नाम दिया जाय वह किसी न किसी भू–भाग से संबद्ध होनी चाहिये। जहाँ उस भू–भाग के निवासी अपने दैनिक व्यवहार में उस भाषा का प्रयोग करते हों तथा वे उसी के नाम से जाने जाते हों और वह निश्चित क्षेत्र उस भाषा का अपना हो, सहायक भाषाओं के रूप में भले ही वहां अन्य भाषाओं का प्रयोग हो पर मुख्यतः वही भाषा बोली, लिखी व समझी जाती हो।

इस दृष्टि से भूगोल की पुस्तक से देखा जाय तो भारत का पश्चिमी सीमांत प्रदेश जिसकी सीमा पाकिस्तान से सटी हुयी है। राजस्थान के नाम से जाना जाता है, जिसके निवासी अपने दैनिक व्यवहार में राजस्थानी भाषा का ही प्रयोग करते हैं।

भारतीय संघ में राजस्थान प्रदेश की सीमाएं पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश तथा गुजरात से मिलती हैं, और क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान भारतीय राज्यों में अपना प्रथम स्थान लिए हुए है। विश्व के कई छोटे–छोटे स्वतंत्र देशों की तुलना में इसका क्षेत्रफल काफी बड़ा माना जा सकता है।

इतने विशाल भू–क्षेत्र में फैले प्रदेश की भाषा को बोली या बोलियों के समूह का नाम देना न्याय संगत नहीं है। क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थानी विशाल भू–भाग से संबद्ध है।

(ख) जनसंख्या –

'जन' या 'लोक' के अभाव में जिस प्रकार राज्य की सत्ता को स्वीकार नहीं किया गया है ठीक उसी प्रकार जो भाषा 'जन' के व्यवहार में नहीं आती, लोग उसके माध्यम से अपने विचार प्रकट नहीं करते। जिसे लोग दैनिक प्रयोग में नहीं लाते हैं उसे **मृत–भाषा** (Dead Language) का नाम दे दिया जाता है। **'जीवंत भाषा'** (Live Language) की संज्ञा उसे दी जाती है जिसें जन्म लेता शिशु अपने माँ के मुख से सुनता है, स्वर खुलने पर जिस भाषा का उच्चारण करता है, जिसमें अपनी बात कहता है और वह व्यक्ति उस भाषा को अपनी मातृभाषा कहता हो। जिस भाषा को जितने अधिक लोग अपने व्यवहार में लाते हैं, वह भाषा उतनी ही विशाल मानी जाती है। 'जनसंख्या' भाषा की विशालता को मापने का एक मापदंड है।

राजस्थानी भाषा की विशालता का परिचय इसके विशाल जनसमुदाय से मिलता है। राजस्थानी भाषा कुल पांच करोड़ राजस्थानियों की मातृ–भाषा है। तीन करोड़ लोग तो राजस्थान में स्थाई रूप से निवास करते है तथा शेष दो करोड़ राजस्थानी वे लोग हैं जो सम्पूर्ण भारत में जगह–जगह फैले हुए हैं, लोग जिन्हें 'मारवाड़ी' लोग अपने दैनिक व्यवहार में, व्यापार में, लेन–देन में, इसी भाषा का सहारा लेते हैं।

यह विशाल जनसमूह राजस्थानी को भारतीय भाषाओं में आठवां व विश्व की भाषाओं में सोलहवां स्थान दिलाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थानी भाषा की परंपरा पुष्ट एवं स्वतंत्र है।

(ग) साहित्य सर्जन –

किसी भी भाषा के भौतिक स्वरूप को साहित्य कहा जाता है। इसे भाषा का सावयव स्वरूप या मूर्तिमान स्वरूप भी कह सकते हैं। जिस भाषा का साहित्य जितना प्राचीन, समृद्ध एवं पुष्ट परंपरा से जुड़ा होगा, वह भाषा भी उतनी ही प्राचीन एवं समृद्ध मानी जाएगी। वैसे तो साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है, परन्तु वह समाज के साथ–साथ भाषा का दर्पण होता है।

विक्रम की 9वीं सदी से स्फुट रूप में राजस्थानी साहित्यिक अवशिष्टों का उल्लेख मिलना प्रारंभ हो जाता है। राजस्थानी साहित्य का प्रारंभिक स्वरूप ईंटों, पत्थरों, शिलालेखों, ताम्रपत्रों के साथ उत्कीर्ण अवस्था में मिलता है। वहीं आज के वैज्ञानिक युग में हम पुस्तकों

के रूप में प्रकाशित साहित्य का अध्ययन कर सकते हैं। लगभग 1200 वर्षों की यह सुदीर्ध साहित्यिक परंपरा राजस्थानी भाषा की समृद्धता का परिचायक है।

आज से लगभग 1200 वर्षों पूर्व वि. सं. 835 में जैनयति उद्योतन सूरि द्वारा रचित 'कुवळयमाला' में 'मरुभाषा' के रूप में राजस्थानी का उल्लेख किया गया हैं। राजस्थानी साहित्य अपनी दो विशिष्ट परम्पराओं में जीवित रहा है – प्रथमतः लोक साहित्य, द्वितीयतः अभिजात्य साहित्य।

व्यक्ति विशेष की 'अहं चैतन्यता' से शून्य मौखिक परंपरा में निष्ठ वह साहित्य जो जन–जन के कंठों का हार बना, अपनी विभिन्न विधाओं से लोकरंजन व लोकशिक्षण सदियों से करता आ रहा है उस साहित्य को लोक–साहित्य का नाम दिया गया है। लोकसाहित्य की यह सम्पदा व्यक्ति विशेष की निजी सम्पदा नहीं है, बल्कि यह सार्वजनिक, सार्वभौमिक संपदा है। लोकगीतों, लोकगाथाओं, बातों, लोकोक्तियों, मुहावरों, पवाड़ों, ओखाणों, आडियों, लोक रम्मतों, रासों और नाटयों मे यह वैचारिक संपदा समायी हुई है। यद्यपि यह साहित्य अलिखित ही है। अब इसका संकलन, संपादन, प्रकाशन हो रहा हैं, जिससे बदलते परिवेश में इस सम्पत्ति को अक्षय बनाया जा सके।

लोकसाहित्यों के अतिरिक्त लिखित साहित्य की भी अपनी लम्बी परंपरा रही हैं। भिन्न–भिन्न भाव, वैचारिकी तथा भिन्न शैलियों में साहित्य का सृजन हुआ है तथा हो रहा है। राजस्थानी साहित्य के इतिहास का अध्ययन किया जाय तो इसकी साहित्यिक क्षमता का परिचय मिलता है। गत 1200 वर्षों के साहित्यिक इतिहास को विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने मतानुसार काल और कालगत प्रवृत्तियों के आधार बनाकर काल विभाजन प्रस्तुत किया है। इस संबंध में डॉ. सीताराम लाळस के अतिरिक्त विदेशी विद्वान डॉ. एल. पी. टैसीटोरी का योगदान प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

राजस्थानी साहित्य का प्रारंभिक काल, दसवीं शताब्दी से माना गया है। यह काल–अवधि पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य तक की मानी गयी है। कुछ विद्वान इसे प्रारंभिक काल तो कुछ विद्वान इसकी प्रवृत्ति के अनुसार 'वीर–गाथा काल' का नाम देते हैं। इसके पश्चात् उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक का काल 'मध्यकाल' के रूप में माना गया है। कुछ विद्वान इस काल को दो भागों में विभाजित कर पूर्व मध्यकाल (1450–1650) तथा उत्तर मध्यकाल (1650–1850) का नाम देते हैं और कुछ विद्वान पूर्व मध्यकाल को 'भक्तिकाल' तथा 'उत्तर मध्यकाल' को 'रीतिकाल' की संज्ञा से संकेतित करते हैं।

नवीन चेतना के साथ सन् 1850 के पश्चात् का काल अर्वाचिन या आधुनिक काल के नाम से जाना जाता है। युग परिवर्तन के साथ–साथ साहित्यिक विचार शैली में भी निरंतर परिवर्तन आता रहा है और राजस्थानी साहित्यकारों ने उस परिवर्तन को अपने साहित्य में निरूपित किया है और नित्य नूतन सर्जन हो रहा है। इस सर्जन क्षमता ने इसे अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य के समकक्ष विकसित एवं समृद्व सिद्व किया है।

राजस्थानी साहित्य की अमूल्य निधि उसके सहस्त्रों हस्तलिखित ग्रन्थों में निहित है, जो विभिन्न संग्रहालयों की संपत्ति बने हुए हैं। ऐसा माना जाता है कि लगभग 2 लाख हस्तलिखित ग्रंथ अपनी प्रकाशन की प्रतीक्षा में हैं। केवल अभी तक 20 हजार ग्रन्थों का प्रकाशन संभव हो सका है, शेष ग्रन्थ अभी भी राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, अनूप संस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर, सार्दूल रिसर्च इंस्टीट्यूट बीकानेर, साहित्य संस्थान उदयपुर, चोपासनी शोध संस्थान, चोपासनी पुस्तक प्रकाश जोधपुर, महाराणा मेवाड़ अनुसन्धान केन्द्र उदयपुर, चारण शोध संस्थान अजमेर, लोक साहित्य प्रतिष्ठान काळू, लोक संस्कृति संस्थान चूरू, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान की विभिन्न शाखाएं इसके अतिरिक्त ब्रिटेन तथा जर्मनी के कुछ संग्रहालयों में अभी भी कई ग्रन्थ पड़े हैं, जिनकी ओर किसी का ध्यान नहीं गया है। जिस समय यह साहित्यिक सामग्री प्रकाश में लायी जाएगी तभी वास्तविक रूप में इस विशाल ज्ञान कोष का परिचय मिल सकेगा। इस दृष्टि से राजस्थानी एक समृद्ध भाषा सिद्ध होती है।

(घ) शब्द कोष –

भाषा का रूप प्रकट शब्दों के माध्यम से होता है। यदि किसी भाषा का अपना विशाल भंडार न हो तो वह समृद्ध भाषा का दावा प्रस्तुत नहीं कर सकती है, क्योंकि अन्य भाषाओं के शब्द, सहायक शब्दों के रूप में अथवा भाषा को गति देने में उचित प्रतीत होते हैं, पर मौलिकता के अभाव में भाषा में वह त्वरा नहीं आती जो उसे समृद्ध बना सके। शब्दों की विविधता से भाषा में सौंदर्य की अतिवृद्धि होती है।

इस दृष्टि से अध्ययन करें तो ज्ञात होता है कि राजस्थानी भाषा का शब्द भंडार विशाल, समृद्धशाली तथा वैविध्यपूर्ण है। एक ही व्यक्ति, उसकी क्रिया, उसकी स्थिति से जुड़े हुए कई पर्यायवाची शब्द मिल जाते हैं, जो उसकी विभिन्न मनोदशाओं को अभिव्यक्त करते है। राजस्थानी भाषा कि शब्दावली की यह विशेषता है, कि यहां के शब्दों की चार स्थिति पायी जाती है, – जिसमें सर्वप्रथम अनादर सूचक या तिरस्कार सूचक, दूसरा सामान्य अर्थ में, तृतीय सम्मान सूचक ओर चौथा पूजनीय अवस्था जिसमें आदर और

सम्मान से भी बढ़कर स्तुति का भाव समाहित हो। अन्य भाषाओं में इस प्रकार की विविधता कम देखने में आती है। सामान्यतः एक या दो प्रकार के शब्द ही देखने में मिलते हैं पर राजस्थानी भाषा में शब्दों की विविधता विशेष रूप से दृष्टव्य है – जैसे खाना खाने के आग्रह संबंधी अलग अलग व्यक्ति से कहना–रोटी गिट ले, रोटी खाले, भोजन जीमलो, तासली अरोगलो, जय श्री कृष्ण करो आदि। ऊंट' के लिए 205 पर्यायवाची, इसी प्रकार घोड़े, तलवार इत्यादि के भी बहुत पर्यायवाची बनाये गये हैं।

अद्यतन विभिन्न राजस्थानी शब्द कोषों में लगभग सवा दो लाख शब्दों का संकलन हो चुका है। सबसे बृहद् शब्द कोष, डॉ. सीताराम लालस कृत 'राजस्थानी सबद कोस' है जिसमें 2 लाख 10 हजार शब्द नौ खण्डों में प्रकाशित हुए है इसी प्रकार पूर्व काल में कवि मुरारीदान द्वारा 'एकाक्षरी माला' का संकलन किया गया। 'डिंगल कोष' में भी राजस्थानी शब्दों का संकलन हुआ है।

'राजस्थानी–हिन्दी शब्दकोष' के नाम से **आचार्य बद्रीप्रसाद सांकरिया** का शब्दकोष भी काफी महत्त्वपूर्ण है। इनके अतिरिक्त **डॉ. सीताराम लालस** का संक्षिप्त **'राजस्थानी सबद कोस'** भी दो खंडों में प्रकाशित हो चुका है। छात्रोपयोगी शब्द कोष का प्रकाशन भी हुआ है। इतना सब कुछ होते हुए भी अभी तक कुछ वैज्ञानिक शब्दावली, श्रमिक वर्ग की शब्दावली, तकनीकि पक्षों से जुड़ी शब्दावली प्रकाश में नहीं आयी है। इनके संकलन से शब्दों की संख्या और भी बढ़ सकती है।

संख्या की दृष्टि से देखा जाय तो यह स्पष्ट होता है, कि अब तक लगभग सवा दो लाख शब्दों का संकलन, प्रकाशन हो चुका है। अन्य भाषाओं की तरफ एक दृष्टि डाली जाए तो यह पता चलता है कि हिन्दी, जो हमारे देश की राष्ट्र भाषा है, इसमे अब तक 1 लाख 10 हजार शब्दों का संकलन प्रकाशन हुआ है जिसमें संस्कृत, ब्रज, खड़ी बोली, अवधी भाषाओं के शब्द सम्मिलित हैं। अंग्रेजी जो कि आज अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का दर्जा लिए हुए है केवल 96 हजार शब्द हैं जिसमें भी ग्रीक, लेटिन और फ्रांसीसी भाषा के शब्द जुड़े हुए हैं। अन्य भाषाओं की तुलना में जब राजस्थानी भाषा के शब्द भंडार को देखा जाय तो एक विशाल सागर हमें दिखाई देता है और अन्य भाषाएं पोखर के समान दृष्टिगोचर होती हैं। शब्दों की यह विविधता, विशाल ता राजस्थानी भाषा को समृद्ध एवं वैभवपूर्ण बनाने में प्रमुख रूप से सहयोगी रही हैं।

(ड.) व्याकरण –

व्याकरण' के अभाव में भाषा को पंगु माना जाता है। वह भाषा जो व्याकरण के नियमों में निबद्ध न हो उसे –'गंवारू', 'उज्जड़' व 'अविकसित' भाषा मानी जाती है।

व्याकरण के बिना भाषा की गति को स्वीकार नहीं किया गया है। 'व्याकरण' के अपने कुछ नियम–उपनियम तथा सूत्र होते हैं जिनको आधार बनाकर साहित्यकार अपनी कल्पना को मूर्त्त स्वरूप प्रदान करता है। जिस भाषा की व्याकरण और उसके नियम जितने विशद् और गहरे होंगे वह भाषा उतनी ही महान् मानी जाएगी।

भारतीय भाषाओं के इतिहास में 'संस्कृत' को सभी भाषाओं की जननी माना गया है। अतः मूल रूप मे सभी भाषाओं का व्याकरण संस्कृत व्याकरण से अनुसरित होता है। राजस्थानी भाषा के व्याकरण पर भी संस्कृत का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहा है, फिर भी इसकी कुछ अपनी पृथक विशेषताएं है, जो इसके अस्मिता को सिद्ध करती है।

राजस्थानी भाषा व्याकरण बहुत विशद् है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता छंदों की विविधता है। यहां कई प्रकार के वार्णिक एवं मात्रिक छंदों का प्रचलन है, जिनके पृथक–पृथक गठन के नियम हैं। छंदों के कई भेद–उपभेद बतलाये गये है। विशेषरूप से एक छंद 'गीत' के कुल 104 भेद गिनाये जा सकते हैं। इन सभी भेदों की अपनी परंपरा है। इन गीतो का विशेष लय के साथ पाठ होता है। किसी अन्य भाषा साहित्य के किसी एक छंद के इतने उपभेद नहीं गिनाये जा सकते हैं। गीतों की विविधता राजस्थानी व्याकरण की अपनी एक खास विशेषता है।

वैसे तो संस्कृत व्याकरण में अलंकारों को ही काव्य चमत्कार हेतु प्रयोग किया गया है, वैसे ही 'वैण सगाई' अलंकार राजस्थानी व्याकरण की अपनी निजी संपत्ति है। किसी भी अन्य भाषा में इस प्रकार के अलंकार का उल्लेख नहीं मिलता है। यह शब्दालंकार है और ऐसा माना जाता है कि इसके प्रयोग से काव्य में उत्पन्न दोष को दूर किया जा सकता है।

वर्णों के परस्पर संबंध स्थापित होने से तथा उससे काव्य दोष की निवृति होने से इसे 'वैण सगाई' का नाम दिया गया है। जिस प्रकार राजस्थानी संस्कृति में जब दो परिवारों में बैर पड़ जाता था और उस बैर को मिटाने के लिए उन परिवारों में 'सगाई' का दस्तूर कर दिया जाता था, ठीक उसी प्रकार 'वैण सगाई' के प्रयोग से काव्य दोष से मुक्ति मिल जाती हैं। वैण सगाई के महत्त्व के संबंध में एक दोहा प्रचलित रहा है–

वैण सगाई बाळियां, पेखीजै रस पोस।
वीर हुतासण बोल में, दीसै हेक न दोस।।

राजस्थानी साहित्य के रीति काल में श्रृंगारिक रचनाओं के साथ–साथ काव्य विवेचन तथा इसके नियमों से जुड़े कई ग्रन्थों का सर्जन हुआ है, जिसमें काव्य नियमों का संकलन हुआ है। डिंगल प्रकाश, रघुनाथ रूपक, काव्यलंकार, भाषा–भूषण, सिद्धान्त बोध

चन्द्रिका, रघुवर जस प्रकास, डिंगल गीत, राजस्थानी व्याकरण, मारवाड़ी व्याकरण, पुरानी राजस्थानी, राजस्थानी भाषा का सर्वेक्षण आदि ऐसे ग्रन्थ हैं, जिनमें राजस्थानी व्याकरण के तत्त्वों पर राजस्थानी भाषा खरी उतरती है।

(च) लिपि –

वाणी से निःसृत शब्द क्षणस्थायी ही होते हैं। उनका अस्तित्व केवल कहने–सुनने की प्रक्रिया तक ही रह पाता है, उसके पश्चात् उन शब्दों का लोप हो जाता है। उन्हें फिर न तो हम कह सकते हैं और न ही सुन सकते हैं। इन्ही शब्दों को क्षणस्थायित्व से चिरस्थायी मे परिवर्तन करने की कामना ने लिपि को जन्म दिया है।

जिस प्रकार भाषा के संबंध में यह कहा जाता है, कि यह एक विकास का ही परिणाम है ठीक उसी प्रकार लिपि भी एक विकास का ही परिणाम है। राजस्थानी लिपि के अध्ययन से पूर्व यह उचित होगा कि हम भारतीय लिपियों का ज्ञान प्राप्त करें ।

लिपि का जो परिनिष्ठित एवं परिष्कृत स्वरूप जो हम देख रहे हैं क्या वह मूल रूप से ऐसा ही था, या वह इससे भिन्न था, यह कहना बहुत कठिन है। यह तो निश्चित है कि लिपि का जो परिष्कृत स्वरूप आज हम देख रहें है, आरम्भिक रूप इससें कही भिन्न था। आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा का मानना है कि लिपि के भी विकास सोपान रहे हैं जो मुख्यतः तीन हैं–

(1) चित्रलिपि
(2) भावलिपि
(3) ध्वनिलिपि।[23]

आज सम्पूर्ण संसार में प्रचलित लिपियों को देखते हुए उनको अनेक भागों में विभाजित किया गया है। संसार की सभी भाषा लिपियों को अनेक प्रकार हमारे सामने विभाजित किया गया है, लेकिन इन सब में से हम चार स्वतन्त्र उद्‌गम को अधिक उपयुक्त मानते है। वे चार लिपियां हैं–

(1) भारतीय
(2) यूरोपीय
(3) सामी
(4) चीनी

———————

23. आचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा–भाषा विज्ञान की भूमिका पृ. 335

इन चारों में इतना स्पष्ट पार्थक्य है कि इन्हें एक स्त्रोत से संबद्ध मानना असंगत है। ब्राह्मी लिपि से भारत की सभी लिपियां निकली हैं। यूरोप की सभी लिपियां अल्पाधिक परिवर्तन के साथ ग्रीक लिपि का ही रूपान्तरण है। सामी से उद्भूत अरबी–फारसी आदि लिपियां पश्चिमी एशिया के आस–पास प्रयुक्त होती रही हैं, और चीन की लिपि इन सबसे विलक्षण आज भी बहुत कुछ चित्रात्मक है।[24] चीन भाषा की लिपि ऊपर से नीचे लिखी जाती है।

देवनागरी लिपि–

देवनागरी लिपि को भारतीय संविधान में राजभाषा की लिपि के रूप में स्वीकार किया गया है। उत्तर भारत की प्रायः सभी लिपियां देवनागरी के ही रूप भेद हैं। भारत की सभी लिपियां मूलतः एक ही हैं, क्योंकि सभी इन सभी लिपियों का विकास ब्राह्मी से हुआ है। 'देवनागरी' एक आदर्श लिपि है। आदर्श लिपि में जो–जो गुण दर्शाये गये हैं। वे सभी देवनागरी मे पाये जाते हैं।

लिपि की अपनी विशेषताएं होती है, जैसे ध्वनि और लिपि में सामंजस्य होना चाहिये अर्थात् जो बोला जाय वही लिखा जाए और जो लिखा जाए वही बोला जाए, देवनागरी की यह प्रमुख विशेषता है। इसके अतिरिक्त और भी कई विशेषताएं हैं, जो इसे आदर्शलिपि बनाती है, वे इस प्रकार हैं–

(1) ध्वनि और संकेत मे निश्चितता है।
(2) समग्र ध्वनियों को संकेत करने की क्षमता है ।
(3) लिपि सुपाठ्य और सन्देह रहित है।

प्रत्येक भाषा को अपनी अभिव्यक्ति के लिए कोई ना कोई लिपि की आवश्यकता अवश्य होती है। उपरोक्त इन्हीं सभी विशेषताओं को देखते हुए कई भारतीय भाषाओं ने इस लिपि को अपना लिया है। आधुनिक राजस्थानी भाषा शास्त्रियों ने भी इस लिपि को अपना लिया है। वैसे देखे तो प्रारंभ में राजस्थानी की अपनी स्वयं की लिपि थी, जिसमें सभी महाजन, बणिया अपना लेखन कार्य किया करते थे, जिसे 'महाजनी', 'बणियावटी' लिपि का नाम दिया गया। यह आम जन के लिए पढने और समझने मे क्लिष्ट होती थी, इसलिए इसे गुप्त संकेतो के लिए भी काम में लिया जाता था।

——————————

24. आचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा – भाषा विज्ञान की भूमिका पृ. 348

मुड़िया –

सभी भाषाओं की अपनी अपनी लिपि रही है। राजस्थानी के लिए आरम्भ से ही मुड़िया लिपि का प्रयोग होता रहा है। इसमें अक्षरों को मोड़कर लिखा जाता है अतः इसे 'मुड़िया' लिपि का भी नाम दिया गया। राजस्थानी लिपि से अभिप्राय 'मुड़िया' लिपि का ही है। देवनागरी लिपि की भांति यह लिपि भी बायें से दायें ओर लिखी जाती है। इसे लिखने का तरीका दूसरा है, वह यह कि पृष्ठ पर सबसे पहले लाइन खींच ली जाती है फिर लिखने वाला अपनी बात लिखनी शुरु करता है तो वह अपनी कलम तभी उठाता है जब वह खींची गई लाइन पूरी हो। इससे अक्षरों में घसीटा आ जाता है, कलम नहीं उठाने से अक्षर भी मुड़ जाते हैं।

इस लिपि की एक और विशेषता यह है कि इसमें शब्दों को अलग–अलग नहीं लिखा जाता, वे लगातार एक ही क्रम में चलते हैं और वाक्य पूर्ण हो जाता है। पाठक को अपनी बुद्धि और विवेक से शब्दों को तोड़कर वाक्य को पढ़ना होता है। सामान्य पाठक इस लिपि को नहीं पढ़ सकता है। कदाचित् इसके इस स्वरूप का प्रयोजन संदेशों, वार्ताओं को गुप्त रखने का हो पर धीरे–धीरे इसी रूप में साहित्य का सृजन भी होने और इस लिपि को राजस्थानी लिपि के रूप में स्वीकार कर लिया गया। जैसा कि पूर्व में ही उल्लेख किया जा चुका है, आज के समय में वणिक वर्ग अपने व्यापार पद्धति में भले ही इसका प्रयोग करते हों, साहित्य का लेखन, मराठी, सिंधी, नेपाली और अन्य कई भारतीय भाषाओं की भांति देवनागरी लिपि में ही होता है।

प्राचीन नागरी

देवनागरी   मुड़िया

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह सिद्ध किया गया है कि प्रायः राजस्थानी भाषा की मान्यता और इसके स्वरूप पर जो प्रश्न चिह्न लगाया जाता रहा है, तथा जो संशय उत्पन्न होता है, वह अनुचित है, न्यायसंगत नहीं, राजस्थानी एक बोली या कुछ बोलियों का समूह मात्र नहीं वरन् अपने आप में स्वतंत्र स्वायत्त समृद्धशाली एवं विशिष्ट परंपरावान् भाषा थी, है और रहेगी।

(ई) राजस्थानी भाषा स्वरूपगत अध्ययन –

राजस्थानी भाषा का अपना गत 1200 वर्षों का जो इतिहास है, इस इतिहास में देखें तो उपर्युक्त भाषा विशेषताओं के अतिरिक्त भी राजस्थानी भाषा की अपनी कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएं रही हैं, जो उसे अन्य समानान्तर भाषाओं से भिन्न और श्रेष्ठ सिद्ध करती हैं। उनमें से प्रमुख कुछ विशेषताओं को इस प्रकार देखा जा सकता है ।

(1) वर्ण संबंधी–

वर्णों से ही भाषा का निर्माण होता है और विशिष्ट वर्णों के प्रयोग से भाषा को एक दूसरे से अलग किया जा सकता है।

(1) वर्ण परिवर्तन–

चाहे वे वर्ण स्वर हों या व्यंजन परिवर्तित रूप में एक ही शब्द में एक की बजाय दूसरे का प्रयोग हो जाता हैं कुछ वर्ण परिवर्तित रूप में इस प्रकार प्रयुक्त होते हैं –

स के स्थान पर ह

च————————स/ह/छ

ब————————व.

ड़————————र

व.————————व

ज————————य

य————————ज

ऐ————————हे

ए————————ओ

ध————————ज

(2) ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग–

पिंगल के संबंध मे यह माना गया है कि यह कोमल भाषा है। कोमलकान्त पदावली का प्रयोग होता है, जबकि राजस्थानी/डिंगल में सामान्यतया अन्य भाषाओं में जो कठोर या दीर्घ वर्ण माने गये हैं। उनका प्रयोग सहज रूप में हुआ है। इन वर्णों के प्रयोग से भाषा में ध्वन्यात्मकता आ जाती है। उन वर्णों के प्रयोग एवं उनके उच्चारण के समय वे शब्द ध्वनि के रूप में गूंजते है। इस प्रकार के वर्ण अन्य मृदु भाषाओं में वर्जित माने गये हैं ये वर्ण इस प्रकार हैं–

ट,ठ,ड,ढ,ण,ञ,ळ आदि।

(3) 'ळ' वर्ण का विशेषप्रयोग–

राजस्थानी भाषा की अन्य विशेषताओं के साथ 'ळ' वर्ण के प्रयोग की भी अपनी विशेषता है। तेलगू और मराठी में भी इसका प्रयोग होता है। प्रायः 'ळ' को 'ल' का परिवर्त्तित स्वरूप अर्थ लिए होते हैं। एक ही अक्षर के साथ ये दोनों अलग–अलग प्रयोग होने पर अर्थ ही बदल जाता है, जबकि कई लोग भ्रांतिवश इन्हें एक ही समझते हैं। जिससे अर्थ में भिन्नता आ जाती है। **उदाहरण–**

(1) पाली– झाड़ी का पत्ता/रोकना
पाळौ– पैदल
(2) कालौ– पागल/मंदबुद्धि
काळौ– काला/याम वर्ण से संबंधित

(4) स्वर–व्यंजन लोप–

प्रारंभ मे चाहे बोलने या लिखने की शीघ्रता के कारण वर्णों का लोप हुआ हो पर अब वे शब्द अपने आप में पूर्ण अर्थ को स्पष्ट करते हैं। पहले तो बोलने में ही इन परिवर्तित शब्दों का प्रयोग होता होगा पर धीरे–धीरे उन शब्दों को लिखित परंपरा में भी अपना लिया गया। **उदाहरण –**

मसान–मसाण, स्तम्भ–थंभ, अकाल–काळ, कार्त्तिक–काति, आग–अग, राजपूत–रजपूत, लंका–लंक, माला–माळा।

रेफ के कारण भी राजस्थानी में ध्वनि परिवर्तन होता है। राजस्थानी में 'रेफ' को स्वीकार नहीं किया गया है, क्योंकि प्राकृत और अपभ्रंश में भी 'रेफ' का प्रयोग नहीं मिलता है। राजस्थानी ने भी इसी विशेषता को अपना लिया। इसके स्थान पर 'र' स्वतंत्र पूर्ण रूप से प्रयुक्त होता है। जैसे– कर्म–करम, धर्म–धरम, दुर्गा–दुरगा।

(5) दन्त्य 'स' का प्रयोग–

वार्णिक विशेषताओं में से एक यह भी विशेषता है, कि राजस्थानी भाषा के लेखन में और डिंगल वर्ण माला में मूर्धन्य 'ष' तथा तालव्य 'ष' के स्थान पर दंती 'स' का ही प्रयोग होता है। अर्थात् जहाँ भी 'स' वर्ण की ध्वनि या प्रयोग होगा–दंती 'स' का ही प्रयोग होगा। जैसे – भाषा–भासा, प्रकाश –प्रकास।

कहीं–कहीं मूर्धन्य 'ष' का प्रयोग अवश्य दिखाई देता है परन्तु यह प्रयोग 'स' के रूप में न होकर 'ख' की ध्वनि के रूप में होता है। अर्थात् जहां 'लिषै' शब्द हो तो इसका उच्चारण 'लिखै' शब्द होगा।

(6) 'ऋ' का स्वतंत्र प्रयोग नहीं–

राजस्थानी वर्णमाला में देवनागरी की भांति 'ऋ' का स्वतंत्र प्रयोग नहीं होता है। जहाँ इसका प्रयोग होता है वहां 'रि' अक्षर का ही प्रयोग होगा। जैसे – ऋषि–रिसि।

(7) नकारान्तक शब्दों का णकारान्तक प्रयोग–

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है यहां कठोर वर्णों का प्रयोग होता है, तो यहां 'न' जहां शब्द के अन्त में आता हो वहां 'ण' वर्ण का प्रयोग कर लिया जाता है पर यह नियम हर जगह लागू नहीं होता केवल अन्त में ही प्रयोग होता है। प्रायः लोग 'न' के स्थान पर 'ण' का प्रयोग सार्वजनिक रूप में कर लेते हैं जो औचित्यपूर्ण नहीं है। जैसै – नैनन–नैणन, जीवन–जीवण, मान–माण, रानी–राणी।

(8) पद पूर्ति के लिए वर्णों का जुड़ना –

पद पूर्ति के लिए छंद में वर्णों की संख्या पूर्ति हेतु कुछ शब्दों में नये वर्ण जोड़ दिये जाते हैं। इन वर्णों के जुड़ने या घटने से शब्द के अर्थ में परिवर्तन नहीं आता, केवल वर्ण की संख्या पूरी होती है। जहां किसी छंद मे वर्ण की संख्या घट रही हो तो वे वर्ण जोड़ दिये जाते हैं। जैसे– ह, क, ख।

(9) स्वर परिवर्तन–

प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं के प्रभाव के कारण प्राचीन और मध्यकालीन राजस्थानी भाषा में शब्दों के पीछे विशेषरूप से 'उ' और 'इ' की मात्राएं जुड़ जाती हैं। इन मात्राओं के प्रयोग से अर्थ नहीं बदलता, केवल शब्द रूप और बोलने का स्वरूप बदल जाता है। जैसे – आवियउ, जसइ, खैचइ।

इसी प्रकार राजस्थानी भाषा में 'इकार' तथा 'उकार' के स्थान पर 'अकार' करने की प्रवृति रही है। शब्द के इस स्वर, परिवर्तन से अर्थ में कुछ अन्तर नहीं आता।

यथा–हाजिर–हाजर, मिनख–मनख, मालूम–मालम, बिराजौ–बराजौ

(2) रूपभेद–

राजस्थानी भाषा में एक ही शब्द के कई रूप भेद मिलते हैं। इन्हें इनका पर्याय तो नहीं कहा जा सकता, वह तो केवल शब्द का रूप परिवर्तन ही है। जैसे –

भूमि के लिए–भोम, भूमि, भुहंडी, भुई, भयं।

पृथ्वी–प्रथी, प्रथवी, प्रथमी, पोहोवी।

(3) उच्चारण संबंधी विशेषताएं –

इस भाषा की यह एक विशेषता है कि यहां बहुत से ऐसे शब्द हैं जिनका उच्चारण करते समय किसी स्वर या व्यंजन पर विशेष जोर देना पड़ता है। इस प्रकार जोर न देने या पड़ने पर जो अक्षर पढ़ा जाता है उसका अर्थ बदल जाता है चाहे उसका बाह्य स्वरूप एक जैसा ही हो। उसके उच्चारण के समय ही अर्थ भिन्नता की जा सकती है। जैसे–

नर–स्त्री, नार–सिंह, कद–ऊंचाई, कद–कब, पीर–पीड़ पीर–पीहर।

(4) 'ब' कर विशेष ध्वनि–

'ब' वर्ण के नीचे बिंदी (नुकता) लगा देने पर 'व' वर्ण की ध्वनि में परिवर्तन हो जाता है। 'व' वर्ण 'व' और 'ब' के बीच की ध्वनि होती है और इसका प्रयोग स्वतंत्र रूप से होता है। जैसे –

वर–दिन/आक्रमण	वार–सहायतार्थ चिल्लाना
वत–वायु	वात–बात, कथा, वार्त्ता

(5) क्रिया संबंधी विशेषता –

राजस्थानी व्याकरण में क्रिया के विशेषरूप से प्रयोग के कारण उनके काल का संकेत हो जाता है। इसको निम्न प्रकार से देखा जा सकता है।

वर्तमान काल –

वर्तमान काल की क्रियाओं को दो रूप में व्यक्त किया जाता है।

(क) मूल क्रिया में 'इ' विभक्ति लगाकर क्रिया को वर्तमान काल के रूप में संकेतित किया जाता है –

जाव–जावै खाव–खावै

(ख) मूल क्रिया के पीछे 'छै' तथा 'है' लगाकर क्रिया वर्तमान काल की क्रिया के रूप में संकेतित किया जाता है–

जावै छै, जावै है, आवै छै, आवै है।

भूतकाल –

किसी भी क्रिया का भूतकालिक स्वरूप क्रिया को 'ओकारान्तक' या 'यो' लगाकर किया जा सकता है–

देखें–देख्यौ, भागै–भागौ/भागियौ।

भविष्यत काल –

राजस्थानी भाषा में मूल क्रियाओं के अंत में 'स्यां' 'सी', 'ला', 'गा' के प्रयोग से क्रिया भविष्यत रूप में बदल जाती है। जैसे– खास्यां, आसी, जावैला, लावेगा।

आज्ञार्थक क्रिया –

क्रियाओ के आज्ञार्थक प्रयोग में मूल क्रियाओं के साथ 'वै' अथवा 'जै' प्रत्यय जोड़ने से क्रिया आज्ञार्थक बन जाती है, जैसे– लिखावै, करसवै, लीजै, आइजै, लाइजै।

(6) लिंग –

राजस्थानी व्याकरण में दो प्रकार के लिंगों का उल्लेख आया है–

(क) पुल्लिग (ख) स्त्रीलिंग

कहीं–कहीं नपुंसक लिंग के उदाहरण भी मिलते हैं। परन्तु यह अपवाद स्वरूप ही है, कुछ शब्द ऐसे भी हैं–जो पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग दोनों में समान रूप से प्रयोग होते हैं। जैसे–टाबर, माइत, मिनख।

(7) वचन –

संस्कृत भाषा में एक वचन, द्विवचन, बहुवचन का प्रयोग होता था, धीरे–धीरे द्विवचन का प्रचलन कम हो गया तथा एकवचन और बहुवचन ही शेष रह गये। राजस्थानी में एकवचन से बहुवचन के रूपांतरण से शब्दों में निम्न प्रकार से परिवर्तन होता है –

(क) अकारान्तक एकवचन का बहुवचन रूपान्तरण आकारान्तक के रूप में होता है (स्वर में अनुनासिकता जुड़ जाती है)। जैसे–

नर–नरां, रात–रातां, चील–चीलां, खेत–खेतां।

(ख) दीर्घ या लघु 'इकारान्तक' एकवचन शब्दों का बहुवचन रूपान्तरण 'या' अक्षर के प्रयोग से हो जाता है। जैसे –

कवि–कवियां, मूरती–मूरतियां

रोटी–रोटियां, घोड़ी–घोड़ियां

(ग) ओकारान्तक शब्दों के बहुवचन रूप आकारान्तक हो जाते है। जैसे –

घाड़ौ–घोड़ा, भालौ–भाला, पोतौ–पोता।

(घ) 'आकारान्त' एवं 'उकारान्त' शब्दों में 'वां' के प्रयोग से एकवचन शब्द बहुवचन में रूपान्तरित हो जाता है। जैसे – म–मावं, लू–लूवां, बहू–बहूवां।

(8) अनुनासिकता –

राजस्थानी भाषा में प्रत्येक स्वर की अनुनासिकता स्वीकार की गयी है। अनुनासिक स्वरों के उच्चारण में शब्दों का स्थान वही रहता है किंतु साथ ही कोमल तालु और 'कौआ' नीचे झुक जाता है जिनसे मुख द्वारा निकलने के अतिरिक्त हवा का कुछ भाग 'नासिका विवर' में गूंजकर निकलता है, इस कारण स्वरों में अनुनासिकता आ जाती है। भाषा

वैज्ञानिकों के अनुसार यह अनुनासिकता स्वाभाविक मानी गयी है। वैसे भाषा के आधुनिक प्रयोग में अनुनासिकता को स्वीकार नहीं किया गया है–

आम–आंम, राम–रांम, काम–कांम, अमानत–अमांनत, बादाम–बादांम।

भाषा का मानक स्वरूप –

भाषा विज्ञान के अनुसार जिस भाषा में विभाषा, बोलियों, उपबोलियों की संख्या विशाल होती है, जिन्हें बोलने वालों की संख्या विशाल होती है। उसके एक लिखित मानक स्वरूप की आवश्यकता भी हुआ करती है। यह मानक स्वरूप किसी भी विकसित बोली के आधार पर स्वीकार किया जाता है और बोली विशेष का यह मानक स्वरूप युग और परिस्थितियों के साथ परिवर्तित होता रहता है। इसकी परिभाषा को समझाते हुए विद्वानों ने लिखा है।–

डॉ. भोलानाथ तिवारी 'मानक' को आदर्श भाषा कहते है। उनके अनुसार "सभ्यता के विकसित होने पर यह आवश्यक हो जाता है कि कोई एक भाषा क्षेत्र की जिसमें कई बोलियां हों, कोई एक बोली आदर्श बोली मान ली जाए और क्षेत्र से संबंधित कार्यों के लिए उसका प्रयोग हो। उसे 'आदर्श भाषा कहा जाता है, और वह पूरे क्षेत्र के उच्च वर्ग के लोगों की भाषा हो जाती है। साहित्य आदि में उसी का प्रयोग होता है।"[25]

आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा इसे 'परिनिष्ठित भाषा' का नाम देते हैं, "भाषा का आदर्श रूप वह है जिसमें वह एक वृहत्तर समुदाय के विचार विनिमय का माध्यम बनती है, अर्थात् उसका प्रयोग शिक्षा, शासन और साहित्यरचना के लिए होता है। वास्तव मे भाषा के इस रूप को मानक, आर्दश या परिनिष्ठित कहते हैं, जो अंग्रेजी के 'स्टेण्डर्ड' शब्द का रूपान्तरण है।"[26]

वास्तव में देखा जाए तो भाषा के जिस रूप मे साहित्य रचना की जा सकती है, वही भाषा का आदर्श रूप हो सकता है। भाषा आरम्भिक काल से ही विचार विनिमय का माध्यम रही है जहाँ उसका केवल मौखिक रूप ही मिलता है, लेकिन लगभग सातवीं आठवीं सदी तक आते–आते इसके लेखन पर भी विचार किया गया। भाषा के लेखन रूप के लिए मानक या आदर्श रूप की आवश्यकता होती है।

---

25. भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, पृ. 39

26. आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, भाषा विज्ञान की भूमिका, पृ. 57

राजस्थानी भाषा/बोली का स्वरूपगत अध्ययन –

राजस्थानी भाषा में भी विभिन्न बोलियां उनके विस्तृत क्षेत्रों और बोलने वालों की संख्या के कारण तथा लिखित साहित्य के आधार पर 'मारवाड़ी' बोली को 'मानक स्वरूप' के रूप में स्वीकृत किया गया है। राजस्थानी का केन्द्र मेड़ता माना जाता है, और मेड़ता की बोली 'मीरां' की मारवाड़ी बोली है। मारवाड़ी का साहित्य अत्यन्त प्राचीन और समृद्ध है।

इन्हीं सब कारणों से सदियों से 'मारवाड़ी' ही राजस्थानी का मानक स्वरूप मानी जाती रही हैं। भाषा के लिखित स्वरूप में परिवर्तन होता रहता है। इसीलिए राजस्थानी में यह कहावत अत्यन्त प्रसिद्ध हुई, **'आठ कोसां पाणि बदळै, बारा कोसां वाणि'** अर्थात् बारह कोसों के बाद बोली (वाणी) बदल जाती है। बदलने वाला यह स्वरूप बोली का है और मौखिक है।

भाषा का जो लिखित स्वरूप होता है, उसमें अनेक वर्षों के पश्चात् स्वल्प परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन समय व आवश्यकता के अनुसार होता है। लेकिन भाषा की एकरूपता के लिए भाषा के मानक स्वरूप की आवश्यकता होती जिसे सभी स्वीकार कर सके। इसलिए भाषा के लिखित स्वरूप से ही इसका मानक स्वरूप स्वीकार किया जाता है।

राजस्थानी भाषा में एकरूपता इसी कारण विद्यमान रही है क्योंकि प्राचीन समय से जो इसका लिखित स्वरूप हमें प्राप्त होता है, वह एक समान है, और कवियो तथा साहित्यकारों ने अनेक वर्षों से राजस्थानी भाषा की उस मानक स्वरूप को स्वीकार कर रखा है। इस तथ्य की जानकारी न होने के कारण ही कुछ लोग राजस्थानी की एकरूपता और उसके मानक स्वरूप के संबंध में शंका उठाते है।

प्राचीन समय के राजस्थानी ग्रन्थों को देखा जाय तो ज्ञात होगा कि राजस्थानी भाषा के उन ग्रन्थों में अद्भुत समानता है, जो विभिन्न स्थानों पर विभिन्न साहित्यकारों द्वारा और विभिन्न प्रकार से साहित्यिक रचनाओं में उद्धृत होती हैं। उससे इस बात की पुष्टि होती है कि आधुनिक युग तक आते–आते हमें भाषा की यह एकरूपता और मानक स्वरूप जोधपुर में बैठकर काव्य रचना करने वाले बांकीदास और अलवर मे बैठकर काव्य लिखने वाले रामनाथ कविया, मेवाड़ के महाराजा चतरसिंह, बूंदी के सूर्यमल्ल मीसण, चूरू के शंकरदान सामौर, सीकर के हिंगलाजदान कविया आदि कवियों की रचनाओं में प्राप्त होता है।

गद्य रचनाओं का उदाहरण लें तो मारवाड़ के दीवान 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' तथा 'मारवाड़ रा परगना री विगत', 'बांकीदास री ख्यात', बीकानेर के 'दयालदास की ख्यात', मेंवाड़ के 'मुंदयाड़ों की ख्यात, आदि सभी रचनाओं में वह एकरूपता भाषा का वह मानक और परिनिष्ठित स्वरूप विद्यमान है इतना ही नहीं भक्तों और संतों की रचनाओं में भाषा की एकरूपता और मानक स्वरूप दिखाई देता है। मेड़ता की मीराँबाई, जयपुर के दादूदयाल, जोधपुर के रामस्नेही संत, नागौर के जांभोजी और अन्य संत कवियों में इसी परिनिष्ठित राजस्थानी के दर्शन होते हैं।

राजस्थानी लोकसाहित्य में भी यही एकरूपता और भाषा का मानक स्परूप दृष्टिगत होता है। राजस्थान के विभिन्न लोकगीतों, बातों, कथाओं, लोकनाट्यों, कहावतों, मुहावरों, पडूत्तरों, दृष्टिकूटों आदि में भी इसी एकरूपता के दर्शन होते हैं। इस प्रकार राजस्थानी भाषा का एक निश्चित मानक स्वरूप उसके साहित्य में किसी—न—किसी रूप में विद्यमान रहा है जो आज भी दिखाई देता है।

अलंकार —

किसी भी ग्रन्थ का मूल्यांकन करते समय उसके दो पक्षों को आधार बनाया जाता है। प्रथम है—आंतरिक, द्वितीय है—बाह्य, जिन्हें क्रमशः भाव पक्ष और कला पक्ष भी कहते हैं। भाव पक्ष से रचना के रस और अलंकारों का मूल्यांकन होता है। भारतीय काव्य शास्त्र में नौ—दस रसों की कल्पना की गयी है।

बाह्य पक्ष में रचना की भाषा शैली, उसके छंद और अलंकार, उसके सामर्थ्य और गुण आदि के आधार पर रचना की परीक्षा होनी है। इन सभी का काव्य मे अपना—अपना महत्त्व है।

भारतीय काव्य शास्त्रों मे अलंकारों को विशेष महत्त्व दिया गया है। अलंकारों को काव्य का आभूषण माना गया है, कई इसे काव्य की आत्मा भी कहते हैं। इसके महत्त्व के संबंध में कई विचारकों के मत इस प्रकार रहे हैं।[27]

भामह की उक्ति अलंकार विहीन काव्य को व्यर्थ सिद्ध करती है—

"न कान्तमपि निर्भूषणं विभाति वनितामुखं।"

---

27. डॉ. कृष्ण देव शर्मा, भारतीय काव्य शास्त्र, पृ. 20

अर्थात् जिस प्रकार स्त्री का मुख सुन्दर होते हुए भी आभूषणों के बिना शोभा नहीं देता, वह सुन्दर तो होता है लेकिन आभूषणों से उसकी शोभा और ज्यादा बढ़ जाती है। उसी प्रकार शोभा–संपन्न होते हुए भी अलंकार विहीन काव्य व्यर्थ है।

आचार्य दण्डी इसी सम्प्रदाय का समर्थन करते हुए कहते हैं–

'काव्य शोभाकरान् धर्मान् अलंकारन्प्रचक्षते'

अर्थात् काव्य की शोभा के कारण धर्मों को अलंकार कहते हैं।

अलंकार विहीन काव्य की कल्पना ही व्यर्थ है। इस सूत्र का प्रतिपादन जयदेव ने किया है–

अग्डीकरोति यः काव्यं शब्दार्थ निर्लंकृती।
असौ न मन्यते कस्माद् अनुष्णमलंकृती ।।

जो विद्वान यह मानते हैं कि बिना अलंकारों के भी काव्य हो सकता हे तो वे यह क्यों नहीं मानते कि बिना उष्णता के भी अग्नि हो सकती है। अर्थात् जैसे उष्णता के बिना अग्नि की कल्पना नहीं की जा सकती वैसे ही बिना अलंकारों के बिना काव्य की कल्पना नहीं की जा सकती। इसी प्रवाह को आगे बढ़ाते हुए हिन्दी कवि केशवदास अपनी सम्मति प्रस्तुत करते हैं –

जदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरत सरस सुवृत।
भूषण बिना न राजही, कविता वनिता मित्त।।

भारतीय काव्य शास्त्र की यह काव्य परंपरा राजस्थानी काव्य में भी प्राचीन समय से ही विद्यमान रही है और सम्पूर्ण डिंगल काव्य छंदों और अलंकारों का ही काव्य है। काव्य में शब्द, अलंकार और छंद के माध्यम से चमत्कार उत्पन्न करके पाठक अथवा श्रोता को अपनी ओर आकर्षित करना की डिंगल कवियों का उद्देश्य रहा।

इसलिए राजस्थानी काव्य मे विभिन्न प्रकार के अलंकारों और छंदों का बाहुल्य रहा। कुछ आलोचकों ने अलंकारों की अधिकता की आलोचना भी की है उनका मानना है कि अलंकारो की अधिकता के कारण डिंगल काव्य अलंकारों के बोझ से इतना दब गया कि इसका काव्य तत्त्व ही नष्ट हो गया। इसमे काव्य का संदेश गौण हो गया, काव्य चमत्कार (अलंकार प्रयोग) प्रमुख हो गया। तुकबंदी काव्य पर हावी हो गयी जिससे काव्य का चिंतन दब गया।

इतना सब कुछ होते हुए भी राजस्थानी काव्यमें अलंकारों का वैशिष्ठय है और उनके जोड़ के दूसरे अलंकार भारत ही नहीं, विश्व के अन्य भाषाओं में भी उपलब्ध नहीं है। इसमे सबसे प्रमुख है– 'वैणसगाई' अलंकार। 'वैणसगाई' अर्थात् वर्णों का सम्बन्ध।

एक युग था जब राजस्थानी काव्य में 'वैणसगाई' अनिवार्य मानी गयी थी और बिना 'वैणसगाई' के प्रयोग के जो काव्य लिखा जाता था। वह काव्य ही नहीं माना जाता था जिसमे वैणसगाई का प्रयोग नहीं होता था। इसलिए अनेक वर्षों से यह परंपरा राजस्थानी भाषा में विद्यमान रहीं किन्तु आधुनिक युग आते–आते 'छंद–अलंकारों' से मुक्त नये काव्य का सृजन हुआ। आधुनिक समय में काव्य मे छन्द, अलंकार आदि साहित्यिक अंगो से काव्य को मुक्त करके, भाव के स्थान पर चिंतन का, मनोरंजन और तुंकबंदी के स्थान पर काव्य के संदेश का महत्त्व प्रतिपादित हुआ।

डिंगल काव्य में 'वैणसगाई' की अनिवार्यता की परंपरा रही है। डॉ. मोतीलाल मेनारिया के शब्दों में – 'यह डिंगल का अपना अलंकार है। डिंगल के रीतिग्रन्थों में इसकी बड़ी महिमा गायी गई है और यह कहा गया है कि जिस स्थान पर 'वैणसगाई' संगठित हो जाती है वहां फिर अशुभ गण, दग्धाक्षर इत्यादि के दोष नहीं रहते।"[28]

'वैणसगाई' एक शब्दालंकार है। वैणसगाई का महत्त्व विद्वानों ने अपने अपने अनुसार किया है। कुछ विद्वानों ने इसे छन्द तो कुछ ने इसे अलंकार माना है। राजस्थानी परंपरा से अपरिचित विद्वानों ने इसे एक छंद माना है,[29] जो सर्वथा अनुचित है। 'वैणसगाई' के अनुसार सामान्यतः कविता के किसी चरण के प्रथम शब्द का प्रथम अक्षर उसी चरण के अन्तिम शब्द के प्रथम अक्षर से मेल खाता हो उसे 'वैणसगाई' अलंकार माना गया है।

'वैणसगाई' अलंकार के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए लाक्षणिक ग्रन्थ **'रघुनाथ रूपक'** में कवि मंछाराम लिखते हैं–

आवे इण भाषा अमल, वैण सगाई वेश।
दग्ध अगण बद दुगण रो, लागे नह लवलेस।।

खून कियाँ जाणै खलक, हाड़ वैर जो होय।
वणै सगाई बयण तो, कल्मस रहे न कोय।।

---

28. डॉ. मोतीलाल मेनारिया, राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ. 82
29. नामवरसिंह, हिन्दी विकास में अपभ्रंश का योगदान, पृ. 30

अर्थात् किसी व्यक्ति की हत्या हो जाने से दो परिवारों में जो बैर पड़ जाता है, वह बैर, सगाई अथवा विवाह के दस्तूर से दूर कर दिया जाता है। इसी प्रकार काव्य में यदि कोई दोष, दग्धाक्षर होता है तो वह वैणसगाई अलंकार के प्रयोग से दूर हो जाता है। कविराज सूर्यमल्ल मीसण ने अपनी 'वीर सतसई' में इसके संबंध में लिखा है–

वयण सगाई वाळियां, पेखीजै रस पोस।
वीर हुतासण बोल, दीसै हेक न दोस।।'

'वैणसगाई' अलंकार के भेद–'वैणसगाई' अलंकार के सात भेद माने गये हैं जिसमें प्रमुख रूप से तीन आदि, मध्य और अन्त हैं, जिन्हें क्रमशः प्रथम मेल, मध्य मेल और अन्त मेल अथवा अधिक सम और न्यून भी कहा जाता है। तीन भेद इस प्रकार से हैं–

(1) आदि (प्रथम, उत्तम, अधिक मेल) – जब किसी छंद के एक चरण के प्रथम शब्द का प्रथम अक्षर उसी चरण के अंतिम शब्द के प्रथम अक्षर से मिलता हो वहां आदि मेल 'वैणसगाई' होती है–

उदाहरण–

जिण वन भमल न जावता, गैंद गवय गिड़राज।
तिण बन जंबुक ताखड़ा, ऊधम मंडै ओज।।

(2) मध्य मेल (सम मेल) – जब किसी छंद के एक चरण के प्रथम शब्द का प्रथम अक्षर उसी चरण के अंतिम शब्द के मध्य अक्षर से मेल खाता हो वहीं मध्य मेल 'वैणसगाई' अलंकार होता है।

उदाहरण–

नाम लिया थी मानवी, सरकै कलुश विसाल।
मह जैसे मेटै तिमर, रमस परस किरमाल।।

(3) अंत मेल (अधम मेल, न्यून मेल) – जब किसी छंद के एक चरण के प्रथम शब्द का प्रथम अक्षर उसी चरण के अंतिम शब्द के अंतिम अक्षर से मेल खाता है वहां अंत मेल 'वैणसगाई' होती है।

मरद जिकै संसार में, लखजै जीव विसाल।
रात दिवस रघुनाथ रा, लेवै नाम रसाल।।

'वैणसगाई' अलंकार के महत्त्व के संबंध मे अपने विचार व्यक्त करते हुए डॉ. गौवर्धन शर्मा ने लिखा है –"वैसे डिंगल के रीति–ग्रन्थों में वैणसगाई का निर्वाह करना अनिवार्य नहीं माना है निर्वाह न होने का दोष भी नहीं ठहराया है, फिर भी मध्यकालीन कवियों ने इसका इतना कठोरता से पालन किया है कि परवर्ती कवियों को इसे एक काव्य–नियम के रूप में ग्रहण करने को बाध्य होना पड़ा है। यद्यपि इसे कोई काव्य–दोष नहीं माना जाता था, परन्तु वह उसकी काव्य अक्षमता का द्योतक माना जाता था।"[30]

छंद –

कवि का काव्य जिस रूप मे हमारे सामने प्रस्तुत होता है उस बाह्य आवरण को छंद माना जा सकता है। छंद के प्रयोग से कहीं गद्य एवं पद्य में अंतर स्पष्ट किया जा सकता है। बहुत से विद्वानों ने छन्द को पद्य का पर्याय कहा है। **विश्वनाथ** के अनुसार **"छन्दोबद्ध पदं पद्यम्"** अर्थात् विशिष्ट छन्द मे बंधी हुई रचना को पद्य कहा जाता है। पूर्ववर्ती साहित्यकारों मे छंदों के निर्वाह की विशिष्ट परंपरा रही है, जिसे आधुनिक काव्य में स्वीकार नहीं किया जाता है। आज 'छंद' को बंधन माना जाता है तथा वही काव्य श्रेष्ठ गिना जाता है जो इस बंधन से रहित हो।

इस संबंध में यह धारणा रही है कि काव्य सहज भावों का सतत् उच्छ्वास अथवा प्रवाह है। जब इस मुक्त प्रवाह को बांधने का प्रयास किया जाता है, तो काव्य की आत्मा नष्ट हो जाती है। वास्तव मे छन्द ही वह तत्व है, जो पद्य को गद्य से भिन्न करता है। आज काव्य में छन्द को बन्धन मानते हुए **'छन्द मुक्त'** का प्रयोग होता है। छन्द शब्द की व्युत्पति छद् धातु से मानी गयी है, जिसके दो अर्थ होते है।

1. आच्छादन या आवृत करना : **(छदि संचरणे)**
2. आह्लादित या दीप्त करना : **(छदि आह्लाद दीप्तौ च)**

राजस्थानी साहित्य में छंदों का विशाल भंडार है। यहां एक ही छंद के भिन्न–भिन्न भेद–उपभेद हैं जिससे छंद भंडार की विशालता का अनुमान लगाया जा सकता है। 'गीत' नामक छंद के ही एक सौ चार भेद स्वीकार किये गये हैं। यहाँ मात्रिक एवं वार्णिक दोनों प्रकार के छंदों का प्रचलन रहा है।

यहां के छंदों की विशेषता है कि मात्रा अथवा वर्ण की संख्या में कमी रह जाने पर कुछ ऐसे 'स्वार्थिक प्रत्यय' जोड़ दिये जाते हैं जिनके प्रयोग से अर्थ में परिवर्तन नहीं होता, मात्रा तथा वर्ण की संख्या पूर्ण हो जाती है।

———————

30. डॉ. गोवर्द्धन शर्मा , डिंगल साहित्य, पृ. 239

छन्द का महत्त्व अनेक प्रकार से है।

1. वे कविता मे नाद–सौन्दर्य, लय और संगीतात्मकता उत्पन्न कर काव्य सौन्दर्य की वृद्धि करते है। अभिनव गुप्त के अनुसार छन्द काव्य में भाविभिव्यंजना प्रकट करते है।
2. छन्द रसों के अनुकूल शब्द योजना और वर्णविन्यास में सहायक होते है।
3. छन्द बद्ध रचना शीघ्र कंठस्थ होकर बहुत समय तक याद रहती है। अतः छोटे–छोटे सूत्र वाक्यों सिद्धान्तों एवं कवि की सुन्दर उक्तियों को हम आसानी से याद रख सकते है।

1. वार्णिक छन्द और 2. मात्रिक छन्द

वार्णिक छन्दों में वर्णों की संख्या तथा लघु–गुरु का स्थान नियत होता है। मात्रिक छन्द में अक्षरों की संख्या में स्वतंत्रता हो और मात्राओं की संख्या नियत हो।

यहां हम कुछ विशिष्ट छंदों का ही अध्ययन करेंगे जिनका पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है।

(1) दोहा – राजस्थानी साहित्य में सबसे अधिक प्रचलन दोहे का रहा है। इसे 'दूहा' कहा जाता है। प्रायः सभी प्रकार के रस निरूपण, काव्य रूपों में इसका प्रयोग मुक्त रूप में हुआ है। छंदों की श्रृंखला में यह सबसे छोटा छंद रहा है। राजस्थानी साहित्य में इसके प्रयोग के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा गया है–"डिंगल गीतों के बाद सबसे प्रिय छंद 'दोहा' है।

यदि गंभीरता से इस प्रश्न का विचार किया जाय कि कौनसा छंद राजस्थान की भावना का सही प्रतिनिधित्व करता है, तो निस्सन्देह 'दोहा' इसमें बाजी ले जाएगा। नीति, वीर, श्रृंगार, प्रकृति वर्णन तथा अन्य प्रकार की सशक्त अभिव्यक्ति के लिए 'दोहा' डिंगल कवियों का अति प्रिय छंद रहा है।

इस प्रदेश के लौकिक रीतिरिवाज, उत्सव, धार्मिक विश्वास, आशायें–अभिलाषायें, जनभावना, समाज व्यवस्था, संस्कार और संस्कृति जिस कुशलता से अपने को इस छंद के माध्यम से प्रगट कर पायी है, अभूतपूर्व है। दोहा ने राजस्थानी जनता से इतना अधिक स्नेह प्राप्त किया है कि उसने सभी प्रकार की कविता के लिए 'संज्ञा' का स्वरूप ग्रहण कर लिया है मानो वह छन्दों का प्रतिनिधि बन बैठा है, अतः कभी–कभी सामान्य छंद के अर्थ में भी इसका प्रयोग कर दिया जाता है।"[31]

———————

31. डॉ. गोवर्धन शर्मा, डिंगल साहित्य, पृ. 239

अपभ्रंश कालीन साहित्य से ही दोहे का प्रचलन प्रारम्भ हो गया था। राजस्थानी साहित्य में इसके प्रचलन की बहुलता के कारण इसके कई भेद–उपभेद सामने आये हैं जिन्हें सामान्य रूप में 'दोहा' तथा अर्थ विशेष में अलग–अलग नामों से पहचाना जाता है। **दोहे के प्रमुख पांच भेद** इस प्रकार रहे हैं।

(1) दूहा –

यह एक मात्रिक छंद है जिसमें चार चरण होते हैं। विषम चरणों (1–3) में 13–13 मात्राएं होती हैं, तथा सम चरणों (2–4) में 11–11 मात्राएं होती है। अन्त में तुक मिलता है।

उदाहरण–

रामत चौपड़ राज री, है धिक बार हजार।
धण सूंपी लूंठा धकै, धरमराज धिक्कार।।

(2) सोरठियो दूहो (सोरठा) –

हिन्दी छंद शास्त्र में जिस छंद को 'सोरठा' कहा जाता है वही राजस्थानी का सोरठिया दूहा है। राजस्थानी साहित्य में 'सोरठिया' बहुत लोक प्रचलित दूहा रहा है। इसके समर्थन में भी कई उक्तियाँ प्रचलित हो गयीं जो इस प्रकार हैं।

उदाहरण–

सोरठियो दूहो भलो, भलि मरवण री बात।
जोवण छाई धण भली, तारां छाई रात।।

यह एक मात्रिक छंद है। इसके चार चरण होते हैं। चरणों में मात्राओं का क्रम दोहे के विपरीत होता है अर्थात् इसके विषम चरणों (1–3) में 11–11 मात्राऐ तथा सम चरणों (2–4) में 13–13 मात्राएं होती हैं। 'सोरठिये दूहे' में तुक प्रायः मध्य में मिलती है।

उदाहरण–

अकबर समंद अथाह, सूरापण भरियौ सजळ।
मेवाड़ी तिण मांह, पोयण फूल प्रताप सी।।

(3) बड़ो दूहो –

यह भी एक मात्रिक छंद है जिसके चार चरण होते हैं, इसे 'सांकळियो दूहो' भी कहा जाता है। इसके पहले और चौथे चरण में 11–11 मात्राएं तथा दूसरे व तीसरे चरण में 13–13 मात्राएं होती हैं। प्रायः पहले और चौथे चरण में तुक मिलता है।

उदाहरण –

रोपी अकबर राड़, कोट झड़ै नहं कांगरै।
पटकै हाथळ सीह पण, बादळ व्है न बिगाड़।।

(4) तूंबेरी दूहो –

यह भी एक चतुर्चरणीय मात्रिक छंद है। मात्राओं के क्रम में जिस प्रकार दोहे व सोरठे में विपरीतता होती है। ठीक वैसे ही बड़े दूहे एवं तूंबेरी दूहे में भी होती है। मात्राओं का क्रम प्रथम व चतुर्थ चरण–13–13, द्वितीय व तृतीय चरण–11–11 मात्राएं। इसके दूसरे व तीसरे चरण में तुक होता है।

उदाहरण –

मेवा तजिया महमहण, दुरजोधन रा देख।
केळा छात विसेख, जाय विदुर घर जीमिया।।

(5) खोड़ियो दूहो –

इस दोहे को 'लंगड़ियो', 'खोड़ा' दूहा भी कहा जाता है, क्योंकि इस दोहे के चौथे चरण में शब्दों तथा मात्राओं का क्षय होता है। अर्थात् जिस दोहे के चौथे चरण में शब्दों तथा मात्राओं का हो वह 'खोड़ा दूहा' कहलाता है। इसके पहले व तीसरे चरण में 11–11 मात्राएं हाती हैं, तुक इन्हीं चरणों में मिलता है। दूसरे चरण में 13 तथा चतुर्थ चरण में केवल 6 मात्राएं होती हैं।

उदाहरण –

नाडो भरियो नीर, टाबरियो झुलण गयो।
तरै न पूगौ तीर, वो डूबौ।।

इनके अतिरिक्त भी दोहों के कई प्रकार सामने आये हैं, जिनका उल्लेख डॉ. कन्हैयालाल सहल ने किया है।[32] वे दोहे इस प्रकार हैं–

रंगदूहा, परिजाऊ दूहा, सिंधु दूहा, विसहर दूहा इत्यादि लेकिन इस संबंध में यह बात उल्लेखनीय है कि यहां दोहों की विभिन्नता का आधार उसमें वर्ण्य विविध विषय हैं, अन्य और कुछ नहीं।

(2) छोटी साणोर –

यह एक गीत छंद का प्रमुख अंग है। यह चार चरणों में पूर्ण होने वाला छंद है। इसके विषम चरणों (1–3) में 16–16 मात्राएं होती है और सम चरणों में (2–2) मात्राओं में कुछ अंतर होता है।

यदि चरण के अंत में गुरु हो तो 14–14 मात्राएं होती हैं तथा यदि लघु हो तो 15–15 मात्राएं होती हैं। इसमें प्रथम चरण में दो मात्राएं अधिक अर्थात् 18 मात्राएं होती हैं।

---

32. डॉ. कन्हैयालाल सहल, राजस्थान के सांस्कृतिक आख्यान, पृ. 13–14

उदाहरण –

एकण दिन अमर सकल मिळ आया,
करी अरज सांभळ करतार।
राम बिना मारै कुण रावण,
भू रौ कवण उतारै भार।।

(3) त्रिबंकड़ौ –

यह मात्रिक छंद है, इसके प्रथम चरण में 18 मात्राएं होती हैं, अन्य सभी में 16–16 मात्राएं होती हैं और अंत में दो गुरु होते हैं। 16 मात्राओं पर ही यति होती है।

उदाहरण –

अंगद मेलियोसद दूत अपंपर,
वळ अकलां मजबूत वडाळो।
बप सिणगार धूत खल बैहो,
रचे क्षमा अदभूत रढ़ाळौ।।

(4) निसाणी –

निसाणी संज्ञक गीतों के कुल ग्यारह प्रकार के भेद बताये गये है। जिनका विवरण इस प्रकार हैं–

(1) शुद्ध निसाणी
(2) गरवत निसाणी
(3) गघ्घर निसाणी
(4) निसाणी पैड़ी
(5) निसाणी सिर खुली
(6) निसाणी सोहणी
(7) निसाणी रूप–माळा
(8) निसाणी मारू
(9) निसाणी झींगर
(10) निसाणी वार
(11) निसाणी सिंहचली।

इन प्रकारों में सर्वाधिक प्रचलित रूप 'शुद्ध' **निसाणी**' ही है–

शुद्ध निसाणी–यह चतुर्चरणीय मात्रिक छंद है। इसके प्रत्येक चरण मे कुल तेइस (23) मात्राएं होती हैं, तेरह और इस पर यति होती है। प्रत्येक चरण में तुकांत तथा दो गुरु होते हैं।

उदाहरण –

सिंध अजा सामल सलल पीवै इक थाळा,
तसकर दबे उलूक ज्यूं ऊंगों किरणालां।
घड़ी न छेड़े परको चिहुंवरण विचाला,

ऐसा राज कने अवध दशरथ नृप–बाला ।।

(5) कवित्त[33] –

हिन्दी छंदों के 'छप्पय' के समान यह भी षट्पदीय छंद है। संस्कृत तथा हिन्दी में एक ही प्रकार के भेद का उल्लेख किया जाता है लेकिन राजस्थानी छंद शास्त्र में कवित्त के तीन भेद गिनाये गये हैं जो इस प्रकार हैं–

(क) कवित्त (ख) सुध कवित्त (ग) दोढ़ौ कवित्त।

(क) कवित्त – यहां छः चरण होते हैं जिनमें पहले चार चरण रोला के तथा अंत में दोहा होता है–

उदाहरण – हहो करै हित हाण, झझोतन व्याध जगावै।
धधो राज भय धरै, ररो धन नास करावै।।
घघो घरण घट घाट, निफल नर ननो नमाड़ै।
खय जस करै खकार, भभो परदेस भमाड़ै।।
अंक आठ कहिया असुभ, चित्त धुर धरो विचार।
अवध ईस गुण गावतां, लगै न दोस लगार।।

(ख) सुध कवित्त –

यह हिन्दी का छप्पय है। इसमें भी छह चरण होते हैं, पहले चार रोला के और अंतिम दो उल्लाला के होते हैं।

उदाहरण – एक पड़ै ऊपड़ै, रंध ऊधड़ै बकतर ।
सार बहै सूरमां, पार विण छूटै पंजर।।
एक पहर नभ अरक, ईख रहसो अचरज्जै।।
निरख काळ नच्चियौ, समै खग चाल सहज्जै।।
आवरत जुद्ध परखै अमर, हरखै रिख नारद्दहर।
कमधज्ज निहट्टै किरमारां, अत जुहै खूटै असुर।।

(ग) दोढौ कवित –

इसमे आठ चरण होते हैं। इनमें पहले छह चरण रोळा के और बाद के दो उल्लाला के होते हैं।

उदाहरण– प्रथम लाख समपियौ, कवी बारट संकर कर।
लखपति बारट लाख, दीध दूजौ करि डंबर।।

---

32. डॉ. मोतीलाल मेनारिया, राजस्थानी भाषा साहित्य, पृ. 86–87

तीजौ लख तिण वार, अजा भादा करि अप्पै।
भणि ताराचंद भाट, मौज लख चवथ समप्पै।।
पात नाम भट गोप, करै जस प्रगट प्रकासा।
मौज लाख पांचमी, जेण बगसै महराजा।।

(6) सपंखरो –

यह एक वार्णिक छंद है। इस छंद के विषम चरणों में सोलह वर्ण और सम पदों में चौदह वर्ण होते हैं। इस प्रकार के प्रत्येक पद्य में कुल साठ वर्ण होते है। (यहां ध्यान रखने की बात यह है कि इस पद्य के प्रथम चरण में उन्नीस (19) वर्ण भी होते हैं।)

उदाहरण– अंगा ऊसंसे सवायो तायो सुणे वैण रणवाला,
बडालां छोह में छायो चखां चोल व्रन्न।
कलेसां आधायो लेण रटक्कों सजोर काथैं।।

छंदों की यह विविधता एवं विशाल ता राजस्थानी भाषा को अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा अधिक समृद्धषाली सिद्ध करती है। शायद ही किसी अन्य भाषा में छंदों की ऐसी विविधता दृष्टिगोचर होती होगी।

काव्य दोष

संप्रेषणीयता को काव्य की सफलता का सूचक माना जाता है अर्थात् कवि जिस रूप में अपनी बात को पाठक अथवा श्रोता तक पहुंचाना चाहता है तो वे भाव उसी रूप में ग्रहण किये जाते हैं या नहीं ? वैसे तो इनमें मुख्य आधार कवि की प्रतिभा तथा पाठक या श्रोता की प्रज्ञा ही होती है लेकिन किसी बाह्यकारण से रसानुभूति समुचित रूप में न हो तो वह कारण काव्य दोष बन जाता है।

''मुख्यार्थ हतिर्दोषः।''

अर्थात मुख्य अर्थ में बाधा पहुँचाने वाले तत्त्व दोष कहलाते है। दूसरे शब्दों में काव्य के आनन्द में अवरोधक ही काव्य दोष हैं। काव्य दोष काव्य के सौन्दर्य को घटा देते है। इसलिए सभी आचार्यों ने काव्य दोषों को त्याज्य बताया है। काव्य दोष के कारण ही पाठक या श्रोता रस की अनुभूति से वंचित रह जाता है, और उनका जुड़ाव कवि या काव्य से नहीं हो पाता है।

डॉ. मोतीलाल मेनारिया के शब्दों में–'काव्य के मुख्य अर्थ की प्रतीती को हानि करने वाली वस्तु को दोष कहते हैं।'[34] अर्थात काव्य दोष के कारण हम काव्य का अर्थ ग्रहण नहीं कर पाते है।

---

33. डॉ. मोतीलाल मेनारिया, राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ, 91

जा पदार्थ के दोष ते अच्छे कवित नसाइ।

दूषण तासों कहत है, श्रीपति पण्डित राइ ।।

अर्थात् दोष वे तत्व है, जिनसे अच्छी कविता भी नष्ट हो जाती है। राजस्थानी भाषा साहित्य में ग्यारह प्रकार के काव्य दोष माने गये हैं। जो निम्न प्रकार हैं। –

(1) अंध	(2) छबकाल	(3) हीन
(4) निनंग	(5) पांगलौ	(6) जात विरोध
(7) अपस	(8) नाळछेद	(9) पखतूट
(10) बहरौ	(11) अमंगळ।	

इनको विस्तृत रूप में इस प्रकार देखा जा सकता है।

(1) अंध –

जिस गीत अथवा कविता में एक ही प्रकार की उक्ति का एक ही ढंग से निर्वाह नहीं किया जाता अर्थात् जहां उक्त विषय का निर्बाध निर्वाह न हो सके और किसी चरण में उक्त विषय सम्मुख और दूसरे मे परामुख हो तो वहां 'अंध दोष' माना जाता है। जैसे–

दिलड़ा ! समझ रै सगलौ जग दाखै,
पछै घणौ पिछतासी।
पुरुष जतम कद तू पामैला
गुण कद हरि रा गासी।।1।।
माता–पिता बंधव दौलत–मद,
सुत त्रिय जोड़ संधाणौ।
माया रा अडंबर मांहै,
बंदा ! केम बधाणै।।2।।
समुझै क्यूं न अजूं समझाऊं,
भूल मती हिव भाया।
दोड़ै ऊमर चटका देती,
छित जिम बादळ छाया ।।3।।
सोवै खाय करै नहं सुक्रत,
खोवै दीह खलीता।
प्रीत करै सिमरै सीतापत
जिकै जमारौ जीता ।।4।।

इस गीत के प्रथम और द्वितीय दोहले में परामुख उक्ति है। तृतीय दोहले में सम्मुख उक्ति है। अतः भिन्न–भिन्न परामुख सम्मुख उक्ति के प्रयोग से एक ही उक्ति का निर्वाह नहीं हुआ है, अतः यहां अंध दोष है।

(2) छबकाळ –

एक ही गीत अथवा कविता में जब भिन्न–भिन्न भाषाओं के शब्दों का प्रयोग होता है तो उससे डिंगल के लय में जो परिवर्तन आता है, वह दोष छबकाळ दोष कहलाता है–

उदाहरण – प्रीति करै तीरथ रै ऊपर,

मौज दियै मनमानी।

तक्यौ न मन हर पग जिंह ताई

पार न उतरै प्रानी ।।1।।

कर विधान करवत ले कासी

ले व्रज रेणूं लेटे।

पग्यौ न दिल प्रभु रै पद पंकज,

भिसत न व्यांतिक भेटै ।।2।।

यह पद्यांष राजस्थानी भाषा में रचित है लेकिन यहां भिन्न–भिन्न पंक्तियों में 'प्रानी' शब्द ब्रज तथा भिसत शब्द फारसी का प्रयुक्त हुआ है जिससे भाषान्तरण दोष आ गया है। यही दोष छबाकळ दोष कहलाता है।

(3) हीण –

जहां कोई निश्चित अर्थ न हो सके अथवा जहां अर्थ, अनर्थ होने की संभावना या अस्पष्टा की दृष्टि लिए हुए हो, वहां हीण दोष होता हैं–

उदाहरण– पात सुजस अखियात पयंपै

दावत असमर बात दुवै।

जग में राम तुहालै जोड़ै

हुवौ न कोई फेर हुवै।।

इस पद में राम की प्रशंसा की गई है। 'राम' शब्द से यह पता नहीं लगता कि कवि भगवान राम, या परशुराम अथवा बलराम में से किस की प्रशंसा कर रहा है।

(4) निनंग दोष –

कवि अपनी बात को जब अव्यवस्थित क्रम से प्रस्तुत करता है, अर्थात् जहां क्रम भंग वर्णन हो या जहां बात पहले कहने की हो उसे बाद में कहा गया हो और जो बाद में कहने की हो उसे पहले ही कह दिया गया हो वहां निनंग दोष होता है। हिन्दी में इसे 'अक्रमत्व दोष' कहा जाता है।

उदाहरण –

"रद नद तिरत कबंध, सार इम चली निनंग सुज।"

अर्थात् जहां पहले खून की नदियां बहती हों तथा कबंध बाद में नाचते हों, वहां निनंग दोष होता है।

(5) पांगलौ –

जब किसी एक छंद में छंद शास्त्र के विपरीत किसी छंद के चरण में मात्राएं कम या अधिक हों, वहां पांगळौ दोष कहलाता है। इसे 'पांगळा' या 'पंगु' भी कहा जाता है।

उदाहरण–

सागर पूछै सफराँ, आज रतंबर काह।
भारता तणी उमेदिया, खाग झकोळी माँहै।।

उपर्युक्त छंद दोहा है जिसके प्रथम चरण में 13 मात्राएं होनी चाहिये लेकिन यहाँ केवल 12 मात्राएं ही हैं, अतः यहाँ निनंग दोष है।

(6) जाति विरोध दोष –

जब एक ही गीत में एक क्रम से अलग–अलग छंदों का प्रयोग हो तो वहां जाति विरोध दोष माना जाता है।

उदाहरण–

अवनी में जिके भलांई आया, करै सदा सुकनत रा काम।
दान सदा विसतारुं देवै, नित रसणा लेवै हरिनाम ।।1।।

गिणजै सद ज्यारी जिन्दगाणी, उभै विरद धरियां अखत।
प्रारम्भै दौलत पुन पाणां, पुणैं सुपाणां सीतपत।।2।।

प्रत्येक गीत के लिए यह स्वीकार किया गया है कि वहां एक ही प्रकार के छंद का प्रयोग होना चाहिये जबकि यहाँ प्रथम दोहले में बेलियो गीत, द्वितीय में खुड़ढ साणोर तथा इसी तीसरे व चौथे क्रम में सोहण गीत व जांगड़े गीत का प्रयोग किया गया है, जो एक प्रकार से दोष है।

(7) अपस दोष –

जहाँ किसी बात का सीधा वर्णन न करके कूट अथवा पहेली के रूप में वर्णन किया गया हो, तो इस तरह की रचना में अपस प्रकार का दोष माना जाता है। इस प्रकार की रचना में काव्य का सीधा अर्थ प्रकट न होकर पहेली के माध्यम से अर्थ ग्रहण किया जाता है।

उदाहरण–

नदियां सुत तासु रौ नायक, जिणनूं काठौ झालै।
जलसुत मीत तासु जिणनूं, घात कदै नहं घाले ।।

यहाँ सीधा विष्णु न कहकर नदियों का पुत्र समुद्र और उसकी कन्या (लक्ष्मी) का पति कहा गया है, और सीधा यमराज न कहकर जल का पुत्र कमल, उसका मित्र सूर्य और उसका पुत्र कहा गया है। अतः यहां अपस दोष है। यदि यहां केवल विष्णु या यमराज कह दिया जाता तो वह दोष दूर हो सकता था।

(8) नालछेद –

काव्य परिपाटी से विरुद्ध मनमाने ढंग से वर्णन करने पर काव्य में इस प्रकार का दोष आ जाता है। उदाहरण –

कच–अहि मुख ससि लंक स्यंध कुच कोक नाळछिद्।

यहां पहले चोटी का और बाद में मुख का वर्णन किया गया है जो नखशिख–वर्णन परंपरा के विपरीत है, अत' यहां नाळछेद दोष है।

(9) पखतूट दोष –

जहा कविता में कहीं अनुप्रास रहित तथा कहीं अनुप्रास सहित पद हो, वहां पखतुट दोष गिना जाता है। कहीं अनुप्रासिक पदों को पक्की जोड़ तथा अनुप्रासिक रहित पदों को कच्ची जोड़ का पद कहा जाता है। उदाहरण –

अठी राम रा सुभड़ नै रावण उठी, लंक रै जोरवर खेत लड़वा।

तीर सेलां छुरा झींक तरवारियां, बाजियां बिनै ही रंभ भखा ।।1।।

हणे कुंभेणसा जोधहर श्रीहथा, करै कुण तेण परमाण काया।

जगत सारो अजूं साख दे जिकण री,खोपरी गुळेचा भीम खाया।।4।।

यहाँ क्रमशः चार पदों में दो ही पदों का उल्लेख किया गया है। प्रथम दोहले में कच्ची जोड़ एवं चतुर्थ दोहले में पक्की जोड़ है, अतः यहां पखतूट दोष है।

(10) बहरौ दोष –

जहां शब्द योजना ऐसी हो कि दूतरफा अर्थ निकले और अर्थवत्ता में भ्रम हो जाए, वहां काव्य में बहरौ दोष स्वीकार किया जाता है। इसमें द्विअर्थी शब्दों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण–

"रामण हरियौ राम"

इस उक्ति में दो अर्थ परिलक्षित होते कहै। प्रथम 'रावण ने राम को मारा' द्वितीय 'रावण को राम ने मारा' अतः अर्थ की अस्पष्टता होने के कारण यहां बहरौ दोष है।

(11) अमंगल़ दोष –

यदि छंद के किसी चरण के पहले और अन्तिम अक्षर के मिलने से कोई अमंगल सूचक शब्द बनता हो तो वहां 'अमंगळ दोष' होता है।

उदाहरण –

अहपन में पय राम रै।

इस उक्ति का आरम्भ 'म' वर्ण से तथा अन्त 'रै' वर्ण से हुआ है जिसका संयोग 'मरै' को परिलक्षित करता है, जो अमंगल का सूचक है, अतः यहां अमंगळ दोष है।

काव्य के इन दोषों को स्पष्ट करके मानो साहित्यिक आचार्यों ने कवियों को रचना की श्रेष्ठता के प्रति सजग कर दिया है जिससे श्रेष्ठ काव्य का ही सर्जन हो, अन्य साहित्यिक परम्परा, में ऐसा स्पष्ट वर्णन हमें कहीं दिखाई नहीं देता, अतः काव्य दोषों का उल्लेख भी हमारी राजस्थानी भाषा की विशेषताओं के रूप में ही प्रकट हुए हैं।

एक विचारक के शब्दों में, "इन काव्य दोषों पर विचार करने से स्पष्ट जान पड़ता है कि डिंगल कविता अनघड़ भाषा की रचना नहीं है किंतु शब्द और अर्थ के प्रयोगों पर इस कविता मे अनेक नियम बने हुए हैं और वह सुसंस्कृत शास्त्रीय पद्धति पर रची गई है।"

निष्कर्ष – राजस्थानी भाषा का लगभग बारह सौ वर्षो का विशाल और समृद्ध साहित्य रहा है। विभिन्न विद्वानों ने प्रमाणपुष्ट तथ्यों के आधार पर राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति विक्रम संवत् 8–9 वीं सदी से मानी है और उस समय सें अब तक भाषा एक ओर लोक भाषा के रूप मे विकसित हुई है तो दूसरी ओर अभिजात्य भाषा के रूप मे विकसित हुई है।

द्वितीय–अध्याय

डॉ. उदयवीर शर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व 50–75

(अ) संक्षिप्त जीवनी

(आ) शिक्षा–दीक्षा

(इ) सृजनात्मकता के विविध आयाम : एक परिचय

(क) प्रकृति काव्य

(ख) प्रशस्ति काव्य

(ग) संबोधन काव्य

(घ) मुक्तक काव्य

(ङ) निबंध, एकांकी, लघुकथा, संस्मरण इत्यादि

(च) इतिहास

(छ) समीक्षा ग्रंथ

(ज) संग्रह सम्पादन

द्वितीय–अध्याय

डॉ. उदयवीर शर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

शेखावाटी रीतिरिवाज, परम्पराओं, संस्कृति, लोकाचार, प्रेम, समर्पण आदि सभी विशेषताओं से सदैव परिपूर्ण रहा है। इनकी अपनी अनूठी रंगत है, जो पल–पल अपनी छटा बिखेरकर चारों तरफ आनन्द का सागर उमेड़ देती है। ''शेखावाटी का साहित्यिक वातावरण शताधिक कवियों की वाणी से मुखरित हुआ है।''[1] इससे सभी जाति, धर्म एवं सम्प्रदाय के साहित्यकारों ने अपनी लेखनी द्वारा महत्त्वपूर्ण रचनाएँ प्रस्तुत करके राजस्थान के साहित्य के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि हिन्दी साहित्य के विकास में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। 'राजिये रा दूहा' के प्रणेता कवि कृपाराम खिड़ियाँ इस भू–भाग के साहित्य के ताज माने जाते है। 78 ग्रन्थों के रचयिता महाकवि जान शेखावाटी साहित्य के ही नहीं अपितु हिन्दी साहित्य के भी रत्न माने जाते हैं।

शेखावाटी को पाश्चात्य इतिहासकारों ने राजस्थान का ताज माना है। यहाँ की प्रकृति में चारों ओर कमल के खिलते हुए फूलों की भाँति टीले नजर आ रहे हैं जिनका सौन्दर्य यहाँ पर आने वाले को मद मस्त कर देता है। "योद्धाओं, साहित्यकारों एवं कर्मठ व्यक्तियों की जीवनी शेखावाटी क्षेत्र का गौरव है। बाँके जवानों और बलिदानी शूरवीरो की जन्म स्थली होने का गौरव इस भूमि को सदा से है।"[2] "वास्तव में शेखावाटी शूरवीरों और नरसिहों की धरती है।"[3]

"शेखावाटी क्षेत्र को प्राचीन महान व्यक्तियों से जोड़े रखते हुए अधुनातन साहित्यक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा सामान्य सामाजिक जीवन जीते हुए प्रत्येक विशिष्ट व्यक्ति को यहाँ स्थान मिला है तथा वीरता, वैभव, विद्या और विज्ञान में शेखावाटी सम्भाग अपनी विशिष्टता रखता है।"[4] शेखावाटी न केवल वीरों की बल्कि साहित्यकारों की भी जननी रही है। यहाँ अनेक साहित्यकारों ने अपनी लेखनी को सफल बनाया है। राव शेखा जी के शेखावाटी क्षेत्र का अपना साहित्यक इतिहास रहा है।

1- शेखावाटीके साहित्य का इतिहास – लेखक डॉ. उदयवीर शर्मा एवं आ. नन्द कुमार शास्त्री पृ. 381

2- शेखावाटीके साहित्य का इतिहास – लेखक डॉ. उदयवीर शर्मा एवं आ. नन्द कुमार शास्त्री पृ. 13

3- शेखावाटीके साहित्य का इतिहास, प्रस्तावना भाग, पृ. 8– श्री शार्दूलसिंह शेखावत

4- शेखावाटीके साहित्य का इतिहास – लेखक डॉ. उदयवीर शर्मा एवं आ. नन्द कुमार शास्त्री पृ. 13

शेखावाटी सम्भाग में बिसाऊ नगर अपना विशेष ऐतिहासिक एवं साहित्यिक महत्त्व रखता है। इस नगर ने अनेक साहित्य–रत्नों को जन्म दिया है। इन साहित्य–रत्नों में प. श्री लाल जी मिश्र, डॉ. मनोहरजी शर्मा, डॉ. उदयवीर जी शर्मा, श्री अमोलकचन्द जी जाँगिड़, श्री रामजीलाल कल्याणी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। बिसाऊ नगर का गुणगान श्री कल्याणी ने अपने प्रशस्ति काव्य **'उदयवीर जस शतक'** में कुछ इस प्रकार किया है।

"नगर बिसाऊ धन्य है, पड़ियो साहित सीर।
उजळै द्विज कुळ जनमिया, उदयवीर मतिधीर ।। 6।।

सीधा ग्यानी सरल मन, सदगुण रा भण्डार।
सदा एक मन भवसूं , बाँटै सगने प्यार ।। 7।।

मायड भासा हित धरयो, तनमन सू दिढ नेम।
करम धरम सूं प्रगटियों, सहज सरस सत प्रेम ।। 8।।"[5]

माँ भारती के वरद पुत्र **डॉ. उदयवीर शर्मा** की कारयित्री एवं भावयित्री प्रतिभा का प्रमाण उनकी साहित्य साधना है। इन्होंने एक आदर्श अध्यापक का कर्तव्य तो निभाया ही है, साथ ही आपने राजस्थान ही नहीं अपितु भारत के जाने–माने साहित्यकारों में भी अपनी अनूठी छाप बनाई है। यह तो सर्वविदित है कि डॉ. उदयवीर शर्मा का स्वभाव सरल और सौम्य है। निष्कपट हृदय के धनी, सर्वहित चिंतक एवं ईर्ष्या रहित व्यक्तित्व है। **'संतोषी सदा सुखी'** सिद्धान्त में आपका विश्वास रहा है। आपके साहित्यकार रूप मे यात्रा आरम्भ करने का प्रमाण सन् 1950–52 में डॉ. मनोहर शर्मा (प्र.सं.) द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित हस्तलिखित विद्यालय पत्रिका 'सौरभ' से मिलता है।

विद्यालय से ही आप का रुझान साहित्य की ओर प्रबल होता गया एवं अन्य पत्रिकाओं में भी आप रचनाएँ भेजने लगे, जिनमें मुख्य पत्र–पत्रिकाएँ निम्न – समाज हितैषी (बिसाऊ), लाडेसर (कलकत्ता), राजस्थानी समाज, ज्ञानोदय स्मारिका (बिसाऊ),जागती जोत (बीकानेर), आस–पास (सीकर), मरु भारती (पिलानी), मरुवाणी (जयपुर), म्हारो देश (कलकत्ता), नैणसी (कलकत्ता), सरवर (कलकत्ता), मधुमती (उदयपुर), माणक (जोधपुर), जलम भौम (बीकानेर), बरदा (बिसाऊ) राजस्थान भारती (बीकानेर) राजस्थान गंगा (बीकानेर) आदि हैं। आप अपने साहित्य सर्जन के कारण कई साहित्यक पुरस्कारों से सम्मानित हो चुके हैं।

———————

5- उदयवीर जस शतक – लेखक श्री रामजीलाल कल्याणी, पृ. 1

आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की। सम्पादन एवं सहसम्पादन, ग्रन्थों की भूमिका–लेखन प्रकृति, समाज का बारीकी से चित्रण आदि सब आपके साहित्यिक गौरव के पुष्ट प्रमाण हैं। साहित्य तो जैसे आपकी आत्मा है और यह आपके रग–रग में बसा हुआ है।

(अ) संक्षिप्त जीवनी –

जब सम्पूर्ण भारत वर्ष में आजादी की चारों ओर लहर सी दौड़ रही थी, जिसमें शूरवीरों ने अपनी कुर्बानी देकर, दानवीरों ने धन देकर तथा 'साहित्यकार अपनी लेखनी द्वारा सम्पूर्ण भारत वर्ष को आजादी दिलवाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे थे। इसी लहर में उदयवीर जी शर्मा ने मिति कार्तिक शुक्ला 14 संवत् 1988 (वि.सं.) को बिसाऊ नगर (झुंझुनूं–राजस्थान) में एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया।'

आपके व्यक्तित्व पर आपके परिवार के संस्कारों की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। आपके पिता पं. श्री चिमनलाल जी शर्मा एवं माता श्रीमती मिश्री देवी हैं। "आपके पितामह श्री पं. रामदयाल जी शर्मा फारसी और उर्दू के कुशल लेखक, कवि एवं इतिहास के ज्ञाता थे, एवं आपके पिताश्री भी संस्कृत एव हिन्दी के पण्डित थे। इनकी हिन्दी एवं फारसी में लिखित कविताएँ अब भी डॉ. शर्मा के संग्रह में सुरक्षित हैं।"[6] डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने दादाश्री एवं पिताश्री के संरक्षण एवं मार्गदर्शन तथा माता श्रीमती मिश्री देवी शर्मा के लाड–प्यार में लिखना–पढ़ना सीखा।

डॉ. उदयवीर शर्मा के जीवन में त्रिधारा के रूप में शिक्षा,साहित्य एवं समाज सेवा बह रही है। अपनी शिक्षा–दीक्षा और अपने जीवन के बारें आरम्भ से ही वर्णन करते हुए उदयवीर शर्मा स्वयं कहते है कि ''बाँ दिनां आठ बरस का नै पाटड़ो पूजाया करता पठनै ताणी गुरु कन्ने भेज्या करता ।''[7] स्वयं डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने अध्ययन के बारे में लिखा है कि ''सन् 1945 ई. री साल म्है सेठ जमनाधरजी पौद्दार री स्कूल आर.बी. मिडिल स्कूल बिसाऊ (झुन्झुनु) री पाँचवीं कलास में हो।"[8] सन् 1948 ई. म्है श्री बिसाऊ मिडिल स्कूल बिसाऊ सूं आठवीं पास करी। इसै कमजोर वातावरण में आठवीं पास कर र आगली पढ़ाई ताणी सेठां रै रामगढ़ जावणों इण रै होस्टल में रैवणों पड़्यों। विषम परिस्थितियों मे भी आपने धैर्य नहीं खोया।

―――――――――

6. बिसाऊ दिग्दर्शन – लेखक उदयवीर शर्मा, पृ. 79
7. जागती जोत – सं. डॉ. गोरधन सिंह शेखावत, पृ. 25
8. जागती जोत – सं. डॉ. गोरधन सिंह शेखावत, पृ. 24

श्री आर. एन रुइया हाई स्कूल रामगढ़ (सीकर) में नित नेम सूं बाल–सभा हुआ करती अर म्हनै कविता, कहाणी, समस्या पूर्ति सुणावण रो मौको मिल्या करतो। होस्टल में रैवता थकाँ आचाणचक विचार आया जिणा नै म्है मान में छिपाया राख्या अर आगै चालतो रहयों। सेवा निवृत्ति पर 1990 में ही लोगाँ रै अर संगळियाँ रै सामनै प्रगट करयां।"[9] और वे "विचार हा

(1) अब आगै स्वावलम्बी बण 'र जीवण–जातरा तय करणी। घरका पर भार नी बणनों।

(2) जीवन निरमाण में उपयोगी ऊँची शिक्षा   लेवणी।

(3) शिक्षा अर साहित्य रै माध्यम सूँ समाज री सेवा करणी।

भगवान सुणली"[10] "आपने हाई स्कूल रामगढ़ में अध्ययनरत रहकर सन् 1950 में मैट्रिक उत्तीर्ण की । इसके बाद आगस्त 1950 में ही आने बिसाऊ मिडिल स्कूल में पढ़ाना आरम्भ कर दिया।"[11] दिनांक 1.7.1954 से जागीर अधिग्रहण के साथ–साथ आप राज्य सेवा में आ गए। आपका अध्ययन–अध्यापन कार्य साथ–साथ चलते रहे।

"सन् 1957 में पं. श्री लाल जी मिश्र 'अध्यक्ष', डॉ. मनोहर जी शर्मा 'उपाध्यक्ष', पं. तुलाराम जी जोशी 'मंत्री, आदि मिल'र बिसाऊ में राजस्थान साहित्य समिति री थरपणा करी अर मन्ने भी बी मैं सामिल कर'र उपमंत्री बणायो। सन् 1958 री जनवरी सूं 'वरदा' रो प्रकाशन चालू हुयो। इन में म्हारा लेख, व्रत कथावाँ लोकगीत, झीड़ (लम्बा कथागीत) आदि विषयाँ पर छपणा शुरू हुआ। 'पिरथी राज सुरजा' अर 'एमनाकंवार' पुस्तक रूप में छप्या। इण रै साथै ही म्है साहित्ककाराँ री पांत में सामिल हुयगो।"[12] शिक्षा और साहित्य जिस व्यक्ति की अभिरुचि में रच–बस गये हो, वह व्यक्ति सद्‌गुणों का भण्डार बन जाता है।

आपने अध्यापन के साथ–साथ अध्ययन का कार्य भी चालू रखा। आपने सन् 1955 में बी.ए. सन् 1960 में बी.एड. एवं साहित्य रत्न तथा सन् 1962 में एम.ए. (हिन्दी) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से की । आपने डिंगल साहित्य (एम.ए.) में 78.5 अंक लेकर विशेष योग्यता प्राप्त की । आपकी योग्यता की झलक आपके साहित्यों में देखने को मिलती है। आपकी योग्यता के दर्शन एक जिम्मेदार लेखक के रूप मे आज भी हमें प्राप्त हो रहें है, यह हम सभी के लिए बड़े सौभाग्य की बात है।

———————

09. जागती जोत – सं. डॉ. गोरधन सिंह शेखावत, पृ. 25

10. जागती जोत – सं. डॉ. गोरधन सिंह शेखावत, पृ. 26

11. बिसाऊ दिग्दर्शन – लेखक उदयवीर शर्मा, पृ. 79

12. जागती जोत (डॉ. उदयवीर शर्मा : सक्षिप्त परिचय), पृ. 26

सन् 1962 में हिन्दी के व्याख्याता बनकर श्रीगंगानगर जिले में पढ़ाना शुरू किया, एवं सन् 1962—1966 तक यहाँ रहकर आपने कई रचनाओं का सृजन किया। आप शिश्यु राणोली (सीकर), सन् 1966—1976 तक व्याख्याता के पद पर रहकर डॉफी जैसी कृति की रचना की, जो सन् 1973 में प्रकाशित हुई। इसी काल खण्ड में सन् 1973 में श्री नरोत्तमदास जी स्वामी के निर्देशन में पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

सन् 1976 में आप सैकण्डरी स्कूल के प्रधानाध्यापक पद पर पदोन्नत हुए तथा सन् 1977 में रा. मा. वि. बड़वासी में प्रधानाध्यापक के पद पर स्थानान्तरित होकर आए। सन् 1977 से अब तक आप इस गाँव की शोभा बढ़ा रहे हैं। यहाँ से सन् 1983 में हा. सै. के प्रधानाध्यापक पद पर पदोन्नति लेकर 'गोरीर, बिसाऊ स्कूल' में रहे। फिर गुढ़ा पोख की सी. हा. सै. स्कूल से आप 1990 में प्रधानाचार्य के पद से सेवानिवृत हुए।

आप धार्मिक आस्था वाले हैं। जन कल्याण, दान पुण्य में आपकी रुचि सदैव देखी जा सकती है। आप वंश परम्परा से ही उदार, आस्थावान, सेवाभावी और भक्त हृदय वाले व्यक्ति हैं। अपनी भक्ति भावना और आस्था को साकार स्वरूप देने का पुष्ट प्रमाण है, आपके द्वारा निर्मित श्री हनुमान जी का मन्दिर जो आपके जन्म स्थान बिसाऊ (झुन्झुनूं) के बस स्टैण्ड पर अवस्थित है।

बाह्य व्यक्तित्व –

डॉ. उदयवीर शर्मा का बाह्य व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक एवं मनमोहक है। आपके मुख मण्डल पर तेज प्रकाश है, अर्थात आपके ललाट एवं एक ही नजर में दूसरे को पहचानने वाली आँखों को देखकर ऐसा लगता है कि आप महात्मा हैं। छोटे से कस्बे बिसाऊ में जनमे डॉक्टर साहब वस्तुतः एक घराने के बालक रहे है। सार्थक जीवन के व्यक्तित्व के गुणों का बीज रूप में अंकुरण आपके विद्यार्थी जीवन में ही हो चुका था। शालीनता की सौरभ एवं व्यवहार कुशलता आाप में विद्यार्थी जीवन से ही प्रस्फुटित होने लगी थी। आप जब बोलते हैं तो सुनने वाला आपकी ओर अनायास ही आकर्षित हो जाता है। आप कम बोलते है, पर जितना बोलते हैं, वह सुदृढ़ एवं सुसंगठित शब्दों में मण्डित होता है, जिससे सुनने वाला मुग्ध हो जाता है। आपका शारीरिक व्यक्तित्व भी बड़ा आकर्षक है। साधारण वेशभूषा एवं रहन—सहन में आपका जीवन साहित्यिक साधना के साथ व्यतीत होता है। नित्य—कर्म से आप माँ शारदा के चरणों में साधना करने रहते हैं। आपकी अभिरुचि ग्रन्थों में एवं पेन की नोक द्वारा मुखरित होती रहती है। आपका व्यवहार सरल एवं सादगी से परिपूर्ण है। आप उतना ही बोलते हैं जितना आवश्यक हो। आप स्पष्ट वक्ता

है, अर्थात् जो कहना है, स्पष्ट कह देते हैं। आपका आतिथ्य भाव तो बेमिसाल है। इसमें माताजी श्रीमती गीता देवी (डॉ. शर्माजी की पत्नी) का तो सदा ही अपूर्व योगदान रहता है। मनोविनोद का आनन्द आप साहित्य साधना के द्वारा ही पूरा करते हैं। श्री अमोलकचन्द जाँगिड़ ने आपके सम्बन्ध में सही ही लिखा है, जो आगे प्रस्तुत है, "आप सामान्य व्यक्ति से नजर आतें है किन्तु आपके चेहरे पर आन्तरिक प्रभा के दर्शन होते हैं। आप उदार चेता, विशाल ह्रदयी दृढ़ संकल्पी तथा सादा जीवन उच्च विचार के प्रति समर्पित व्यक्तित्व के धनी हैं। आप वर्तमान की आपा–धापी से नितान्त दूर रहते हुए ऋषि तुल्य साहित्य–सेवा में लीन हैं।"[13]

आपके आन्तरिक मन में समुद्री हिलोरें एवं भाव रत्न विद्यमान हैं। आपका स्वभाव शांतिमय है, मानो शांतिमय गंगधार हो जो प्रकृति को सींचती हुई अपनी मंजिल की ओर दौड़ रही हो। आपके भीतर स्नेहमयी सागर उमड़ा रहता है जो विभिन्न नदियों को अपने में समा लेता है। चाहे वे अपने साथ कंकड़–पत्थर, मिट्टी या फिर रत्न लाए सबको स्नेहमयी आंचल में छुपा लेता है। उसी भाँति आप अपनी ह्रदय की धड़कन के साथ जोड़ कर बौद्धिक कौशल के साथ अपनी लेखनी में परिवर्तित कर लेते हैं।

आप केवल उम्र से ही बड़े नहीं है बल्कि आपका भीतरी बड़प्पन भी बहुत दिखाई देता है। बड़ा होना उम्र की बात है, लेकिन बड़प्पन गुण का विषय है। आपकी इच्छा अहं से रहित है, और जिज्ञासा ज्ञान प्रेरित है, व सह्रदयता से भरपूर है। आपकी समझ गहरी है, इसलिए आपमें योग्यता है, विद्वता है। साथ ही सरल स्वभाव में विनोदप्रियता भी आपके व्यक्तित्व का महत्त्वपूर्ण पहलू है।

आप मानवता को अधिक महत्त्व देते हैं। आपकी सहनशीलता की शक्ति अपार है। आप हर कठिनाई को आसानी से सहन कर लेते हैं, लेकिन किसी को आभास तक नहीं होता है। माँ पृथ्वी की प्रत्येक सम्पदा से वही प्रेम है, जो आप अपनी कृतियों से रखते हैं, बल्कि इनसे भी अधिक है। आपकी त्याग भावना भी अपार है। इन सब में आपके साथ माताजी श्रीमती गीता देवी शर्मा का अद्‌भूत योगदान है, जिसके बलबूते पर आपने अपनी मंजिल को पाने में सफलता प्राप्त की है। इस प्रकार शर्मा जी काव्य यात्रा निरन्तर जारी है। आपने हिन्दी और राजस्थानी के साहित्यकारों में अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। आप आने वाले भावी साहित्यकारों के लिए प्रेरणा स्रोत रहेंगे।

———————

13. ज्ञानोदय स्मारिका (स्वर्ण जयंती विशेषांक, 1995) सं. अमोलकचन्द जाँगिड़ पृ. 118

आपके व्यक्तित्व के बारे में **श्री रामजीलाल कल्याणी** द्वारा लिखित **'उदयवीर जस शतक'** नामक प्रशस्ति काव्य मे आपकी प्रशंसा करते हुए आपके गुणग्राहि व्यक्तित्व का बखान किया है। काव्य के कुछ छन्द द्रष्टव्य हैं। –

"ऊँचो मस्तक मोवणो, मुख मण्डल पर तेज।"
गुण ग्राही व्यक्तित्व भल, दोषां सूं परहेज ।। 26 ।।
वैर भाव उपजै नहीं, थारो दिल दरियाव।
सब सूं हिल मिल चालणों राखो ऊँचा भाव ।। 27 ।।

आपके निर्मल, सरस, धीर, गंभीर और दूसरों के हित साधक के रूप मे व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए कल्याणी जी लिखते है। –

साँचो निरमल सरस मन, धीरों गहर गम्भीर।
परहित साधक दिढ व्रती, चिन्तक सफल सुधीर ।। 33 ।।
उजळो मत उजळोचरित, उजळी जीवन राग।
सरस सलूणो ऊजळो, कलम धणी रो भाग ।।35 ।।
मधुरी थारी साधना, मधुरो सत व्यौहार।
मधुरी वाणी ओपती, मधुरी जनमन प्यार।।34 ।।
आकरसक व्यक्तित्व सूं, आकरसित सै लोग।
सत रै जीवन में रम्या, सदा सरावण जोग।।23 ।।

साहित्यिक व्यक्तित्व –

एक साहित्यकार का रूप उसके साहित्य से ही दिखाई देता है। साहित्यकार का प्रतिबिम्ब उसके द्वारा रचित कृतियों में देखा जा सकता है। साहित्यकार साहित्य के माध्यम से ही साहित्य प्रेमियों के दिलों–दिमाग पर छा जाता है। उसकी वही साधना है, वही तपस्या है और वही उसका प्रतिफल है।[14] साहित्यकार अपनी साहित्यिक संजीवनी के द्वारा ही अपने जाने के बाद भी सभी के दिलों में जिंदा रहता है।

डॉ. उदयवीर शर्मा एक सहृदय एवं सहज साहित्यकार हैं। आप बहुविध प्रतिभा के धनी हैं। अपनी सुदीर्घ साहित्य सेवा के मध्य आपने अनेक विधाओं और धाराओं में रचना की है। आपने गद्य और पद्य मे समानाधिकार से रचना की है, जिनके आधार पर आपको अग्रांकित रूपों में देखा जा सकता है–

---

14. उदयवीर जस शतक – लेखक रामजीलाल कल्याणी, पृ. 2–3

1. कवि के रूप में
2. साहित्य लेखक के रूप में
3. लघु कथा, लेखक एवं निबन्धकार के रूप में
4. प्रस्तावना एवं भूमिका लेखक के रूप में
5. संग्रह–सम्पादक के रूप में
6. शोधकर्त्ता के रूप में
7. अनुवादक के रूप में।

सर्जनात्मक व्यक्तित्व के प्रेरणा स्रोत–

प्रत्येक साहित्यकार के पीछे कोई प्रेरणा शक्ति अवश्य होती है। वह उस प्रेरणा स्रोत से प्रेरित होकर साहित्य की डगर पर कदम बढ़ाता है। ''डॉ. उदयवीर शर्मा को साहित्यिक प्रेरणा फारसी, उर्दू एवं हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ तथा कवि हृदय आपके पूज्य पिता श्री चिमनलाल जी शर्मा 'विशारद' एवं अपने स्व. पितामह श्री रामदयाल जी शर्मा से मिली। इनके साथ–साथ ही डॉ. शर्मा को आदर्श गुरु एवं प्रेरक व्यक्तित्व के रूप में पं. श्री लाल जी मिश्र तथा डॉ. मनोहर शर्मा मिले। ये दोनों साहित्य महारथी बिसाऊ की ही नहीं अपितु राजस्थानी साहित्य की विभूति हैं। इस प्रकार बिसाऊ में जन्मे डॉ. उदयवीर शर्मा अपनी लेखनी के बल पर सारे राजस्थान एवं राजस्थानी साहित्य के सपूत हो गए हैं।[15]

डॉ. उदयवीर शर्मा बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। आपका रचनासंसार विराट् और विशिष्ट है। आपकी निष्ठा और लगन से आपने एक बहुआयामी कृतित्व विकसित किया है, जो पूरी तरह से साहित्य, कला व संस्कृति से रचा–बसा हुआ है। आपने अपने साहित्यकर्म में से अपनी अनूठी पहचान बनाई है।

सन् 1950 में डॉ. मनोहर शर्मा (प्र.अ.) द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित हस्तलिखित विद्यालय पत्रिका 'सौरभ' में आपकी रचनाएँ सम्मिलित होने लगीं और उनकी प्रेरणा से साहित्य की ओर आपका अधिक रुझान बढ़ा। 'सौरभ' पत्रिका ही आपके लेखन की प्रथम सीढ़ी रही जहाँ से आपने लेखक के रूप में प्रथम कदम रखा। ''शिक्षा एवं साहित्य गुरु डॉ. मनोहर शर्मा के श्री चरणों में बैठकर आपका साहित्य रचनाक्रम अब भी चालू है।''[16] उनकी कृपा एवं प्रेरणा से निरन्तर लिखना प्रारम्भ किया।

---

15. उजास (डॉ. उदयवीर शर्मा : एक संक्षिप्त परिचस से उद्धृत) लेखक नरेश वर्मा
16. बिसाऊ दिग्दर्शन – लेखक डॉ. उदयवीर शर्मा एवं अमोलकचन्द जाँगिड़ पृ. 80

''अपनी प्रतिभा के बल पर आप प्रान्तीय स्तर पर राजस्थान के एक स्थापित एवं मान्य साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए।''[17] श्री रामजीलाल कल्याणी ने अपने 'शतक' में लिखा है, जो आपके साहित्यिक व्यक्तित्व पर अच्छा प्रकाश डालता है।

''गुरुवर री किरपा हुई, लाग्यो साहित ध्यान।
हस्तलिखित सौरभ सजी, पहली शुद्ध पिछाण।।36।।
गुरु मनोहर आपरा, साहित में सरनाम।
सहज ग्यान दीन्यों सदा, ओपै वरदा धान ।।15।।
गुरुदेव प्रेरित करया, थारा भाव पिदाण।
पीठ थेपड़ी चाव सूं थारी खिमता जाण ।।18।।
साहित में सरनाम हो, पूरी गुरु री आस।
उदय नखत मानों हुयो, साहित रै आकास ।।19।।
मात पिता गुरु देव अर, चौथी सुरसत मात।
इणरी सेवा में रहया, थे हाजर दिन रात'' ।।30।।[18]

(आ) शिक्षा–दीक्षा –

''शिक्षा सेवा में आपने अच्छी ख्याति प्राप्त की है। शैक्षिक प्रशासन में आपकी कार्य कुशलता, श्रद्धा, सम्मान एवं सहयोग से जुड़ी रही है। सभी जगह आपका कार्यकाल सबको प्रभावित करने वाला रहा है। आपका व्यक्तित्व सभी को प्रभावित करने वाला रहा है। इसी के फलस्वरूप आप जिला प्रधानाध्यापक, वाक्पीठ के उपाध्यक्ष पद पर कई बार चुने गए। आप जिला शिक्षा अनुसंधान वाक्पीठ झुंझुनूं के उपाध्यक्ष भी रहे। शोध खोज में आपकी पैनी दृष्टि ने अनेक शैक्षिक विषयों का गम्भीरता से सर्वेक्षण किया।

शिक्षा सेवा में भी आपकी साहित्य–साधना व रचना धर्मिता उल्लेखनीय रही है। आप सभी मायनों में एक विलक्षण व्यक्तित्व है। आपके आंतरिक व बाह्य जीवन मे एकरूपता दिखाई देती है। आप मे जीवन के प्रति असीम आस्था व अनुराग के कारण जीवन्तता व क्रियाशीलता है। आपके कंधों पर एक गौरवशाली देश के मूल्यों और परम्पराओं का परचम दुनियाभर मे फहराने की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी है। आप हमारे लिए साहित्य व संस्कृति के अनुपम कोष है।

---

13. उजास (डॉ. उदयवीर शर्मा : एक संक्षिप्त परिचय से उद्धृत) लेखक नरेश वर्मा

17. उदयवीर जस शतक – लेखक श्री रामजीलाल कल्याणी, पृ. 3 एवं 2

शिक्षा अनुसंधान विषयक अनेक पत्रों का वाचन आपने किया है, जो सदैव सबको प्रभावित करने वाला रहा है। शैक्षिक कार्यो पर आपकी कुशल लेखनी सदा गतिशील रही है।

विभागीय प्रकाशनों में आप एक नियमित लेखक रहे हैं। शैक्षिक कार्यो के कुशल सम्पादन के लिए जिला शिक्षा प्रशासन झुंझुनुं द्वारा आपको अनेक बार प्रशंसा पत्र दिए गए हैं।''[19] शिक्षा विभाग मे रहते हुए आपने राजकीय सेवा, समाज सेवा और साहित्य सेवा मे भी अपनी लेखनी से निरन्तर लगे रहें ।

आप साहित्य सेवा मे अपना निरन्तर योगदान देना चाहते रहे है, इसलिए शिक्षा सेवा में रहते हुए आपने साहित्य साधना को अनवरत गतिशील बनाए रखा। आपने साहित्य की अनेक विधाओं में यथा– कविता, निबंध, शोध–आलेख, अनुवाद, सम्पादन–प्रकाशन , समीक्षा, भूमिका व प्रस्तावना, पत्रवाचन, साहित्यिक गोष्ठियों मे भाषण आदि मे महत्त्वपूर्ण रचनात्मक कार्य कियें है। आप विभिन्न संगठनों मे महत्त्वपूर्ण पदों पर रहे है। जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार दिया जा सकता है–

1. जिला शिक्षा अनुसंधान वाक् पीठ, झुंझुनूं के आप पाँच वर्षों (1985–90) तक अध्यक्ष रहे तथा आपने शिक्षा अनुसंधान विषयक अनेक पत्रों का लेखन एवं वाचन किया ।
2. पाँच वर्षों तक (1985–90) तक आप जिला स्तरीय प्रधानाध्यापक वाक् पीठ (माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर) झुंझुनूं के अध्यक्ष रहे।
3. विभागीय प्रकाशनों में राजस्थानी रचना संग्रह के लिए आपने नियमित लेखन कार्य किया।
4. अनेक शैक्षिक विषयों पर लेखन प्रकाशन।
5. शैक्षिक कार्यों के कुशल सम्पादन के लिए जिला शिक्षा प्रशासन झुंझुनूं द्वारा आपको अनेक बार प्रशंसा पत्र प्रदान किए गए।
6. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर द्वारा माध्यमिक कक्षाओं के लिए विशेष हिन्दी विषय हेतु पुस्तक 'त्रिधारा' पाठ्य पुस्तक के रूप में सत्र 1984–85 से स्वीकृत हुई।
7. राज्य शिक्षा अनुसंधान संस्थान, उदयपुर के सहयोग से सर्वेक्षण कार्य का प्रकाशन करवाया।

———————

19. उजास (डॉ. उदयवीर शर्मा : एक संक्षिप्त परिचय से उद्धृत) लेखक नरेश वर्मा

इस भाँति आपने शिक्षा के क्षेत्र में भी अच्छी लोकप्रियता प्राप्त की तथा आपका साहित्यिक गौरव शिक्षा जगत में भी उन्नत व सदैव प्रभावपूर्ण रहा। मायड़ भाषा राजस्थानी मे मोबी सपूत व हिन्दी के वरिष्ठ विद्वान डॉ. उदयवीर शर्मा का कृतित्व उल्लेखनीय और सराहनीय है।

''आपकी शिक्षा–सेवा के लिए श्री अमोलकचन्द जाँगिड़ ने लिखा है कि ''आप राजस्थान के सचेतक शिक्षाविद, आदर्श शिक्षक व प्रभावी अभिशंसित प्रशासक रहे हैं।''[20] शिक्षा–सेवा मे भी आपकी साहित्य साधना व रचना धर्मिता अभिवंदनीय रही है। आप **युगदृष्टा, युगसृष्टा और युगधर्म** का निर्वाह करने वाले **युगधर्मा** रहे है।

साहित्य जगत में आपकी ख्याति सदैव बनी रही है। आप सन् 1950 से ही सक्रिय साहित्य से जुड़ गये थे। आपकी सक्रियता ने आपको अनेक साहित्यिक संस्थाओं से जोड़ दिया । आपकी लोकप्रियता सदैव अग्रसर रही जिसका प्रमाण अग्रांकित सूची से प्राप्त होता है–

सदस्यता एवं पद

1. आप सन् 1957 से राजस्थान साहित्य समिति, बिसाऊ के उपमंत्री रहे तथा अब मंत्री हैं और इस समिति से प्रकाशित होने वाली 'वरदा' त्रैमासिक पत्रिका के सहायक हैं।
2. आप सन् 1976 से तरुण साहित्य परिषद बिसाऊ के साहित्य मंत्री है। आपके निर्देशन में यह संस्था गतिशील है।
3. डॉ. उदयवीर शर्मा राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर की सरस्वती सभा के पिछले पाँच वर्षों (80–85) तक सदस्य रह चुके हैं।
4. आप राजस्थानी भाषा साहित्य संगम बीकानेर की कार्यकारिणी के सम्मानित सदस्य भी पाँच वर्षों (80–85) तक रहे हैं।
5. आप केन्द्रीय साहित्य अकादमी, दिल्ली के राजस्थानी एडवाइजरी बोर्ड के सम्मानित सदस्य (85–90) रहे हैं, जो शेखावाटी क्षेत्र के लिए एक गौरवमयी बात है।
6. राजस्थानी साहित्य संस्थान, झुंझुनूं (राजस्थान) के आप अध्यक्ष हैं। आपके मार्गदर्शन में यह संस्था गतिशील है।
7. राजस्थान पेंशनर समाज उपशाखा बिसाऊ के संरक्षक रहें है।

---

20. ज्ञानोदय स्मारिका (स्वर्ण जयंती विशेषांक, 1995) सं. अमोलकचन्द जाँगिड़ पृ. 118

8. 'स्वाध्याय' (साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था) नवलगढ़ (झुंझुनूं) के आप परामर्शदाता हैं।
9. शेखावाटी साहित्य कला एवं संस्कृति अकादमी, लक्ष्मणगढ़ (सीकर) के आप संयुक्त सचिव हैं। आपकी सक्रियता व सच्ची लगन से ही इस संस्था के गौरव की श्रीवृद्धि हुई है।
10. आप राष्ट्र साहित्य शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर (राजस्थान) के प्रदेश–स्तरीय परामर्शदाता है।
11. बिरला शेखावाटी संग्रहालय परामर्श समिति, पिलानी के आप एक सक्रिय सदस्य हैं।
12. आप राजस्थान राज्य भारत स्काउट व गाइड स्थानीय संघ नवलगढ़ के सहायक जिला कमिश्नर रहे हैं।
13. श्रीमती अमृत पूजारी राजस्थानी साहित्य पुरस्कार समिति बिसाऊ (झुंझुनूं) के आप कुशल संयोजक हैं।
14. राजस्थानी भाषा एवं साहित्य परिषद, नवलगढ़ के आप अध्यक्ष हैं। यह एक नव गठित संस्था (स्थापना 17.11.1996) है। इस संस्था ने आपके कुशल एवं अनुभव सिद्ध निर्देशन में अपने अनेक कीर्तिमान स्थापित किये है। ऐसा विश्वास किया जा सकता है।
15. डॉ. मनोहर शर्मा साहित्य, संस्कृति एवं कला मंच बिसाऊ(झुंझुनूं) के संरक्षक रहें है।
16. डॉ. अमोलक चन्द जांगिड़ साहित्य एवं कला मंच बिसाऊ(राज.) के संरक्षक रहे है।
17. श्री चन्द्र सागर दिगम्बर जैन पुस्तकालय बिसाऊ(झुंझुनूं) अध्यक्ष।

आपने अनेक पदों को सुशोभित करके अपनी सेवा अर्पित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। आप लम्बे समय से 'वरदा' त्रैमासिक शोध पत्रिका के कर्ताधर्ता है। आपने अध्यापन के साथ–साथ उच्चकोटि के साहित्य साधक है। आप विद्यालय पत्रिका 'सौरभ' के संपादक रहे है।

पुरस्कार एवं सम्मान

''डॉ. उदयवीर शर्मा साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की है जिनमें कुछ प्रकाशित हो चुके हैं तथा कुछ अप्रकाशित ग्रन्थ हैं। आपके काव्य सम्मानित भी हो चुके हैं। आपका 'सूंटो' ऋतु काव्य 'राजस्थानी ग्रेज्यूएट्स नेशनल सर्विस ऐसोशिएसन, बम्बई के द्वारा 30 नवम्बर, 1982 को पुरस्कृत हो चुका है। गणतन्त्र दिवस सन् 1983 पर आपको अपनी साहित्य के क्षेत्र में एक उपलब्धि है। आप

हिन्दी दिवस सन् 1984 पर हिन्दी साहित्य संसद, चूरू द्वारा पदक, प्रशस्ति पत्र, शाल आदि से पुरस्कृत एवं सम्मानित हुए।

''साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मंच 'संदर्श' नवलगढ़ ने आपकी विशिष्ट साहित्यक सेवाओं के लिए आपको दिनांक 16.12.1984 को अभिन्नदन पत्र, शाल संस्था का प्रतीक चिह्न मयूर आदि भेंट कर सम्मानित एवं पुरस्कृत किया। राजस्थान शिक्षक संघ, जिला शाखा झुंझुनूं द्वारा कर्तव्यनिष्ठ शिक्षक के रूप में राजस्थान सरकार के यातायात मंत्री माननीय पद्मश्री शीशराम ओला द्वारा 19.9.86 को आपका हार्दिक स्वागत कर अभिनन्दन पत्र भेंट किया।

दिनांक 5.9.90 को नेहरू सेवा समिति बिसाऊ द्वारा शाल, मान पत्र, श्रीफल एवं सम्मान राशि से आपको सम्मानित किया गया। श्री तरुण साहित्य परिषद, बिसाऊ द्वारा 6. 12.90 को शाल, चाँदी का श्रीफल, भेंट राशि, प्रशस्ति पत्र, उदयवीर जस शतक आदि भेंट कर नागरिक अभिनन्दन किया गया। गौशाला बिसाऊ के शताब्दी समारोह के अवसर पर रजत सिक्के द्वारा आपको सम्मानित किया गया।[21]

श्री द्वारिका सेवानिधि ट्रस्ट जयपुर द्वारा श्रीमती मन्नी देवी जोशी पुरस्कार सन् 1992 उत्कृष्ट राजस्थानी साहित्य सेवा के लिए दिनांक 27.9.92 को आपको दिया गया तथा श्रीमती विद्यापाठक, मंत्री, राजस्थान सरकार द्वारा पुरस्कार राशि, शाल, प्रशस्ति पत्र से सम्मानित एवं अलंकृत किया गया। आप सामाजिक एवं सांस्कृतिक मंच 'चेतना' नवलगढ़ द्वारा दिनांक 28.9.94 को सम्मानित एवं अलंकृत हुए।

शेखावाटी गद्य 'पाक्षिक पत्र' नवलगढ़ के सहयोगी साहित्यकार के रूप में दिनांक 26.11.94 को रजत मुद्रा (सिक्का) श्रीफल शाल आदि से आप सम्मानित एवं अलंकृत हुए। स्व. फूलचन्द बांठिया पुरस्कार से विशिष्ट साहित्यकार के रूप में दिनांक 18.1.1996 को आप सम्मानित एवं अलंकृत हुए। यह सम्मान व अलंकरण माननीय शिक्षा मंत्री राजस्थान सरकार श्री गुलाबचन्द जी कटारिया द्वारा हिन्दी विश्व भारती, बीकानेर के तत्त्वाधान में दिया गया। शेखावाटी आंचलिक साहित्यकार समारोह, उदयपुरवाटी (झुंझुनू) में आयोजित दिनांक 2–3 नवम्बर, 1996 को विशिष्ट साहित्यकार के रूप में आपको सम्मानित एवं अलंकृत किया गया।

---

21. डॉ. उदयवीर शर्मा (संक्षिप्त परिचय : परिचय पत्र से उद्भूत अंश)

आपने अपने जीवन व रचनाओं को सर्वजनहिताय – सर्वजनसुखाय की मंगलमयी भावना को आत्मसात् करते हुए अर्थवान बनाने की सम्पूर्ण कोशिश की है और पूर्णरूप से सफल भी रहे है।

अब तक आपको अनेक साहित्यिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया जा चुका है। शेखावाटी अंचल तथा बाहर के अनेक स्थानों से आपको अनेक पुरस्कार मिल चुके है, जो आपकी सफल साहित्यिक साधना के द्योतक हैं। आप एक मौन तथा कर्त्तव्यनिष्ठ साहित्यकार हैं। आपका साहित्य के प्रति समपर्ण भाव ही आपकी सफलता का राज है।

विशेष अभिरूचि

1. प्राचीन साहित्य का सम्पादन प्रकाशन तथा उसकी समीक्षा करना।
2. लोक साहित्य का संकलन, सम्पादन और प्रकाशन ।
3. मौलिक लेखन राजस्थानी में कविता, कहानी, एकांकी, ललित निबन्ध आदि का लेखन।
4. राजस्थानी संस्कृति विषयक अनुसंधान।
5. राजस्थानी भाषा का साहित्यिक स्वरूप।

विविध

1. 'वरदा' त्रैमासिक शोध पत्रिका, बिसाऊ के सह सम्पादक। यह 1958 से नियमित प्रकाशित हो रही है।
2. 1950 से 1990 तक अध्यापन के साथ–साथ साहित्य सेवा।
3. 1990 से नियमित साहित्य साधना में संलग्न हैं।
4. जिला स्तरीय स्काउट रैली, जिला झुंझुनूं (28 नवम्बर 1988 से 2 दिसम्बर, 1988 तक) के उप शिवराधिपति रहे हैं।
5. राज्य स्तरीय अनेक शोध पत्रिकाओं में शताधिक लेख तथा अन्य रचनाएँ प्रकाशित (विशेषतः मधुमती, वरदा, राजस्थान भारती, मरुभारती, राजस्थानी गंगा, जागती जोत, मरुवाणी नैणसी, विणजारो, लाडेसर आदि)।
6. अनेक साहित्यिक सम्मेलनों तथा आसनों से अभिभाषण।
7. जिला स्तरीय स्काउट रैली जिला झुंझुनूं (26 नवम्बर, 1991 से 30 नवम्बर,1991 तक) के शिविराधिपति रहे हैं।

8. आपके प्रधान सम्पादन में प्रकाशित सौरभ (बिसाऊ विद्यालय पत्रिका) का बिसाऊ विशेषांक (सन 1985–86) राज्य स्तरीय प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान पर रहा, सम्मानित हुआ।
9. अनेक पुस्तकों तथा पत्र–पत्रिकाओं का विमोचन आपके कर कमलों से हुआ है।

(इ) सर्जनात्मकता के विविध आयाम : एक परिचय

डॉ. उदयवीर शर्मा बहुविध प्रतिभा के धनी हैं। इन्होंने साहित्य के विविध रूपों में सृजनात्मक कार्य किये हैं। आपने इतिहास लेखन, राजस्थानी ऋतु काव्य, राजस्थानी लघुकथाएँ, प्रशस्ति काव्य आदि अनेक क्षेत्रों में लेखनी द्वारा विविध रंगों को भरा है। राजस्थानी लोक साहित्य, प्राचीन साहित्य, आधुनिक साहित्य, एकांकी, कहानी, ललित निबन्ध आदि अनेक विषयों पर लेखनी चलाई है इनकी रचनाएँ विविध पत्र–पत्रिकाओं में छपती रही हैं, जिनकी संक्षिप्त रूप रेखा निम्न प्रकार से प्रस्तुत की जा सकती है। –

(क) प्रकृति काव्य
(ख) प्रशस्ति काव्य
(ग) संबोधन काव्य
(घ) मुक्तक काव्य
(ड.) निबन्ध लेखन
(च) इतिहास ग्रन्थ
(छ) समीक्षा ग्रन्थ
(ज) संग्रह–सम्पादन

(क) प्रकृति काव्य –

(1) डॉफी (1973) राजस्थानी ऋतु काव्य।
(2) सूँटो (1980) राजस्थानी ऋतु काव्य,(पुरस्कृत)।
(3) मरुधर री महक

(ख) प्रशस्ति काव्य–

(1) श्रीलाल शतक (1983) राजस्थानी पद्य।
(2) मनोहर शतक (1988) राजस्थानी पद्य।
(3) गंगाधर शतक (वि.सं. 2044) राजस्थानी पद्य।

(4) सुरजन सुजस (1992) राजस्थानी पद्य।

(5) मरुधर शतक (1999)

(6) श्रद्धा शतक (2003)

(7) विद्याधर सौरभ शतक (2004)

(8) श्रद्धा सौरभ शतक (2005)

(9) वामन बण्यों विराट (2007)

(ग) संबोधन काव्य–

(1) मोलकै रा सोरठा (1996)

(घ) मुक्तक काव्य

(1) राजस्थानी चौपदी (2001)

(ड.) निबन्ध लेखन

(1) निरवाळा निबन्ध (2008)

(अ) विस्तृत स्वतंत्र लेख (मुख्य–मुख्य)

(1) राजस्थानी हरजसों में राधा कृष्ण

(2) पुत्र जन्म के गीत (राजस्थानी लोक गीत)

(3) हाँसलो (राजस्थानी लोक गीत)

(4) पीपली

(5) कार्तिक स्नान के भजन (राजस्थानी लोक भजन)

(6) कविवर राम नाथ कविया की साहित्य साधना

(7) कृपाराम खिड़िया और उनका साहित्य

(8) डॉ. मनोहर शर्मा के काव्यों में प्रकृति चित्रण

(9) झुंझुनूं जिले के प्राचीन कवि और उनका साहित्य

(10) शेखावाटी का ख्याल साहित्य

(11) शेखावाटी अंचल के नीति–काव्य

(12) किरत्यां रो झूमकों भाग 1(राजस्थानी लघुकथा, 1982)

(13) किरत्यां रो झूमकों भाग 2(राजस्थानी लघुकथा, 2008)

(14) तिरवेणी (रेखाचित्र, लघुनिबन्ध, बातचीत, 2011)

(15) यादां री कोथळी रा माणक–मोती (राजस्थानी संस्मरण, 2011)

(16) भावां रो झूमकों (राजस्थानी ललित गद्य, 2012)

(ब) पत्र वाचन एवं विस्तृत भाषण (मुख्य–मुख्य)

(1) रवीन्द्र शताब्दी समारोह पर बिसाऊ में आयोजित उपनिषद् में रवीन्द्र के एकांकियों में हास्य और व्यंग्य विषय पर पत्र वाचन।(1961)

(2) नगरश्री चूरू द्वारा आयोजित 'रजत जयन्ती' समारोह में ख्याल साहित्य विषयक संगोष्ठी में शेखावाटी का ख्याल साहित्य विषय पर पत्र वाचन (13 जनवरी 1991)

(3) नगरश्री चूरू द्वारा आयोजित शेखावाटी के संत और उनका साहित्य संगोष्ठी (दिनांक 23–24 मार्च, 1991 तक) में रैवासा पीठ के रसिक सम्प्रदाय के कवि और उनका साहित्य विषय पर पत्र वाचन (24 मार्च, 1991)

(4) राजस्थानी भाषा, साहित्य और संस्कृति अकादमी बीकानेर के अन्तर्गत आयोजित आंचलिक साहित्य समारोह (20–21 मार्च, 1993) चिड़ावा महाविद्यालय में शेखावाटी का ख्याल साहित्य विषय पर पत्र वाचन ।

(5) गौशाला शताब्दी समारोह बिसाऊ के अवसर पर गौसंवर्द्धन साहित्य पर पत्र वाचन।

(6) साहित्य परिषद् लक्ष्मणगढ़ (सीकर) में सुकवि कृपाराम खिड़िया और उनका साहित्य विषय पर पत्र वाचन।

(7) संदर्श, नवलगढ़ के अन्तर्गत साहित्य अकादमी उदयपुर (राजस्थान) के तत्त्वाधान में आयोजित संगोष्ठी में 'साहित्य और पाठक' विषय पर पत्र वाचन।

(8) राजस्थानी साहित्य संस्थान झुंझुनूं के द्वारा आयोजित शेखावाटी आंचलिक साहित्य समारोह में झुंझुनूं जिले के कवि और उनका साहित्य विषय पर पत्र वाचन।

(9) शेखावाटी आंचलिक समारोह उदयपुरवाटी (झुंझुनूं) में 'शेखावाटी अंचल का आधुनिक गद्य साहित्य' विषय पर पत्र–वाचन (2 नवम्बर, 1996)

(10) राजस्थानी भाषा एवं साहित्य परिषद् नवलगढ़ (झुंझुनूं) की स्थापना पर राजस्थानी साहित्य की एक झलक विषय पर अध्यक्षीय विस्तृत भाषण (17 नवम्बर, 1996)

(11) शेखावाटी का प्राचीन साहित्य विषय पर लक्ष्मणगढ़ में पत्र–वाचन।

(स) रेडियो वार्ता (मुख्य–मुख्य)

(1) साम्प्रदायिक सद्भाव के प्रतीक बाबा रामदेव

(2) स्वतन्त्रता संग्राम माय नारी री भूमिका

(3) आधुनिक समाज माय घर री लालसा

(4) प्राचीन ग्रन्थां माय फागण रो वर्णन

(5) धरा की पुकार : हम और हमारा पर्यावरण

(च) इतिहास ग्रन्थ

(1) बिसाऊ का संक्षिप्त इतिहास (1964)

(2) शेखावाटी का इतिहास (1980)

(3) बिसाऊ दर्शन (1980)

(4) बिसाऊ दिग्दर्शन (1988)

(5) बिसाऊ की साहित्य परम्परा और प्रगति (1999)

(6) वीरवर सलहदी सिंह शेखावत (2000)

(7) शेखावाटी का लोकरंग (2000)

(8) शेखावाटी के आधुनिक राजस्थानी साहित्य की संक्षिप्त रूपरेखा (2007)

(छ) समीक्षा ग्रन्थ

(1) शेखावाटी के साहित्य का इतिहास प्रथम खण्ड (1983)

(2) कृपाराम खिड़िया (1990) (साहित्य अकादमी दिल्ली से प्रकाशित),

(3) अम्बू शर्मा कृत किष्किन्धा काण्ड की समीक्षा राजस्थानी में (1991)

(4) अम्बू शर्मा कृत सम्पूर्ण रामायण की समीक्षा राजस्थानी में (1992)

(5) शेखावाटी का साहित्यिक योगदान (1996)

(ज) संग्रह सम्पादन

(1) राधामंगल (काव्य)

(2) डॉ. मनोहर शर्मा अभिनन्दन ग्रन्थ

(3) पीरथीराज सुरजा (जनकाव्य)

(4) एमना कंवर (जनकाव्य)

(5) राजस्थानी व्रत कथाएँ (वरदा में क्रमषः प्रकाशित)

(6) मनोहर महिम (राजस्थानी पद्य)

(7) त्रिधारा (गद्य पाठय पुस्तक)

(8) गळचट (राजस्थानी निबन्ध, लेखक श्री अमोलकचन्द जाँगिड़)

(9) आमारस (जनकाव्य)

(10) बिसाऊ रासौ (बीर काव्य, कवि मीठूलाल)

(11) शेखावाटी साहित्य सन्दर्भ कोष (1996)

(12) डॉ. मनोहर शर्मा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

(13) प्रज्ञातीर्थ डॉ. मनोहर शर्मा स्मृति ग्रंथ (सन् 2000)

(14) मरुधर री मूमल (सन् 2004)

(15) साहित्य साधक डॉ. अमोलक चन्द जॉगिड़ स्मृति ग्रंथ

(झ) **प्रस्तावना व भूमिका लेखन**

(1) प्रेम सुख भजन माला (काव्य, पं. मालीराम इन्दोरिया, हर्ष)

(2) आहिल्या (काव्य, श्री माधव शर्मा, चूरू)

(3) केसर (काव्य, श्री माधव शर्मा, चूरू)

(4) नवलगढ़ का इतिहास (ठाकुर सुरजन सिंह शेखावत, झाला)

(5) शेखावाटी का प्राचीन इतिहास (ठाकुर सुरजन सिंह शेखावत, झाला)

(6) शबरी (काव्य, श्री माधव शर्मा, चूरू)

(7) आयामों के इन्द्रधनुष (पद्य रामस्वरूप परेश, बगड़)

(8) कुसुमाकर (पद्य नवलगढ़ के कवि, सम्पादक श्री सुधाकर)

(9) भावुकता (हिन्दी काव्य, श्री सुधकर श्रीवास्तव, नवलगढ़)

(10) बबूल के फूल (हिन्दी काव्य, श्री सुधाकर श्रीवास्तव, नवलगढ)

(ञ) अनुवाद

(1) मेघदूत (राजस्थानी अनुवाद)

(2) उमर खैयाम की रूबाइयाँ (राजस्थानी अनुवाद)

(3) अनेक कहानियों एवं लेखों का अनुवाद

(ट) अन्य रचनाएँ

(1) राजस्थानी सोरठा सतसई

(2) राजस्थानी चौपदी

(3) मरुधर री महक (राजस्थानी ऋतुकाव्य)

(4) सतियाँ री सौरभ (पद्य कथा)

(5) भावाँ री बानगी (राजस्थानी पद्य)

(6) मूमल (पद्य कथा)

(7) सरधा–सागर (राजस्थानी काव्य)

(8) म्हारो गाँव (राजस्थानी दोहा शतक)

(9) गुरु महिमा (राजस्थानी पद्य)

डॉ. शर्मा राजस्थानी साहित्य सेवा और सृजन में सदैव रत रहे हैं तथा इसके प्रचार–प्रसार को भी अपना लक्ष्य बना रखा है। आप समाज के आम आदमी के प्रति भी बड़े संवेदनशील हैं। आपकी संवेदनशीलता आपकी रचनाओं और व्यवहार में झलकती है। आपने शिक्षा और साहित्य दोनों में समान गति से प्रगति की है। आपके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर ही आपका प्रशस्ति काव्य सन् 1990 में प्रकाशित हुआ। अनेक काव्य रचनाओं के साथ–साथ आपके आज तक लगभग चार सौ शोधपरक तथा विवेचनात्मक लेख प्रकाशित हो चुके हैं। आपके एकांकी एवं ललित निबन्ध भी अनेक पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। पत्र–पत्रिकाओं तथा पुस्तकों पर शताधिक समीक्षाएँ और समीक्षात्मक लेख आप अद्यावधि प्रकाशित करवा चुके हैं। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान अजमेर की सीनियर हायर सैकण्डरी की कक्षा 12 के लिए राजस्थानी विषय की पाठ्य पुस्तक 'राजस्थानी पद्य' में एक विशिष्ट कवि के रूप में आपका एक पाठ (पद्य) संकलित सम्पादित है। राजस्थानी साहित्य के इतिहास में एक कुशल कवि समर्थ समीक्षक तथा सुविख्यात लघु कथा लेखक के रूप में आपका एक विशिष्ट स्थान है।

डॉ. शर्मा एक सुदीर्घ साहित्य–सेवी और लेखनी के कुशल साधक हैं। इनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से प्रभावित होकर अनेक विद्वानों साहित्यकारों तथा कवियों ने डॉ. शर्मा जी की प्रशस्ति में अपने हृदय के भाव गद्य एवं पद्य दोनों रूपों में प्रकट किए हैं जिनको उनके संग्रह में सुरक्षित पत्रों तथा अन्य स्वरूपों में देखा जा सकता है। यहाँ केवल कतिपय पद्यात्मक अभिव्यक्तियों को ही प्रस्तुत करना संगत समझा गया है।

(1) प्रख्यात विद्वान और अनुभव सिद्ध कवि एवं मर्मज्ञ साहित्यकार **डॉ. मनोहर शर्मा** ने अपनी 'मरूवाणी रा मोर' पुस्तक में डॉ. शर्मा जी के लिए लिखा है –

'वरदा' रो सेवक बिमळ, उदयवीर विख्यात।
लिख 'इतिहास' सुहावणो, अविचळ राखी बात।। 102।।

उदयवीर तैरू अथक, मन में अमित उठाह।
जळधारा बाधा प्रबळ, रोक न पावै राह।। 103।।

(2) राजस्थानी के समर्पित सपूत विद्वान साहित्यकार तथा सुदीर्घ साहित्य सेवी **श्री रावत सारस्वत, जयपुर** ने डॉ. शर्मा जी के लिए अपने भाव इस प्रकार प्रकट किए हैं।–

''लघु कथवाँ थे लिखी पंचतन्त्र री ढ़ाळ।
गैरी पैनी ओपती , बाँधी रस री पाळ''।। 1।।

''लिखियों थे इतिहास, शेखावाटी रो सजळ।
पूरै म्हारी आस, और लिखो थे सावठो''।। 2।।

''फैलै साहित बेल, थे सींचोनित रस घणो।
यो साधन रो खेल, खेलणियाँ ही खेल सी''।। 3।।

''दिग्दर्शन नै महै पढ़्यो, बाँच बाँच नै वाच।
मन हरख्यो आसा भरी, दरपण री ज्युं साँच''।। 4।।

''उदयवीर थे धन्य, निज भासा चावो घणा।
उझळै म्हारो मन्न, धन–धन कैतां चाव सूं''।। 5।।

(3) **आचार्य बद्री प्रसाद सांकरिया 'बल्लभ'** विद्यानगर ने अपनी अग्रांकित पंक्तियों में डॉ. उदयवीर शर्मा को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है। आप मर्मज्ञ विद्वान राजस्थानी शब्द कोष के संग्राहक, सम्पादक और सुप्रतिष्ठित साहित्यकार थे।

''थे वरदा रा लाडला, वरदा थारी जोत।
इबछळ राखो साधना, उजळावो कुळ–गोत''।। 1।।

''गुरु मनोहर–सा मिल्या, लूँठो थारो भाग।
साहित–सागर में रमो, ले जीवण् रस–राग''।। 2।।

''थारी पोथ्याँ म्हे पढ़ी, आयो धण आनंद।
मणि माणक–सा पोदियो, मुँटो 'घणो विलंद''।। 3।।

(4) 'संदर्ष' नवलगढ़ के द्वारा डॉ. उदयवीर शर्मा का सम्मान किए जाने के सुअवसर पर लोकप्रिय कवि एवं ख्याति प्राप्त साहित्य–सपूत **श्री बजरंगलाल पारीक** 'लाल' नवलगढ़ ने डॉ. शर्मा जी के प्रति अपनी भावाभिव्यक्ति इस प्रकार प्रस्तुत की जिसमें आत्मीयता के दर्शन होते हैं।

''उदयवीर सा मित्र मनोहर, शेखावाटी रा विदवान।

थारो स्वागत करां चाव सूं, सुरसत रा थे पुत्र महान''।। 1।।

''नवल धरा आ नगरी धन है, धन म्हे हॉ म्हारो संदर्ष ।
थे म्हारै मनड़े रा प्यारा, आज मोकळो हिवड़ै हर्ष'' ।। 2।।

''जलम भौम अर मायड़ भासा, ताई थारो निरमळ हेत।
थारै ग्रथां में गरणावै लहरावै ज्यूं सुवरण खेत''।। 3।।

''वरदा' थारी थे 'वरदा' रा, एकाकार बण्यों यो रूप ।
साहित री सौरभ सरसावै, थां सूं बणियों रूप अनूप''।। 4।।

''मन फूलड़ा भर चाव समरपॉं, कुशल लेखनी नै म्है आज।
यो 'संदर्ष नवलगढ़ थानै, पहरावै कीरत–ताज''।। 5।।

(5) सुप्रसिद्ध निबंध लेखक कुशल कहानीकार और विद्वान साहित्य सेवी श्री **अमोलकचन्द जाँगिड़ बिसाऊ** ने डॉ. शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रभावित होकर अपने आत्मीय भाव इस प्रकार प्रकट किए हैं–

''गजब गुणी सीधो सरल, मन रो धणो उदार।
उदयवीर साथी सहज, साईना रो प्यार'' ।। 1।।

''साथी तो मिलिया घणा प्रगटोयो घण हेत।
उदयवीर सो ना मिल्यो, साईना रो हेत ''।। 2।।

''लेखक लाडेसर घणो राखै तीखी दीठ।
थारै भावॉं में सदा ओवै रंग मजीठ ''।। 3।।

''मन मेळू थां सा मिल्यां, सफल हुवै सै काम।
कारज सारै मोद सूं, रहकर सदा अनाम''।। 4।।

''साहित साधक पारखी, कलम घणी मतिमान।
धन है थारी भावना, जनम भौम रा मान''।। 5।।

(6) युवा कवि और विचारक **श्री शंभु शर्मा बिसाऊ** ने डॉ. शर्मा जी के लिए कहा है। –

''उदयवीर ने दिग्दर्शन की, कथा रची है भारी।
सुधि अमोलक ग्यान संजोयो, बातें न्यारी–न्यारी''।। 1।।

''जो बीत गए सदियों पहले उनकी जोत जलाई।
जो अतीत में बढ़े नगर में उनकी गाथा गाई''।। 2।।

''नगर बिसाऊ का हर कोना, छाना तुमने मिलकर।
तरुण साहित्य के तरुणों ने, बढ़–बढ़कर मिल–मिलकर''।। 4।।

''गीत मनोहर की बंषी की, सुनकर राग बनाई।
'उदय' अमोलक मिल दोनों ने, मोहक राग सुनाई''।। 7।।

''धन्यवाद यूं तुम दोनों को, दिग्दर्शन है न्यारा।
शुभकरण है भल शुभ चिन्तक, 'उदय' अमालक प्यारा''।। 8।।

(7) ''युवा कवि **मोहन सिंह बारहठ**, बिसाऊ ने डॉ. उदयवीर की प्रशंसा मे कहा है–

''जलम भोम रा लाडला, मायड़ रा आणंद।
नगर बिसाऊ में हुआ, 'उदय' अमोदकचन्द''।। 1।।

''माँत मौमरी आतमा, पूत पवित्र सुदर्षण।
थे दरसाई ग्रन्थ में, लूठोयो दिग्दर्षण''।। 2।।

''भल लखियों माँ रो बिड़द, उमड़यों घणो हुलास।
गभ्यो–गरण्यो मोद मे, 'दान' 'ग्यान' आवास''।। 3।। [22]

(8) ''सुप्रसिद्ध इतिहासकार, मर्मज्ञ विद्वान लेखक एवं **सुकवि ठाकुर सुरजनसिंह जी शेखावत, झाझड़** एक सुदीर्ध साहित्य साधक हैं। आपने डॉ. उदयवीर शर्मा के सम्बन्ध में अपने पत्र दिनांक 25.5.94 के माध्यम से में लिखा है कि आप एक सुहृदय व्यक्तित्व के धनी है।

''उदयवीर साँचो सुहृय, हित चिंतक बिन हेतु।
अभिनव मित्र म्हारो सदा, चलै धर्म री सेतु।।''

''यदनि मै सामान्य जन नहीं प्रशंसा योग।
साहित साध्यो अलप सो, भावी प्रगल संजोग ।।

---

22. उदयवीर जस शतक – लेखक श्री रामजीलाल कल्याणी, पृ. 10–12

"तउ मोही आदर दियो, घणो करयो विख्यात।
उदयवीर तव महानता,गिरि सम उच्च लखात।।

"अति कृतग्य मै आपका, गुण ग्राहक नर–वीर ।
हुवो शतायु विप्रवर, सरसा उदयवीर।। [23]

उक्त उदाहरणों के अतिरिक्त अनेक विद्वानों की भावाभिव्यक्तियाँ डॉ. शर्मा जी के संग्रह में देखी जा सकती है। परन्तु उन सबका प्रयोग यहाँ करना सम्भव नहीं था। इस कारण कतिपय उदाहरण ही यहाँ प्रस्तुत कर संतोष किया गया है तथा उनके व्यक्तित्व और कृतित्व की झलक को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

निष्कर्ष –

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि डॉ. उदयवीर शर्मा एक कुशल प्रतिभा के धनी है, साथ ही अपनी सहनशील मनोवृत्ति एवं धैर्यशीलता की दृष्टि से विख्यात हैं। आपने सदैव अपना प्रमुख लक्ष्य साहित्य साधना को ही माना है लेकिन सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक गतिविधियों में भी आपने अपूर्व योगदान दिया है।

आपके लिए लिखा गया है कि "हिन्दी एवं राजस्थानी के सुप्रतिष्ठित विद्वान एवं साहित्यकार डॉ. उदयवीर शर्मा पिछले चार दशकों (1950) से समर्पित भाव से साहित्य साधना में लगे हुए है। आप राजस्थानी के अधिकारी विद्वान, ख्याति प्राप्त कवि, कहानीकार, लघु कथाकार, निबन्धकार तथा लोक साहित्य के अन्वेषक व संग्रहकर्त्ता है।"[24] आप उन मनीषियों में से है जो हमें यह मानुष–जन्म के कैसे सफल व सकारथ बनायें।

डॉ. शर्माजी का पारिवारिक, सामाजिक एवं साहित्यिक व्यक्तित्व अनूठा, प्रशंसनीय एवं आकर्षक है तो आपका कृतित्व भी रोचक, रंजक, सरस और लालित्य पूर्ण है। आप एक अन्तर्मुखी साहित्यकार के व्यक्तित्व के धारक हैं। इसलिए दुरंगी दुनिया से सदा दूर रह कर सदैव साहित्य–साधना में लीन रहते हैं। इन्हीं भावों का समर्थन **श्री रामजीलाल कल्याणी** ने अपने **'उदयवीर जस शतक'** में किया है। वे डॉ. शर्मा के लिए लिखते हैं। –

"रचना धरमी पारखी, गुणी सुधी विद्वान ।
जलमभौम रा लाडला, साहिलत में सुरग्यान।।

---

23. यह पत्र डॉ. उदयवीर शर्मा के संग्रह में सुरक्षित है उनके सौजन्य से ही इस पत्र का उपयोग किया गया हैं। लिखने वाले – ठा. सुरजन सिंह शेखावत

24. ज्ञानोदय स्मारिक 1995 सं श्री अमोलकचन्द जाँगिड़ पृ. 118

शिक्षा साहित में रम्या, दिढ नेमी तम–चीर ।
मोद मान रस बाँटियों ग्यान नदी रै तीर ।।

इमरत ग्यान बंटोरियों, जागी अन्तर जोत ।
शिष्याँ रामन जगमग्या, जोत जगाई जोत।।

शिक्षा साहित क्षेत्र में, चाल्या जे विश्व ास ।
मुद मंगल सूं बाँटरया, अपणी जीवण रास।।

अणथक थारी लेखनी, अणथक चलणो काम।
अणथक म्हैनत करणियाँ, पावै जग में नाम ।।

धन–धन थारी लेखनी, धण–धण थारा भाव।
धन–धन सादो जीवणो, धन–धन ग्यान लगाव।।[25]

वस्तुतः डॉ. उदयवीर शर्मा का व्यक्तित्व सहृदयता, संवेदनशीलता, सहजाभिव्यक्ति, परोपकारिता, सहिष्णुता, गुण ग्राहयता, रचनाधर्मिता आदि अनेक गुणों से परिपूर्ण है। बस आपके लिए इतना ही कहना है –

कै मांडू कै छोड द्यू, थे गुण रा भण्डार ।
डॉ. उदयवीर शर्मा ने, झुक–झुक करूं प्रणाम।।

---

25. उदयवीर जस शतक – लेखक रामजीलाल कल्याणी, पृ. 6–9

तृतीय–अध्याय

रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : पद्य 76–123

(क) प्रकृति काव्य

(ख) संबोधन काव्य

(ग) मुक्तक काव्य

(घ) भक्ति काव्य

(ङ) कथा काव्य

(च) विविध

तृतीय–अध्याय

रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : पद्य

डॉ. उदयवीर शर्मा का साहित्य गद्य एवं पद्य दोनों विधाओं में प्रचुर मात्रा में है। आपने राजस्थानी भाषा में रचनाएँ की है और हिन्दी में भी लेखनी चलाई है। आपने अनुसंधानात्मक एवं परिचयात्मक दोनों तरह के अनेक लेखों से अपना सहयोग देकर साहित्य के भण्डार को भरा है। आपने जहाँ मौलिक गद्य एवं पद्य रचना की है वहाँ अनुवादात्मक कार्य भी किया है।

राजस्थानी लोक साहित्य के क्षेत्र में काफी महत्त्वपूर्ण सामग्री लोक मुख से सुनकर लिपिबद्ध करने में आपने सफलता प्राप्त की है। साथ ही आपने सम्पादन कार्य भी किया है तो साहित्यिक क्षेत्र में कई तरह की भूमिका अदा की है। इन सबसे प्रतीत होता है कि आपकी रूचि हमेशा से साहित्य की ओर बनी रही तथा प्राचीन साहित्य को उजागर करने में भी आपने काफी सफलता प्राप्त की है। आपका रुझान लोक जीवन एवं लोक साहित्य में सदा ही रहा है।

डॉ. शर्मा जी के साहित्य का व्यापक विश्लेषण करने के उद्देश्य से पिछले अध्याय संख्या एक में आपकी रचनाओं का 'वर्गीकरण'[1] प्रस्तुत किया ंगया है। उसी के अनुसार आगे की पंक्तियों में उन रचनाओं का विवेचन किया जा रहा है। प्रत्येक रचना की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं को उजागर करने का पूरा प्रयत्न किया गया है। गद्य–पद्य, समीक्षा, इतिहास, संग्रह–सम्पादन, निबन्ध लेखन, प्रस्तावना, भूमिका, अनुवाद आदि सभी विधाओं की रचनाएँ इस विवेचन में सम्मिलित हैं। अप्रकाशित काव्य ग्रन्थों को भी व्यापक एवं सम्पूर्ण कृतित्व के विश्लेषण की दृष्टि से इसमें सम्मिलित करना संगत समझा गया है।

डॉ. उदयवीर शर्मा सजग कवि और संवेदनशील मनीषी है। आप मातृभाषा और माटी की महक के प्रति समर्पित है। आपने गद्य और पद्य दानों मे समानाधिकार पूर्वक लिखा है । आप आज भी उतने ही सक्रिय जितने युवावस्था मे हुआ करते थे। आपके साहित्य का वर्गीकरण पिछले अध्याय में किया गया है। अब इस अध्याय मे हम पिछले अध्याय संख्या दो के वर्गीकरण के आधार पर रचनाओं का विश्लेषण करेंगें ।

---

1. प्रस्तुत शोध के अध्याय दो में

(क) प्रकृति काव्य

काव्य में प्रकृति चित्रण करना राजस्थानी साहित्य की प्राचीन परम्परा है। अनेक कवियों ने अपने काव्यों में षट्ऋतुओं के वर्णन का अनूठा चित्रण किया है। प्रकृति के मंद–मंद सुगंधित वातावरण का वर्णन करके इस परिवेश में कवियों ने हल–चल मचायी है। प्रायः कवियों ने प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण किया है, परन्तु ऐसे अनेक काव्य हैं, जिनमें बसन्त, वर्षा आदि ऋतुओं का स्वतन्त्र रूप से वर्णन किया गया है। **श्री चन्द्रसिंह राठौड़** ने **'बादली' एवं 'लू'; डॉ. मनोहर शर्मा ने 'गजमोती**'; **श्री महावीर प्रसाद जी जोशी** ने **'बिन्दरावन**'; **श्री सुमेरसिंह शेखावत** ने **'मेघमाळा**' आदि लिखकर राजस्थानी के प्रकृति चित्रण को अत्यधिक गौरवशाली बनाया है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने भी प्रकृति काव्य लिखकर अपना नाम भी इसी क्रम में जोड़ा है। **वास्तव मे प्रकृति ही ऐसा वरदान है जिसका कोई विकल्प नहीं होता।** आपके सभी प्रकृति काव्य स्वतन्त्र एवं प्रकृति में रचे बसे हुए काव्य है। इनमें लोक जीवन की झाँकी, प्रकृति का लालित्य, रोद्र रूप का चित्रण, राजस्थानी रंगत का आनन्द आदि द्रष्टव्य हैं। आपका प्रथम प्रकृति काव्य है डॉफी। डॉ. शर्मा के सहज व सरल काव्य चेतना का आधार प्रकृति ही रही है। उन्होंने सदैव अपने आपकों प्रकृति के सानिध्य में पाया है, और उसकी अनुभूति कों आनन्द व उमंग कें साथ प्रकट किया है।

डॉफी : (1973)

डॉफी डॉ. उदयवीर शर्मा की एक सशक्त राजस्थानी और महत्वपूर्ण ऋतुकाव्य है। जिसमें पौष और माघ माह में राजस्थान मे कडाकै की ठण्ड के साथ–साथ जो तेज हवा चलती उसका सजीव वर्णन किया गया है।

'डॉफी' का तात्पर्य **''उस कंपकपाने वाली तेज थपेड़ों–सा प्रहार करने वाली पवन से है जो शीतवर्धन के साथ ही साथ कहर ढहाने वाली होती है।''**[2] 'डॉफी' एक सशक्त राजस्थानी ऋतु काव्य कृति है। ''संवेदनशील कवि श्री उदयवीर शर्मा ने 'डॉफी' के माध्यम से अपनी काव्यिक अनुभूतियों को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है। इसकी भाषा प्रांजल और प्रवाहमय है।''[3]

——————————

2. डॉफी (राज. साहित्य अकादमी उदयपुर प्रथम खण्ड संस्करण,1973) – डॉ. उदयवीर शर्मा
3. डॉफी (प्रकाशकीय डॉ. देवीलाल पालीवाल, निर्देशक राज. साहित्य अकादमी) डॉ. उदयवीर शर्मा

प्रकृति अपनी अबाध गति से चलती रहती है। गर्मी, तूफान, सर्दी, झंझावत, आँधी आदि अपना प्रभाव जन–जीवन पर डालते हैं। प्रकृति अपना रूप मौसम के अनुकूल ही परिवर्तित कर लेती हे। कभी वह लू में परिवर्तित होती है तो कभी कंपकपाने वाली शीत लहर में अपना विकराल रूप धारण कर लेती है। जिसका प्रभाव मानव, पशु–पक्षी वनस्पति आदि सभी पर पड़ता है लेकिन जब शीत लहर (डॉफी) प्रचण्ड प्रभाव डालती है, तो गरीबों को तो काल का मुँह नजर आता हुआ दिखाई देता है। कवि उदयवीर शर्मा ने अपने 'डॉफी' काव्य में 'डॉफी' का विभिन्न रूपों में चित्रण किया है।

'डॉफी' काव्य के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं। इस काव्य के प्रारम्भिक दोहे हैं–

''डॉफी ठारै जगत नै, छाय धेळती छान।
महैर राख पाछी बुला पवन पूत हनुमान'' ।।1 ।।

'डॉफी' का प्रभाव पेड़–पौधों पर पड़ता है–

''रस भरिया झूमता, खेत बाग बन पहाड़।
खावे डॉफी चाँदडी, भावै घणो उजाड़।। 2।।

'डॉफी' का मानवीकरण करना कवि की प्रतिभा का प्रमाण है। 'डॉफी' 'डाँचळी' मारती हुई फूल व कलियों को चर जाती है–

''डॉफी' मारै डाँचळी, फूल कळी चर फाल।
पीळा पड़िया पानड़ा, कळिया भेंटी काळ'' ।। 3।।

'डॉफी' के स्वरूप का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वह प्रकृति की रंगशाला में सफेद पर्दा तानकर अपना नया रूप दिखाने आती है–

''कुदरतरी रंगसाळ में, तूं घोळो पट तांण।
डाकै डूँगर डूँगरी, नूओं रूप दिखण'' ।। 4।।

'डॉफी' ढूँढ़ने से कहीं नहीं मिलती। पर वह तो सदा खाने को तत्पर रहती है। वह नैत्र हीन होने पर भी सर्वत्र फैल जाती है।

''उणां कूंणा जोविया, डांफी तूं बिन नैण।
ल्हुकण मिल्या ना ठांवड़ा काँपण लाग्या बैण'' ।।23।।

'डॉफी' कान के माध्यम से शरीर में प्रवेश करती है और नाक द्वारा बाहर आती है। यहाँ सर्दी–जुकाम लगने का चित्रण द्रष्टव्य है। 'डॉफी' के वेग का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं–

खुरड़ पगी खाथी घणी, ज्यूं घोड़े असवार।
फिरगी जिन्नै बोइया, ज्यूँ कुलक्खणी नार''।।19।।

'डॉफी' रूपहीन एवं नैणहीन होने के साथ–साथ हृदयहीन भी है–

''धूळ उड़ाती धाड़ती, धाड़ी री ज्यूं धाय।
रोळ गिदोळै रूंखडा, हिय हीणी तूं हाय'' ।।63।।

'डॉफी' के आगमन पर कवि कहता है–

''कातिक मंगसिर काटिया आयो जद सूं पोह।
नागी नांचण लागगी खालड़ियां री खोह'' ।।127।।

'डॉफी' का विकास क्रम–

अनदिखणी बेरो पड़ै, कातिक बाळक रूप ।
पो–माह छळकै, जोवनों गरणावै ज्यूं भूप––।।128।।

'डॉफी' अणरूपी होने पर भी खाने को दौड़ती है तो रूपवती होने पर तो क्या गति करती होगी ?

''अणरूपी नूं खावती रूप मिल्यां के हाल।
कुण सो तेरो ठांयचों, बता–बता दया बाळ''।।163।।

'डॉफी' बिना शरीर वाली है, पर सुबह चोर की भाँति भागती हुई नजर आती है–

डील डोळ ना डाकणी, ठैरण नै नां ढोरा ।
भाजै तू भाखवटै, चंचळ घण ज्यूं चोर।।166।।

'डॉफी' बिना शरीर की होते हुए भी मारक है–

'अणरूपी अमरयो, बणै रूपाळी मर जाय।
डॉफी नै कुण में गिणां आवै पळकै धाय'' ।।167।।

'डॉफी' क्षण में धीरे क्षण में तेज हो जाती है। वह छिप–छिप कर खाल को फाड़ती है–

''छिण हळवाँ छिन तावळी, छिन में नौ नौ ताळ।
छिण में अन्तरधान हो, ल्हुक–ल्हुक फाड़ै खाल।।240।।

'डॉफी' की विविध क्रियाओं में उल्लेख अलंकार द्रष्टव्य है–

''हिरणां ज्यूं भाजणी, पैनी ज्यूं तरवार।
चरचा री ज्यूं फैलणी, डांफी माला मार।।258।।

चैत्र मास आते–आते 'डॉफी' यौवनावस्था से वृद्धावस्था में आ जाती है –

''कैर कंकेड़ो खेजड़ो, मरू रोही सिणगार।
आभो सगळो उणमणो, मुळकी सैने मार''।।28।।

कवि ने बागों व खेतों को गट करने वाली 'डॉफी' को चिड़चिड़े एवं खराब स्वभाव वाली कहा है–

''मोद भारया मुळकावता, बाग खेत बणराय।
इकल खोडली चाँदड़ी, गिटगी गट गट आय''।।14।।

कवि ने 'डॉफी' को विविध उपमानों से सम्बोधित किया है – डाकिनी, चाँदड़ी, धाड़वी, खुरड़पगी, कुलखणी बाँझ आदि। समाहार के रूप में कवि ने अपनी अभिलाषा प्रकट की है–

''स्याळै में तू सोवणी, हिवड़ै सूं सनमान।
उनयाळै जै आयज्या, पूठी नी दया जाण'' ।।274।।

रस की रंजकता

डॉ. उदयवीर शर्मा अपने काव्यों मे सभी रसों का प्रयोग विभिन्न रूपों में किया है। 'डॉफी' काव्य में अनेक रसों का प्रयोग हुआ है–

रौद्र –

''सूर कठै खोई अकड़, पुखड़ों रेतो लाल।
बेगो क्यूं आथूंण, नै डॉफी है नी काळ''।। 97।।

वियोग श्रृंगार –

श्रृंगार रस के दोनों पक्षों का बड़ा ही मार्मिक चित्रण हुआ है लेकिन संयोग श्रृंगार की बजाय वियोग श्रृंगार का अधिक चित्रण है–

''राही नै मत मारजे, लागै तनै सराप।
घरां उडीकै गोरड़ी, पळ पळ करै विलाप''।।173।।

वियोग श्रृंगार का श्रेष्ठ उदाहरण –

''हिवड़ो उकळयो पीव बिन, पाती लिखण सजाय।
स्याही धोळी पापणी, अध बिच दयी जमाय''।।179।।

लोक जीवन का चित्रण –

'डॉफी' में लोक जीवन का चित्रण अत्यन्त सजीव है। डॉफी के माध्यम से गाँव, कृषक, गरीब, पशु–पक्षी आदि का चित्रण किया गया है। –

गाँव का चित्रण –

"बरखा रस बरसावती, जलम्या कोड़ा जीव।
पैरो पळटयो पापणी, न्हाख्या कर निरजीव"।।45।।

कृषक का चित्रण –

"जै आवे तूं आवजे, टूटी टपरी छान।
हिल मिल कै बातां करा, लखपत नी किरसान" ।।140।।

गरीबी का चित्रण –

"भूख मरै नागा फिरै, तिसिया बूढ़ा बाल।
तू तो मत जा डॉफली बरने खारयो काळ"।।188।।

जहाँ चहल पहल थी, डॉफी के कारण अब वहाँ सुनसान हो गया –

"नदी किनारे नहावता, घूमण रो घमसान।
'डॉफी' रो पैरो लग्यो, सगळै इब सुनसान"।।152।।

भाषा शैली –

'डॉफी' की भाषा सरल एवं सशक्त है। ठेठ राजस्थानी के शब्दों के साथ संस्कृत के तत्सम्, तद्भव एवं उर्दू शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। स्थान–स्थान पर लोकोक्तियों, मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग भी हुआ है।

उर्दू शब्दों का प्रयोग –

"प्रगटै नाग फुकारता, बरखा में निज भेख।
टेम–टेम री **हाकमी**, दुबम्या तम्नै देख"।।48।।

मुहावरों का प्रयोग –

"तू ही घण डरपावणी, सीळो अंधड़ साथ।
जरख चढ़ी ज्यूं डाकणी, पळकै घणा अनाथ"।।121।।

अलंकार –

'डॉफी' प्रकृति काव्य मे डॉ. उदयवीर शर्मा ने अनेक अलंकारों के माध्यम से प्रकृति का सुन्दर मनोरम वर्णन किया है। 'डॉफी' में अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश, संदेह, विभावना, विरोधाभास, उत्प्रेक्षा, उपमा आदि अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

अनुप्रास

"राफड़ करती रूँख सूं, रात्यूं चालै रोज।
पीळा पड़िया पानड़ा, लूटी जिनरी मोज"।।2।।

पल में झट पथरीजज्या, नीचै पड़ियो नीर ।
छोड़ धड़ो भटकै जिको, जग में भोगै पीड़ ।।

पुनरुक्ति प्रकाश

"काची–काची टूकल्या, कवळा–कवळा पात।
हरी भारी बन बेलड़या सबरै देगी लात"।।65।।

पड़े उठे, **उठ–उठ** पड़ै, आ डांफी री फेट ।
डीकै आळै चींकला , चिड़िया चढ़गी भेंट ।।

उत्प्रेक्षा

''डॉफी' तेरी म्हैर सूं खेळ जीम इकसार।
ज्यूं खाळी में ढाळ दी, चाँदी चतर सुनार"।।88।।

पैनी पैनी पीड़ सी, सर्राटे सूं खाय।
वीर चढयोड़ी डाकणी , ज्यूं आवै सूंसाय।।

विभावना

"विण तन दीसै, मारती साँसाँ बिण सूं साय।
विण नैणां तूं टोयले, मोस–मोस जिव खाय"।।165।।

विरोधाभास

"लुआ ताती बाल दे तू सीली तन खाह।
सीळै में तातो ल्हुक्यो, अजब खेल यो थाह"।।200।।

उपमा

"विरछाँ रो हिवड़ो, बळयो तनउे पड़ी दराड़।
पान झुळस चरंमुर हुआ, चणों बळयो ज्यूं भाड़"।।36।।

'डॉफी' एक सशक्त प्रकृति काव्य है। विद्वानों में यह काव्य अत्यधिक समादृत हुआ है। राजस्थानी शीतकाल का साकार स्वरूप मानो इसमें उभर कर सामने थिरकने लगता है। शीत लहर (डॉफी) का सजीव एवं साँगोपाँग चित्रण इस काव्य में देखा जा सकता है।

जन–जीवन तथा सम्पूर्ण पर्यावरण का सहज चित्रण ही इसकी मूल विशेषता है। यथार्थ धरातल पर खड़े होकर कवि ने डॉफी का सहज चित्रण किया है। लू और डॉफी एक जोड़ी के अनूठे दो काव्य ग्रन्थ कहे जा सकते हैं। **श्री रामजीलाल कल्याणी** ने डॉफी काव्य के लिए लिखा है–

"शीत लहर नै देखकर, होगा भाव–विभोर।
डॉफी प्रगटी कलम सूं, काव्य बण्यो चित चोर"।।276।।

'डॉफी' डॉफा मारती, चितराई रस घोळ।
जन–मन हिरदो मोवनी, निखरी–बणी सुडोल।।277।।

अनेक विद्वानों की भाँति **श्री अमोलकचन्द जाँगिड़** ने डॉफी के लिए लिखा है 'डॉफी एक सशक्त राजस्थानी ऋतु काव्य कृति है। आपने यथार्थ व कल्पना में समन्वय स्थापित कर काव्य को स्वाभाविक रूप प्रदान किया है जो सहज ही पाठकों पर अमिट प्रभाव छोड़ता है। डॉ. साहब ने डॉफी के नाना रूपों का सूक्ष्म निरीक्षण किया है, और उनमें मार्मिक चित्रोमय दृश्य भी उपस्थित किए है। इस कृति की भाषा शैली सरल व स्वाभाविक है। भावानुगामिनी भाषा का भव्य अलंकृत रूप अभ्यंतर का स्पर्श करने में सक्षम है।

वस्तुतः डॉफी एक सुप्रतिष्ठित ऋतु काव्य है जो राजस्थानी के ऋतु काव्य परम्परा में एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। कवि ने पाठक के ह्रदय को अन्दर से झांक के देखा है। कवि ने प्रकृति का वर्णन एक भोक्ता की दृष्टि से किया है। जनवरी व फरवरी इन दोनो महिनों में लगभग 30 दिनों तक चलने वाली इस प्राकृतिक ठण्डी हवा को आमजन भोगते तो है, लेकिन एक मूक दृष्टा के रूप में । कवि उदयवीर जी ने उसे अपनी लेखनी से साकार रूप प्रदान किया है। कवि की यह रचना पाठकों को दिशा–बोध कराने वाली है।

सूँटो : (1980)

राजस्थानी काव्य परम्परा में ऋतु वर्णन पर्याप्त मात्रा में हुआ है। जिसमें फाग, चौमासा, बारहमासा, आदि का वर्णन उल्लेखनीय है। विनय चन्द्र की "नेमिनाथ चउपाई" जिनदत्तसूरी का 'स्थूलिभद्र फाग', 'सोम सुन्दर रचित 'नेमिनाथ नवरंग फाग', पृथ्वीराज की 'वेलिकिसन रूकमन' शिवदास गाडण का 'बीसलदेव रासो' आदि काव्यों में ऋतु वर्णन अपनी चरम सीमा को छू रहा है।

आधुनिक युग में **चन्द्र सिंह** ने **'लू'** और 'बादली' काव्यों की रचना करके राजस्थानी आधुनिक प्रकृति काव्य की परम्परा का श्री गणेश किया है। इसके बाद तो आधुनिक काव्य में ऋतु वर्णनों की झड़ी सी लग गई। 'कळायण', 'लोर', 'बिरख बीनणी', मेघमाळ, सूँटो, डॉफी, गजमोती, दसदेव आदि राजस्थानी काव्यों में. ऋतु वर्णन की माला गूंथने लगी।

'सूँटो' राजस्थानी प्रकृति का मूलभूत परिचायक शब्द है, जिसका अर्थ आँधी के साथ बरसात के आने से है। सामान्यतः 'सूँटो' का तात्पर्य उसी तरह है जिस प्रकार से संस्कृत में झंझा या सवृष्टिक वात, अंग्रेजी में 'स्टोर्म' तथा उर्दू में 'तूफान' से है। इन सबका अर्थ लगभग एक ही है जो हवा अपने तेज वेग के साथ पानी को लेकर आगे की ओर वर्षा का ताण्डव नृत्य करती हुई निकल जाती है।

भूगोल शास्त्र के अनुसार 'सूँटो' के शास्त्रीय तात्विक शब्द 'चक्रवात' जो अंग्रेजी के साइक्लोन का पारिभाषिक शब्द माना जाता है। बवण्डर, ताइफून, प्रभंजन आदि शब्द चक्रवात का ही समदृष्टि शब्द माना है।

राष्ट्रीय कवि **स्व. मैथिली शरण गुप्त** ने जिस प्रकार अपने खण्ड काव्य 'पंचवटी' मे प्रकृति का वर्णन किया है, वैसा ही वर्णन उदयवीर जी ने अपने काव्य मे अपने छन्द में किया है। छायावादी कवि **सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने** जिस तरह बादलों को क्रांति का अग्रदूत माना है, तथा समाज और देश मे परिवर्तन का प्रतीक माना है। उसी प्रकार कवि उदयवीर ने सूँटों को भी प्रकृति व समाज मे परिवर्तन लाने वाला माना है। सूँटो के आगमन से सभी जगह हलचल मच जाती है।

'सूँटो' प्रकृति के प्रकोप के रूप में कवि के भाव द्रष्टव्य है–

''सूँटो रो सरूप कुण बरनै, कुण माँडे ईरो चितराम।
सूंसाणो सरणाटै जाणौ , रूपहीन निरभीक निकाम"।। 7।।

जिस तरह मनुष्य के जीवन में दुःख–सुख, हर्ष, शोक, काम, क्रोध, लोभ आदि प्रवृत्तियाँ हल–चल मचाती हैं, उसी तरह प्रकृति में भी गर्मी सर्दी, आँधी, वर्षा, लू, डॉफी, सूँटों, बवण्डर आदि अपना प्रभाव डालती हैं। यह परिवर्तन ही प्रकृति एवं मानव का जीवन क्रम है।

इसलिए कवि ने मानव एवं प्रकृति को समदृष्टि बताया है–

"मिनखै रै मन में भी सूँटो क्रोध भाव रो सही प्रतीक।

दोनू बगणा एक पंथ सूं, पण स सूँटे री माटी लीक"।।121।।.

मिनखाँ रै मन में सागीडों, भवाँ रो आवै भूचाळ।
नासाँ फूलै डोरा तणज्या, माथो चकरी, तन बेहाल"।।122।।

कवि ने भौगोलिक स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा है कि जब सूँटो आता है तो सबको काल की तरह निगलने लगता है।

"बिरखा ओला घणै बेगसूं, चढ़ चालै जद पून बिवाण।
रोही कापै खेती धूजै आवै, फॉफा बे परवाण"।। 2।।

'सूँटो' की पहचान का वर्णन कवि ने इस प्रकार से किया है–

"पून वेग यो सूँटोबाजै, भागै दोड़े बे परवाण।
ढूँढा गेरै, खेती भेळै, तोड़–फोड़ री सही पिदाण"।। 4।।

'सूँटो' के **काल रूपी स्वरूप** का वर्णन –

"घोर अँधेरों, बिजळी चिमकै, ढोल गुडे ज्यूं हो अरडाट।
धरती रो कण–कण थर्रावै, सूंसाटो माचै घर्राट"।। 5।।

सूँटो के जन्म की स्थिति का चित्रण –

"पून गोट जद बंधै जोर सूं, सूं–सावै उपड़ै सरनाट।
उन घड़िया में सूँटो जामै, चाल पड़ै करतो बरनाट"।। 6।।

कवि ने सूँटो के **तीन गुण** बताए हैं –

"मधनी सीतळ, गंध पून कद, सूँटो बाजै जोस विहीन।
तेज चालणो, ,खेत भेळणो, सूंसाणो मोटा गुण तीन"।। 10।।

पून गोत्र में जन्म लेने वाला 'सूँटो' सीधी चाल कभी नहीं चलता ऐसा समय भी नहीं आता वह अपने कुकर्म को छोड़ दे।

"सूँटो कदे न सीधो चाल्यो, इसी घड़ी रो जलम कठै।
खुरड़ पगो, डॉफा मारणियों, पाट मिलाया गयो जठै"।।11।।

हवा रूपी माँ के **आँधी, बवण्डर और सूँटो** तीनों बेटे हैं –

"पून रूप ये सगळा साथी, सागळारी अळगीधारा।

एक मात रा जितना बेटा, नाम धरै न्यारा न्यारा"।।16।।

कवि ने **'आँधी', 'भंभूल' एवं 'सूँटो'** को एक माँ के बतालाये है लेकिन कवि ने इसके स्वभाव में अन्तर बताया है–

आँधी

"धूल उड़ाती आँधी आवै, उन्याळे काळी पीळी।
रोळ गिदोळै तौड़ै–फौड़ै, पून लियाँ ताती सीळी"।।15।।

सूँटो

"पण सूँटो कद धूळ उड़ावै, यो दोन्या में मोटो भेद।
पून वेग सूं दोनू बगणा, पण सूंटैरो न्यारो वेद"।।15।।

भंभूळो

भंभूळो उन्याळै आवै, होड करन नै इतरावै।
थोड़ी दूर चाळ दम तोड़े, सूँटै नै के लग पावै।।16।।

कवि ने प्राकृतिक परिस्थितियों के साथ मनोवैज्ञानिक रूप से भी कुशलता के साथ चित्रण किया है। कवि ने 'सूँटो' को क्रांति का प्रतीक मानते हुए, इसका मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। –

"कोच–सूंटियो एक डौळरा, दोनूं कुबद करै उड़धंग।
एक माँय सूं दूजो बारै, जन मन नै करदे बिदरेग"।।23।।

कोप घुटे जद अन्तर मन मे, डोब उठै हो अन्तर द्वन्द्व।
कूओ फाँसी करे मिनखड़ा, यू काटै जीवन रो फन्द"।।28।।

रस –

'सूँटो' काव्य में लगभग सभी रसों का चित्रण हुआ है। सूँटो क्रोध का प्रतीक है। अतः रौद्र रस का चित्रण अधिक हुआ है। साथ ही वीर, भयानक, वीभत्स, अद्‌भुत आदि रस भी दृष्टव्य हैं।

रौद्र रस

"दड़ा छंट हो मानो आयो, रौदर रस सूँटे रै रूप ।
गरजै तरजै वेग दिखावै, मानी भट ज्यूकोप स्वरूप"।। 132।।

"धर थर्रा वै नभ धर्रावै, सूँटो है कुदरत रो कोप।

जल में ज्वार, घरा में भैंगज, नभ में सूँटो पून प्रकोप"।। 121।।

भयानक रस

तेरो नाम सुणै जद काँपै, डर लागै ज्यूं आभो भूत।
दुतिया टुलखै करतब तेरा, कुदरत रो तू बड़ो कपूत ।। 157।।

वीर रस

"लाज लुटे जद दीन हीनरी, फैले धर पर पापा चार।
क्रांति रूप सूँटो सूंसावै, लगा ढलेचा रै फटकार"।। 114।।

कवि अपनी संवेदनशीलता के कारण प्रकृति के दुःख में अपने दुःख देखते हुए खेतों एवं रोही का चित्रण करता है–

"झाड़ बोझका जाळ झाड़की, सै खेलै धरती री गोद।
पान–पान में रस सरसावै, झूमै घूमै भरै विनोद"।।58।।

"रोही रो हिरदो हर खावै, मनडै में छावै घण मोद।
पण सूँटो जाणी कद ममता, धावै पळकण जड़ सू खोद" ।। 23।।

बाड़ा और नोहरा

"गाँव गोरवै बाड़ा निपजै, बण्या गाँव री शीशा कैण।
सूँटो दी फटकार चानतो, जाणै लाग्यो चन्दै घैण" ।। 31।।

टीबा

"ओपे सदा सुरंगा टीबा, मरुधर रा साँचा सैनाण।
सूँटो पच–पच हारै मेटण, आवै बैठयो पूण बिमाण"।। 53।।

लोक जीवन का चित्रण

कवि ने काव्य मे लोक जीवन का स्वभाविक चित्रण किया है। इस चित्रण में गाँव का स्वाभाविक वर्णन–

"गाँव गौरवै जूनो पीपळ ऊभो सूँटो देख्या भोत।
इबकै यो सागीड़ो आयो, सूंसाती आई ज्यूं मोत"।।46।।

ढांडा

ब्यावतार नै मता सताए ब्याया पीछै रखिए ध्यान।

कदै कठै तो चेत बावळा, उपकारी रो दूतो मान"।।56।।

करसो

खळो काढ़ता आगो पापी, खावण फैक्या अपना दाव।
करसो इब के करै बापड़ो ? छाती पकड़ी टूटया पॉव"।।59।।

गरीबी

टाबर जद रोटी ने कळपै, देख दसा उकळे माँ बाप।
रुदन करै घण घर रो, कण–कण कुण देखै यो मूक विलाप"।।89।।

सौन्दर्य वर्णन

कवि ने सौन्दर्य वर्णन करने में ब्राह्य एवं आन्तरिक दोनों पक्षों पर अपनी लेखनी चलाई है।

"जाँटया' लूँबी बेल, सुरंगी हरखै पुळके मोद भरै।
इतरावै छितरावै पळ में, मघरो मधरो नांच करै"।।29।।

धरती का सौन्दर्य वर्णन

कवि ने 'सूँटो' काव्य में धरती के सौन्दर्य को बड़े ही खूबसूरती के साथ उतारकर अपनी पृथ्वी के प्रति निष्ठा का भाव दिखाया है–

"हरी–भरी धन मोली, चूनड़ धरा ओढ़ रम री रस राग।
रोम–रोम प्रेमांकुर फूटया, जड़ जंगत रा जाग्या भाग"।।69।।

"कुतरत मुळकै राग रंगीळी, पंछी कुळ गावै रस तान।
अम्बर बरसै इमरत धारा, ल्हेरा गावे धरा गान"।।70।।

क्रांति –

कवि ने 'सूँटो' काव्य को क्रांति का प्रतीक मानते हुए इसका चित्रण किया है। **कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'** ने बादलों को क्रांति के दूत के रूप मे स्वीकारा था, उसी प्रकार उदयवीर जी ने सूँटों को क्रांति दूत के रूप में स्वीकारा है। इसमें प्रगतिशीलता एवं समसामयिकता के भावों के साथ समाजवादी दृष्टिकोण को सशक्त रूप से अपनाया है।

" क्रांति दूत ओपै सागीड़ो, जे थोड़ो तू करे सुधार।
भूखा पोखै प्यासा तोखै, लगा सोसका रै फटकार" ।। 111।।

"जद शोसण सांकल सूं जकड़या अध भूखा अध नंगा डील।
पड़या लुटीजै सोसक झपटै, ज्यूं झपटे सरणाती चील"।।113।।

सामाजिक विषमता, भेदभाव, अर्थतन्त्र, वर्ग संघर्ष आदि राष्ट्रीय समस्याएं सूँटो काव्य में स्थान–स्थान पर दृष्टिगोचर होती हैं। इस तरह की समस्याओं को उजागर करके उन्हें समाप्त किये जाने का सशक्त प्रयास कवि द्वारा किया गया है। इस प्रकार का वर्णन कवि को राष्ट्रीय कवियों की श्रेणी में स्थान प्रदान करता है।

सामाजिक विषमता

"बड़ा ढलेचा रो के बिगड़ै, सह लेवै संगला संताव।
दीन घरां री उड़ै छानड़ी, मुरगी रै ताकू रो घाव"।।98।।

भेदभाव

"भेद न तू राखै मनड़ै मे, समदरसी तेरो व्यौहार।
पण तू देख पून रा जाया, जगती में सोसण री मार"।।105।।

भूखा भागै, भूखा सोवै, भूख काढ़ता मरे मजूर।
मालिक फूलै, रस में झूलै, भेद मेट यो करदे चूर।। 105 ।।

समता का भाव

"समता रा बादल ल्या नभ में, मंगल रो बरसादे नीर।
मिटे गरीबी, बचै दीनड़ा, उजळै निखरे राष्ट्र–शरीर"।।96।।

विषमता की व्यवस्था

आज समाज अनेक जाति वर्गो में विभक्त है। इसमें विषम व्यवस्था के विध्वंस की उत्तेजना भी है–

"जग–मग दीपै म्हैल मालिया, छेड़–छेड़ भलके फानूस।
पलका मारै रंग बिरंगा, ज्यूं माणक री भरी मजूस"।।98।।

पूँजीवाद

जठै रमै सासक अर सोसक, जिण रै धन रो ओड़ न पार।
दीन हीन रै धन पर जीणा, इण जोकाँ रै दे फटकार।।98।।

विद्रोह

"मन विद्रोही सूँटो गरजै, ज्यूं जंगल में धाडै शेर।

रोही में ताण्डव सो होज्या, पळ में हो पंछया रो ढेर"।।136।।

समसामयिकता

"गाँव गोरवै जूनों पीपळ, उभो सूँटो देख्या भोत।
इबकै यो सागीड़ो आयो, सूंसाती आयी ज्यूं मोत"।।46।।

साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित क्रांति की बात छोड़ भी दी जाये तो राजस्थानी कवियों पर यह आक्षेप लगाया जाता है कि कवि या लेखक देशकाल की समसामयिक घटनाओं से या तो अनभिज्ञ है या उदासीन, पर श्री शर्माजी ने तो अपने काव्य में समसामयिक घटनाओं का पूरा ध्यान रखा है, जो जयप्रकाश 'बाबू' के (जूनो पीपळ) रूपकों में सामने हैं। जैसे –

"तनड़ो काँप्याँ डाल्या कॉपी, पान पान काँपण लाग्यो।
पण बूढ़ो सगती रो पूरो, झेल्या झटका, बो भाग्यो।।

भाषा शैली –

सूँटो काव्य की भाषा सरल एवं सशक्त है। सूँटो एक स्वाभाविक काव्य है। **सीकर, झुंझुनूं, चूरू, नागौर** आदि जिलों की सीमा के संगम का यह काव्य प्रतिनिधित्व करता है। कवि ने इस क्षेत्र की प्रकृति, लोक जीवन, भाव एवं भाषा के रूप में अपनी लेखनी चलाई है। सूँटो काव्य में ठेठ राजस्थानी के शब्दों के साथ संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों के रूप मिलते हैं। साथ ही सामासिक पद भी आये हैं एवं इसके भावों में प्रसाद का गुण है तो शैली ओजपूर्ण है। कवि ने मुहावरों, कहावतों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग उसी प्रकार से किया है, जिस प्रकार से 'डॉफी' काव्य में किया गया है।

अलंकार –

कवि ने अनुप्रास, यमक, अन्योक्ति आदि अलंकारों का जहाँ प्रयोग किया है। वहाँ रूपक एवं उपमा को भी अपनी लेखनी के बंधन में लिया है।

अनुप्रास

"भारी जोस, जवानी लूठी, कुळ ऊँचो आवास।
ई ढाळै जे करतव हो तो, सूँटा सानै माँय सुवास"।। 1।।

रूपक

"लाम्बी–माटी तीखी–तिरछी, धारा में बरसावै नीर।

सूँटो वीर छोडरयो जाणै, 'पून–धनस सूं तीखा तीर"।।14।।

उपमा

"सूंटै रो लाग्यो फटकारो, टीबा चकरी चढ़गा आप।
पोर–पोर में दस–दस सिट्टा, सै रूळगा 'ज्यूं लाग्यो श्राप"।।29।।

मानवीकरण

"पून आपरै घोड़ै चढ़के, चाल पड़ै जद पूरै वेग।
सूंसाटो मांचे चौफरी, झनणावै ज्यूं तीखी तेग"।।4।।

डॉ. गोरधन सिंह शेखावत के अनुसार ''प्रगतिशील विचारधारा के कवि डॉ. शर्मा जी ने सामाजिक विषमता का यथार्थ चित्रण करके विषमता भरी व्यवस्था के विध्वंस की उत्तेजना प्रकट की है।"[4] **श्री अमोलकचन्द जाँगिड़** ने लिखा है कि "डॉ. शर्मा जी की आत्मा में अध्यात्म घर किए हुए है तो दूसरी ओर गरीबी व शोषणकारी की असहनीय पीड़ा भी भोग रहे हैं। यही कारण है कि उनके क्रांति दर्शक काव्य–कृति सूँटो में दोनों धाराओं का संगम हुआ है।"[5] **श्री रामजीलाल कल्याणी** के भाव है –

"सूँटो सरस सुहावणों कतियो कलम कमाल।
नुई दीढ दीनी सहज, रचना धरमी चाल"।।46।।

सूँटो लागै सोवणो, खरी निराळी दीठ।
मैनत सूं मोती मिलै, जगत थेपड़ै पीठ" ।।47।।

राजस्थानी पद्य में, रितुरो काव्य सुरंग।
सूँटो धाक जमाणियो, सूँटो घणो दबंग"।।49।।[6]

यथार्थ में 'सूँटो' एक सशक्त और मनमोहक काव्य है। यह काव्य प्रेमियों एवं पारखियों में यह बहुत प्रशंसनीय है। 'सूँटो' काव्य अपनी प्रभावशाली विशेषताओं के फलस्वरूप पुरस्कृत भी हुआ और अनेक विद्वानों की प्रशंसा का पात्र बना। आपकी रचनाओं की प्रशंसा अनेकों साहित्यकारों द्वारा होती रही है।

---

4. मरुभारती वर्ष 41, अंक 3–4, डॉ. प्रतापसिंह राठौड़, पृ. 59
5. मरुभारती वर्ष 42, अंक 1, श्री अमोलकचन्द्र, पृ. 120
6. उदयवीर जस शतक – रामजी लाल कल्याणी , पृ. सं. 4

डॉ. प्रताप सिंह राठौड़ ने इसे 'क्रांति का प्रतीक' बताते हुए लिखा है कि "क्रांति का दर्शन काव्य की अपनी विशेषता है। कवि ने सूँटो को क्रांति का प्रतीक माना है, जिस

प्रकार क्रांति से समाज में परिवर्तन होता है, उसी प्रकार सूँटो के आगमन से प्रकृति मे भी परिवर्तन दिखाई देता है।

कवि ने सूँटो काव्य में प्रकृति का चित्रण करके अपनी भावनाओं एवं काव्य कुशलता का परिचय तो दिया ही है साथ ही वे राजस्थानी भाषा में ऋतु वर्णन में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देकर राजस्थानी साहित्य के भण्डार को भरने में सफल हुए हैं।

श्री दामोदर प्रसाद शर्मा लिखते हैं "जुग चेतणा रै मुजब कवि काव्य नै ठुकराया कठे ही कोनी। कई नया आयाम ही भलाई जोड़या है। कवि की भाषा सरल अर शैली की अभिव्यक्ति री प्रखरता सीधी काळजे पर चोट करै। सूँटो प्रगति शीलता अर यथार्थ चित्रण पर आधारित है। [7]

सूँटो स्वतन्त्र चिन्तन पर आधारित कवि की एक अनमोल कृति है जिसमें दीन दलितों की पीड़ा, भूख की भयानकता, पशु पक्षियों की पुकार, विषमता की विभीषिका, समता के स्वर आदि जन जीवन से जुड़े अनेक भावों की सशक्त अभिव्यक्ति द्रष्टव्य है।

मरुधर री महक

राजस्थान से राजस्थानी समाज का जीवन जुड़ा हुआ है। मातृभूमि से जुड़कर यहाँ की सभ्यता संस्कृति का हृदय स्पर्शी वर्णन करना लेखक की श्रेष्ठता को प्रकट करता है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने भी अपनी श्रेष्ठता का प्रमाण अपनी रचनाओं के माध्यम से किया है। कवि की इस रचना को भी प्रकृति काव्य की श्रृंखला मे रखा जा सकता है।

कवि ने **'मरुधर री महक'** काव्य के माध्यम से मरुभूमि का गुणगान किया है। मरुभूमि की प्रत्येक गतिविधि को विशेषता के रूप मे चित्रित किया है। राजस्थान मे हवा का बवन्डर तो साल भर ही रहता है जिसको यहाँ की लोक भाषा मे भतूळियों या भंभूळियों पुकारते है। जब इसका आगमन होता है तो यह अपने प्रभाव से कच्चे मकानों, पेड़–पौधों को तहस नहस कर देता है। इस के प्रभाव से व्यक्ति को कुछ भी दिखाई नहीं देता।

गिरणी खातो नभ नै चाल्यो, दोपार्‌या चढ़ पून विमाण।
जाणैं तपसी तप सागीड़ो, चाल पड्‌ये मुगति रै ठाण ।।

इसलिए इसके माध्यम से कवि ने व्यक्तियों को सही दिशा–निर्देश दिया है।

---

7. सूँटो काव्य री भूमिका –श्री दामोदर प्रसाद शर्मा , पृ. प्रथम संस्करण सन्, 1980

"निशानो राखर दुनिया में आगे बढो घूमों"।

मरुधरा री महक मे मरुभूमि के महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है। मरुभूमि का उत्तम चित्रण करते हुए यहाँ की विशेषताओं सुख शान्ति और आनन्ददायक कार्यों के साथ राजस्थान की गौरव गरिमा का वर्णन उल्लेखनीय है।

सूरज सोनो ऊगळै, चंदों रंग सूरंग।
इमरत रमर्‌यो टीबड़ा, कण–कण नई उमंग ।।

खेजड़ी को राजस्थान का **कल्पवृक्ष** माना जाता है। यह वर्ष भर हरा भरा रहता है। वर्षा के अभाव मे भी इसका विकास अवरुध नहीं होता है। इसकी पतियां जहाँ पशुओं का आहार है, वही इसका फल (सांगरी) मनुष्यों की सूखी साक सब्जी मे सबसे महंगी सब्जियों मे राजस्थान का मान बढ़ा रही है। जेठ के महीने में धरा को धधकाने वाली लू की लपटे भी इसका कुछ नहीं बिगाड़ पाती। यह वृक्ष राहगीरों को विश्राम देकर उनकी थकान को मिटाता है। इसलिए इस वृक्ष का शुभ मांगलिक कार्यों मे पूजन का विधान भी बताया गया है।

मरु री गौरव गाथा जाणै, वेदां रो तू अमरो रूंख।
वीर बण्यों अर वीर बणाया काढ–काढ के करड़ी भूख।।

मरुस्थली के स्वर्णिम रेतीले धोरों की महिमा निराली है। दूर से देखने पर विशाल पर्वताकार रूप दिखाई देता है। ये गर्मी मे शीघ्र गर्म और सर्दी में शीघ्र ठंडे हो जाते है। इसी कारण यहाँ का वातावरण सुहाना होता है। इन धोरों के कण–कण मे तपस्वियों के तप और वीरों के शोर्य की गाथा समाहित है।

टीबै रै कण–कण में जोती, आण–बाण री वीरो ढेर।
इण कण सूं बणगा घण जोधा, जग नामी जंगलधर सेर।।

मरुभूमि का संध्या वर्णन तो अति रूचिकर और हृदय स्पर्शी बन पड़ा है। सायंकाल का मनभावन वर्णन कवि ने सांझड़ली के रूप मे किया है।

आभो सागर रतन अपार, जड़–जड़ चूनड़ करदी त्यार।
सांझड़ली ओढी मुळकावै सरमावै, ढळकावै प्यार ।।

म्हारों गाँव – इस काव्य मे कवि ने गाँव की सभ्यता और संस्कृति का सजीव चित्रण किया है। गाँव के घर, गुवाड़, बाड़, खेत आदि का वर्णन उल्लेखनीय है। गाँव के तीज त्योहारों का वर्णन भी देखते ही बनता है। यह एक प्रशस्ति काव्य है।

इस प्रकार डॉ. उदयवीर शर्मा का प्रकृति वर्णन अपने आप में अनूठा है। इनके काव्य मानवतावादी दृष्टिकोण व जीवन मूल्यों की गहरी भाव–भंगिमाओं से जुड़े हुए है। इनके माध्यम से समाज के क्रांतिकारी स्वरूप को भी उभारा गया है। इनकी रचनाएं

छन्दोंबद्ध व व्यवस्थित है। कवि ने यथा स्थान स्वभाविक रूप से अनुप्रास, यमक, अन्योक्ति, रूपक, मानवीकरण आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। इनके काव्यों में रसानुभूति सराहनीय है। इनकी रचनाएं सरसता के साथ–साथ दिशा प्रदान करने वाली है।

(ख) राजस्थानी सम्बोधन काव्य –

शरतीय वाङ्मय में सम्बोधन काव्य परम्परा समृद्ध एवं सुदृढ़ है। इसके प्राचीनतम उदाहरण तो ऋग्वेद की ऋचाओं में उपलब्ध हैं। इन्द्र, अग्नि, सोम, वरुण आदि देवताओं को बारम्बार सम्बोधित किया गया है। उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत तो सम्बोधन शैली से भरपूर हैं।

राजस्थानी काव्य में संबोधन काव्य की परम्परा नीति काव्य से शुरू हुई। राजस्थानी काव्य मे तो प्रायः किसी न किसी को सम्बोधन करके ही अपनी बात कहने की परम्परा रही है। प्राकृत, पाली और अपभ्रंश आदि में सम्बोधन के पुष्ट प्रमाण है तथा डिंगल गीत, दोहों एवं सोरठों में भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। राजस्थानी लोक साहित्य में भी इसके अनुपम उदाहरण मिलते हैं।

राजस्थानी काव्य में संबोधन काव्य की परम्परा नीति काव्य से शुरू हुई । राजस्थानी काव्य मे तो प्रायः किसी न किसी को सम्बोधन करके ही अपनी बात कहने की परम्परा रही है। कवि ने किसी को माध्यम बनाकर दोहे व सोरठे छन्द मे अपनी नीति विषयक उपदेशों को अभिव्यक्त किये है। इसी श्रृंखला मे कवि उदयवीर शर्मा भी अपना विशिष्ट स्थान रखते है। राजस्थानी लोक गीतों में भी राजस्थानी सम्बोधन काव्य की परम्परा अबोध रूप से उपलब्ध है।

राजस्थानी साहित्य का सम्बोधन काव्य वि.सं. 1530 में ईलिया को सम्बोधित करके लाखणसी के दोहे के बाद किसनिया, राजिया, रामला, नोपला, रेखला, मगनिया, मोतिया, दानिया, फूसिया, छोटिया, नानिया, हीरिया, कानिया, खानिया, केलिया, चतरसी, तुळसिया, मानिया, काळिया, चकरिया, आदिया, दूदिया, रमणिया (वि.सं. 1997), बैणिया, शैखरा, भायला, मालिया (वि.सं. 2028) शयला इन्द्रवा (1990 ई.) साँवरा (1993 ई.) कीरत बावनी (1995 ई.) रामजी (1995 ई.) आदि सम्बोधन काव्यों के लोकप्रिय सोरठों का संक्षेप मे उल्लेख किया जाये तो एक सुदीर्घ परम्परा की महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है।"[8]

---

8. परम्परा भाग 106–107, नीतिपरक सम्बोधन काव्य, सं. डॉ. विक्रम सिंह एवं डॉ. भगवती लाल शर्मा

इसी परम्परा में 'मोलकै रा सोरठा' (1996 ई.) अपनी अहम भूमिका अदा कर रहे हैं। इनमें वंदना सहित 886 सोरठे हैं जो अब तक प्रकाशित ग्रन्थों में सबसे अधिक संख्या में हैं।

(1) मोलकै रा सोरठा (1996)

राजस्थानी साहित्य में सम्बोधन काव्य के अन्तर्गत सोरठो के रूप में प्रेरक तथ्य–कथ्य कहने की एक लम्बी परम्परा चली आ रही है। इस परम्परा के सोरठों में डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने घनिष्ठ मित्र श्री अमोलक चन्द जाँगिड़ को सम्बोधित करते हुए 886 सोरठे लिखे हैं। तथा प्रत्येक शतक के प्रारम्भ में अपने **इष्ट देव** की आराधना करते हुए **पाँच–पाँच** सोरठे लिखे हैं। **'मोलकै रा सोरठा'** सम्बोधन काव्य परम्परा री एक ओपती शोभती अर मन मोवणी भावपूर्ण कड़ी है। इनकी बड़ी संख्या में एक कवि रा अर एक ग्रन्थ में एक साथै सम्बोधन सोरठा म्हारी जानकारी माँय पैली कदै भी प्रकाशित नहीं हुआ है।"[9] सम्बोधन काव्य परम्परा में एक व्यक्ति विशेष को सम्बोधित किया जाता है, लेकिन उसका सम्बंध सम्पूर्ण व्यक्तियों से होता है।

सम्बोधन काव्य मे डॉ. शर्मा की एक महत्त्वपूर्ण कृति 'मोलकै रा सोरठा' है। 'मोलकै रा सोरठा' राजस्थानी सोरठा शतकावली के रूप में हैं। सोरठा छन्द मे लिखा यह काव्य आज के सामाजिक सरोकारो से जुड़कर आज की प्रकृति, संस्कृति, पर्यावरण प्रदूषण, राजनीतिक भ्रष्टाचार आदि समस्याओं के संबध मे यथार्थवादी संवाद कायम रखा है। सोरठा छंद में रचित इस काव्य में अलग अलग सात शतक हैं। ये सातों ही शतक मंगलाचरण की परम्परा की रीति से प्रारम्भ हुए हैं।प्रत्येक मंगलाचरण को कवि ने अलग–अलग नामों से सम्बोधित करते हुए अलग–अलग देवताओं की प्रार्थना करके एक **'विनय पत्रिका'** सी बनाई है।

कवि की इन सभी के पीछे सभी देवी–देवताओं को खुश रखने की दृष्टि प्रतीत होती हैं पहले शतक की 'पुकार' दुर्गा देवी से, दूसरे शतक की 'अरदास' सरस्वती से, तीसरे शतक की 'विनती' गणेशजी से, चौथे शतक की 'वंदना' श्री राम से, पाँचवें शतक की 'अरजी' हनुमानजी से, छठें शतक का 'सुमरण' गुरुदेव से, व सातवें शतक का 'कीरत गायन' भारत माता से कर कवि ने आराधना भी मन के अनुरूप ही की हैं। **सातों शतकों का क्रमबद्ध विवेचन (समीक्षा) प्रस्तुत है –**

---

9. 'मोलकै रा सोरठा' – सं. रामजीलाल कल्याणी (संपादक री कलम सूं)

(1) पहला शतक : (जय–जवान–जय किसान, कुल 182 सोरठे)

गरीब देश के गरीब प्रधानमंत्री स्व. लाल बहादुर शास्त्री जी अपना जीवन राष्ट्र को समर्पित कर, विजय–किरण का प्रकाश देश को देकर 'विजयघाट' की समाधि में चिर–निद्रा में विलीन हो गये । इनके विजय घोष 'जय जवान–जय किसान' से प्रेरित होकर कवि ने इस शतक की रचना की है। राष्ट्र जीवन में 'जवान' और 'किसान' दोनों का ही समान महत्त्व है। जवान से राष्ट्र की सुरक्षा है तो किसान से राष्ट्र का विकास और समृद्धि सम्भव है। शास्त्री जी के साथ–साथ कवि भी इस बात को जानता है।

1. जय–जवान

वीर के रूप में जवानों का वर्णन राजस्थानी वीर काव्य में पर्याप्त मात्रा में मिलता है। पूरा डिंगल साहित्य वीरों के बलिदान और शौर्य सें बेजोड़ भी है। डिंगल का वीर रस संसार के साहित्य में अजर–अमर है और बेजोड़ भी है। राजस्थान का इतिहास और राजस्थानी का साहित्य **'कागद पर कलम अर स्याही सूं' नहीं लिखा गया है, बल्कि 'धोरां री रेत में तलवार सूं खून में'** लिखा हुआ है। इनके साक्षी कर्नल टाड और टैसीटोरी आदि विदेशी विद्वान हैं। इस शतक पर भी इस परम्परागत इतिहास और साहित्य की छाप स्पष्ट झलकती है। भले ही परिवेश आज के सीमान्त क्षेत्र और आधुनिक वैज्ञानिक युद्धों पर हो।

कवि की परम्परागत युद्ध–वर्णन के साथ निजी मौलिकता भी काफी दिखाई पड़ती है। कवि का युद्ध वर्णन भी अनुपम है–

धूं–धां उठै धमीड़, औळा–सा गोळा पड़ै।
मुड़–मुड पड़ै गदीड़ वीर झूझरयो, मोलका।।113।।

तूंतावै ज्यूं तात, सरणबट्ट हो गोळियाँ ।
अरि री काढै आंत, मौत विचरगी, मोलका।।114।।

हुँसर–हुँसर कै वार घुमड़ कै घेरणो।
लपक–लपक दे मार, बीर मांचरयो, मोलका।।115।।

सूंसावै सरणांट, सरणट्ट गोल्यां चलै।
गोळां रो गरणाट, वीर उपाडै, मोलका।।126।।

भारत वीरों की खान है। भारत के वीरों में आज भी बुजुर्गों की सहनाणी कायम है, और इस बात को संसार जानता है। भारत का नाम धरती से स्वर्ग तक प्रसिद्ध है। ऐसी कवि की मान्यता है। कवि प्रेम भाव से समर्पित है।

भारत भट री खाण, जग जाणै जोधा जबर।
पुरखा तणी पिछाण, इब लग गूँजै, मोलका ।।119।।
जग–जाहिर झूंझार, संतरी सौरभ सूरसों।
अरपूँ प्रेम अपार, मनड़ों वारूँ, मोलका।।131।।

2. जयकिसान

परम्परागत राजस्थानी साहित्य में जवानों (वीरों) की तुलना में किसानों का महत्त्व कम ही वर्णन में आया है। इस सत्य को कौन नकार सकता है फिर अर्थ प्रधान युग और कृषि प्रधान देश में किसान के महत्त्व को कौन नहीं जानता है ? अब प्रगतिवाद के नाम पर सभी कलम के धनी किसानों का वर्णन करना ही अपना कर्त्तव्य समझते है। आधुनिक राजस्थानी साहित्य किसानों के वर्णन से अछूता नहीं है। कवि भी इस बात को जानता और समझता है –

करसै रा सुभ काम जीवण जोत जगावणां।
थरपै कीरत थाम, मनरी मोजा, मोलका।।132।।

किसान का जीवन त्याग–तपस्या का जीवन है। किसान कर्मयोगी एवं निष्काम भाव से जीवन बिताता है। किसान का महत्त्व कवि ने 'बेमुकुट रै गौपाल' जैसा बतलाया है। कवि आगे बतलाता है कि किसान संसार का अन्नदाता और समृद्धिदाता है। ये सभी राग–रंग, ठाठ–बाट, राज–काज, हाट–व्यापार, किसान की मेहनत और खून–पसीने के बल पर ही फलते–फूलते हैं। किसान के जीवन की झाँकी कवि ने इस प्रकार प्रस्तुत की है।

तपै झेल संताप, मस्ती बाँटै मुळकतो ।
अणथक रीजै धाप, मौजी करसो, मोलका।।134
गाय चरातां ग्वाळ, खेतां माँही खेलरया।
बिना मुकट गोपाल, मुळकै गावै, मोलका।।136

एक लड़ाई सीमा पर लड़ी जाती है तो दूसरी लड़ाई खेत में लड़ी जाती है। किसान को भी एक योद्धा की तरह लड़ाई लड़नी पड़ती है और किसान की लड़ाई 'भूख' के खिलाफ है जो सबकी बैरण है। इस लड़ाई को अपन बल पर जीतने वाला वीर यौद्धा किसान ही है।

अरी भगावै वीर, भूख भगावै कृसक भट।
दोन्यूं मिल तकदीर, लिखै देस री मोलका।।177।।

इसीलिए कवि किसान को सचेत करता है कि–

चेत –चेत तू चेत, चिड़ियाँ चौफेरी चुगै।
खड़यो लकड़ खेत, मत खो प्यारा, मोलका।।133।।

(2) दूसरा शतक–पर्यावरण (रितुवाँ री रंगोळी, कुल–114 सोरठा) –

इस शतक में कवि ने पर्यावरण के अन्तर्गत ऋतुओं का साँगोपाँग वर्णन किया है। गर्मी, वर्षा एवं सर्दी आदि को उपादानों के रूप में काम लिया है। षड् ऋतुओं में कवि तीन ऋतुओं को राजस्थान के सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण मानता है। इनका विशुद्ध वर्णन कवि ने अपने काव्य में इस प्रकार किया है –

1. उन्याळों –

होगो एकोकर, अंधड़ आषो जोर सं।
बाळू रो संसार, मरु रो जीवन, मोलका।। 5।।
चिड़ी, कागला, मोर, चील, कमेड़ी गुरसळी।
चढ़ लूआ रै लोर, मर–मर जीवै मोलका।। 9।।

2. बिरखा –

चौमासै रो चाव, च्यारु कानी चिमरायो।
खेत–गुवाड़ी गाँव, मस्ती छावै, मोलका।। 30।।

रिम–झिम रिमझिम रोज, सावण बरसै सोवणो।
मन मुळक्यो ले मोज, मदरी रागाँ, मोलका।। 45।।

मैं रोई के जोर तूं क्यूं रोई बादळी।
हिवड़ै उठै हिलोर, बिरहन दिख्या, मोलका।। 73।।

3. स्याळो –

ठंडी चालै भाळ, काँपा पळ–पळ काळजो।
जाणै आगो काळ, मावठ रै मिस, मोलका।।101।।

हीटर मोला साथ, डील ढक्यों सुख–सोड सूं।
इब भी ठिरगा हाथ, पीसो नाचै, मोलका।।102।।

(3) तीसरा शतक–पर्यावरण (प्राकृतिक–सांस्कृतिक स्वरूप, कुल 120 सोरठे) –

दूसरे शतक की तरह ही कवि का तीसरा शतक भी पर्यावरण को ही अर्पित है, परन्तु इसका रंगरूप बदल दिया है। प्रकृति का उपादान संस्कृति को समर्पित किया है। प्राकृतिक, भौतिकवाद, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक आदि तत्त्वों की तरफ कवि ने संकेत किया है। टीबड़ा एवं खेजड़ी को भी त्यौहार और महापुरुषों के रूप में बदल दिया है। कवि ने निर्जीव प्रकृति का मानवीय रूप में सजीव चित्रण किया है। कवि की यही करामात इस काव्य में स्पष्ट झलकती है –

1. टीबड़ा –

के टीबो के ढेर, सोनैरो यो सोवणो।
मन सूं दियो बंखेर, मरु धरपणियों, मोलका।।1।।

टीबा तीरी ढाळ, जाँटी ओपै झाड़की।
बिना मुकट गोपाल गुड़–गुड़ खेलै, मोलका।। 37।।

2. खेजड़ो –

दग्गड़ लाठी ढीम, खाऊँ बोल्यों खेजड़ों।
खडयों रुखळू सीम तपूँ तावडै मोलका।। 44।।

मींजर मीठी दाख, सोनै बरणी खेजड़ा।
मरुरी याही साख, साँगर–खोखा, मोलका।। 45।।

3. त्योंहार –

(क) तीज –

तिज्या रो त्युंहार, प्यार भरी रस पोटळी।
तीजिणया हो त्योर मद छक पीसै, मोलका।।86।।

(ख) गणगौर –

गौरी पूजै गोर, साजन देखै दूर सूं।
चंचंळ धण उण ओर, देख मुळक ले मोलका।।10।।

4. महापुरुष –

(क) भगवान राम –

राम, थारलो राज, सुमरयाँ सूं सुख संचरै।
सज बै सगळा साज, मन घुटरयो इब मोलका।।105।।

(ख) महात्मा गाँधी –

सुगणो सपूत, सत्य अहिंसा साधली।
पुतली बाई पूत, मोहन, मोहन मोलका।।108।।

(4) चौथा शतक–प्रदूषण (सामाजिक और सांस्कृतिक के कुल–123 सोरठे) –

इस काव्य का मूल आधार पर्यावरण है तो इसको भौतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रदूषण से भी खतरा है। पश्चिम के 'मास मीडिया' और यूरोप की 'अपसंस्कृति' से तो अपनी सदाबहार, सनातन संस्कृति को भी बड़ा खतरा है यह बात उदारीकरण और उधारीकरण की नीति पर चलने वाले राजनेताओं के बेटे राजनीतिक दलगत भावना को छोड़कर समझे तब ना। आज के इस समय में स्वदेश की भावना तो एक स्वप्न मात्र बन चुका है।

कवि प्रदूषण के शैतिक स्वरूप से कम और सामाजिक–सांस्कृतिक स्वरूप से अधिक चिंतित एवं भयभीत है। भौतिक प्रदूषण पर तो फिर भी 'हाय–तोबा' मची हुई है, पर सामाजिक और सांस्कृतिक प्रदूषण पर बहुत कम लागों का ध्यान आकर्षित है। अपना 'इलेक्ट्रोनिक मीडिया' प्रदूषण के भौतिक रूप–भय पर ही प्रचार–प्रसार में एडि से चोटी तक का जोर लगाऐ हुए हैं, किन्तु सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप को स्वयं बढ़ावा दे रहा है, यह विडम्बना की बात है। **"गुड़ तो खाय अर गुलगुलां रा पच करै है।"** कवि का मूल उद्देश्य इस तथ्य को उजागर करना है। दहेज–दानव, भ्रष्ट राजनीति, आर्थिक शोषण, मंहगाई की मार, भेदभाव, अभाव–अभियोग आदि पर कवि की नजर है तो कटते वन, नष्ट होते पशु–पक्षी, बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिक अभिशाप सिड़ते शहर और गंदलाते गाँव पर भी कवि ने लेखनी चलाई है ।

दहेज–दानव –

आज समाज में व्याप्त इस कुरीति के कारण कई नारियों को इसके लिए प्रताडित किया जाता है और दहेज दानव का रूप लेकर अपना आकार विशाल करते ही जा रहा है सभी चाहते है कि अधिक दहेज प्राप्त होने पर उन्हें समाज में अधिक प्रतिष्ठाा व मान–सम्मान प्राप्त होगा लेकिन यह साधारण व्यक्ति के लिए तो एक चितां का विषय है अगर वह अपनी बेटी को दहेज देने में असक्षम होता है तो उसकी पुत्री को कई यातनाएं देकर मार दिया भी जाता है। इसके कारण सुख भी प्राप्त नहीं हो जाता है तथा घर नरक के समान बन जाता है।

डाकी बण्यो दहेज, मोसी भोळी चिड़कल्यां।
उजड़ी सुख री सेज नरक बण्यो घर मोलका।। 6।।

आजादी रो अपरूप –

देश की आजादी के इतने वर्षों के बाद भी आम आदमी अपनी दैनिक आवश्यकताओं के अभाव में जी रहा है।

आभै अड़या अभाव, भरया पेट फिर–फिर भरै।
आजादी रो चाव माड़ो पड़गो, मोलका।। 24।।

वोटांरी राजनीति –

इसमें भ्रष्टाचार शासन व नेताओं के काले कारनामों का चिट्‌ठा खोलते हुये कवि कह रहा है कि नेता भोली–भाली जनता से कई वादे करते है जब उन्हें वोंटो की आवश्यकता होती है लेकिन जैसे ही वोंटो की आवश्यकता होती है। लेकिन जैसे ही वोट मिलने पर वही जीत जाते है अपने वादों को भूल जाते है और केवल अपने लोभ व स्वार्थपूर्ति को ही चाहते है।

आप लगावै आग, दमकळ ल्यावै दबड़कै।
घणो गंभीरो घाग, बोट बटोरै, मोलका।। 28।।

गन्दगी –

इसमें स्वच्छता के बारे में बताते हुये कवि कह रहा है कि हम अपने चारों ओर के वातावरण को अगर स्वच्छ रखना चाहेंगे तो इसके लिए हम सभी को मिलकर प्रयास करने होंगे। शहरों में सभी व्यक्ति अपने घरों की सफाई करके कचरा बीच सड़क पर फेंक देते है। वहीं गाँवो में भी ऐसा ही हाल देखने को मिलता है। जिससे चारों तरफ का वातावरण गंदगी व दुर्गन्ध से भर जाता है, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। 'आजादी रो अपरूप' आज भारत को स्वतंत्रता मिलने के पश्चात भी वह पूर्णरूप से आजाद नहीं हो पाया है। गरीबी भूखमरी, बेरोजगारी, अशिक्षा ने साधारण मनुष्यों को अपने जाल में घेर रखा है। इसलिए भारत स्वतंत्र होकर भी बंधन, दास्ता, गुलामी में बंधा हुआ है। तथा अभाव से ग्रस्त होकर अपना जीवन जीने के लिए मजबूर है। कवि नें गाँव व शहर दोनों का एक जैसा ही हाल बतलाया है।

स्हैरां बीच सड़ाध, गावाँ माही गन्दगी।
बदबोई रो बाँध मचळै–उझळे, मोलका।। 92।।

औद्योगिक अभिशाप –

बढ़ते उद्योगों के कारण हर तरफ वातावरण दूषित दिखाई देता है। उद्योगों से फेले प्रदुषण न आज भस्मासुर का रूप धारण कर लिया है।

धूं–धूं धूंवाँधार, कळ रो मळ फैल्यो घणो।
भस्मासुर रो वार, मुसकल बचणो, मोलका।। 93।।

जनसंख्या विस्फोट –

बढ़ती जनसंख्या हमारे लिए विनाशक रूप लेती जा रही है। इस के कारण मनुष्य के खाने पीन की भी भारी समस्या हो रही है।

आवै कद ओसाण, देख देश री दीवळी।
खाण–पाण अर ठाण, मिलणा मुसकल मोलका।।100।।

सर्वनाश –

आज समाप्त में बुरी सोच रखने के कारण स्वस्थ समाज की स्थापना भी नहीं हो पा रहीं है। तथा स्थान–स्थान पर अपनपी संस्कृति का भी लोप होता जा रही है परम्परासे भी पाश्चात्य संस्कृति और सभयता के प्रभाव में आकर लुप्त होती जा रहीं है भौतिकतावाद के कारण कहीं भी अपनापन देखने को नहीं मिल रहा हैं इसके साथ ही मनुष्य अपने स्वार्थ के कारण वन सम्पदा को उजाड़ता जा रहा है। वनों को काटने से लगातार, वातावरण में प्रदूषण का दुष्प्रभाव धीरे–धीरे हावी होता जा रहा है इससे यह हानि आज सभी को सहन करनी पड़ सकती है।

अजड्यो जीव–समाज, वन उजड़या उजडी धरा।
परदूसण री गाज, पडगह से पर, मोलका।।110।।

(5) पाँचवाँ शतक (भावां की बानगी, कुल 112 सोरठे) –

इस शतक में कवि ने इस काव्य के कथ्य एवं तथ्य का ही मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है। जनजीवन में मनुष्य की विविध भावनाओं की बानगी बतलाई है। लोगों के मन के क्षण–क्षण बदलते भाव और मनोविकृतियों का चित्रण किया है। इस मानसिक विकृतियों का प्रमाण एवं परिणाम के कारण आज समाज में किस प्रकार से खेल–खिलाये जाते है, उसको कवि ने उद्घाटित किया है।

पगा चालतो पाप, पुन्या में सै देखल्यो।
धामक धड़ियों धाप मौत नाचरी, मोलका।। 1।।

राजनीति रो धान, पोट बाँधियो धरम–पट।
ठावण दे कुण, मान सत पथ् चालो, मोलका।। 5।।

राजनीति रा खेत चरया ढ़ाढ़ा राजरा।
चिड़िया खायो खेत, ऊलैकिस विध, मोलका।।13।।

(6) छठा शतक (अन्योक्तियाँ–व्यंग्योक्तियाँ, कुल 112 सोरठे)

इस शतक में कवि ने आज के जन–जीवन पर अन्योक्तियों और व्यंग्योक्तियों के माध्यम से व्यंग्य बाण कसे हैं और आज के मानव की समालोचनात्मक खाल खींची हैं। समाज को तीखी बातें सुनायी हैं।

फूल गयो झट फूल, स्वास्थ् अपणो साधकै।
दुनिया गैरै घूळ, मत बलियाँ पर मालका।। 8।।
बाजै दीन–दयाल कै मैं आयो काम कद।
खेलै तू भी ख्याल, माया मालिक मोलका।। 42।।
बती डूबी तेल, कमर लुळी ज्यूं कामणी।
अन्त बळी यो खेल, प्रेमी खेलै, मोलका।। 63।।

(7) सातवाँ शतक (सुरंगी सीख, कुल 123 सोरठे) –

इस शतक में कवि ने समाज को 'सुरंगी सीख' देकर काव्य का समापन किया है। कवि ने समाज में जो भी देखा सुना और अनुभव किया उसके अनुरूप ही समाज के लिए सीख देकर कर्त्तव्य का पालन किया है। संस्कृत नाटको में 'भरत वाक्य' कहने की रीति रही है और इस परम्परा का निर्वाह करते हुए सीख देकर शुभ कामना करता है। इसी सीख के साथ यह रचना समाज को समर्पित करता है।

1. सीख –

राजै जनता–राज, तगड़ो ओपै त्याग सू।
त्याग रुल्यां के ताज, मच्छ गला गळ मोलका।। 7।।
मै झगडै री मूळ, रूँख बणै झट राड़ रो।
फळ खारा अर फूल, मन मिचळावै, मोलका।। 9।।
खोटो दाणो खाय, उन्नति चावै आपरी।
जड़ा मूळ सूं जाय, म्हैनत मोटी, मोलका।। 24।।

2. समरपण –

कीन्यां सबद वणाव, मन रस सूं उजळा करया।
जग सूं लीन्या भाव, जग नै अरप्या, मोलका।। 118।।

इस राष्ट्रीय पर्यावरण के सम्बोधन काव्य की साँगोपाँग विवेचना के बाद कवि श्री उदयवीर जी शर्मा की भाषा–शैली पर विचार करें तो वह राजस्थानी के पुनर्जागरण के लेखक श्री शिवचन्द भरतिया के ज्यादा नजदीक है। भावों के अनुसार ही भाषा–शैली है। काव्य पर आंचलिकता की छाप स्पष्ट रूप से झलकती है।

कवि का काव्य शेखावाटी क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। इसी अंचल की प्रकृति लोक जीवन, भाव और भाषा कवि की लेखनी में स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ती है। इसमे 'ठेठ राजस्थानी शब्दों के ठाठ के साथ तत्सम शब्द कम और तद्भव शब्द अधिक अपनाये हैं। पारिभाषिक शब्दों के भी कवि ने तदभव रूप अपनाये हैं। काव्य में अनुप्रास, यमक, अन्योक्ति, अलंकारों के साथ परम्परागत बैण सगाई का भी प्रयोग हुआ है। रूपक एवं उपमाओं की छटा भी अनोखी है। शब्दों का चुनाव जड़ाव और संगठन प्रभावशाली, तथा मनमोहक हैं।

विचारों में पूर्णतया मौलिकता, राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति सम–सामयिक सजगता सीधी प्रभावकारी है। परम्परागत 'सोरठा' छन्द और सम्बोधन काव्य से कवि ने इस रचना को सज्जित मंडित कर इस काव्य ग्रन्थ को एक नया आयाम दिया है जो प्रशंसनीय है। कवि की रचना में परम्परा और प्रगति दोनों का समन्वय है, सोने और सुहागे के मेल जैसा है। यह रचना लोकप्रिय काव्य विधाएँ बावनी, बहत्तरी, सतसई आदि से आगे बढ़कर **'सात शतकावळी'** के रूप में संजोयी गई है जिस में 886 सम्बोधन–सोरठे गूँथे गये हैं।

आधुनिक राजस्थानी साहित्य में सम्बोधन काव्य की दृष्टि से यह एक मात्र सबसे बड़ी और प्रथम काव्य रचना है। श्री दामोदर प्रसाद शर्मा के अनुसार – "ओ काव्य ग्रन्थ विचारां रो बाग, भावाँ रो भण्डार अर अनुभूतियाँ रो आगार है। इन में विचारां री मौलिकता, राष्ट्रीय समस्यावाँ रै प्रति सम सामयिक सजगता सीधी प्रभावकारी है।"[10]

कवि ने सातों शतकों के आरम्भ मे ने अलग–अलग देवताओं की आराधना के रूप मे मंगलाचरण से किया है। प्रत्येक मंगलाचरण में अलग–अलग देवता से अरदास करके उसे अलग–अलग नाम दिया है, जो अपने आप में अनुठा प्रयोग है। कवि अपने इस कर्म में सफल भी रहें है। पहले शतक की पुकार माँ दुर्गा से, दूसरे शतक की अरदास सरस्वती सें, तीसरे शतक की विनती गणेश से, चौथे शतक की वंदना श्रीराम से, पांचवे शतक की अरजी हनुमान से, छठे शतक का सुमरण गुरुदेव से और सातवे शतक का कीरत गान भारत माता सें किया गया है।

——————————

1. मोलके रा सोरठा – पैनी परख, दामोदर प्रसाद, पृ. 12

(ग) मुक्तक काव्य

मुक्तक काव्य में विभिन्न चौपदियों में कवि का चिंतन और जीवन दर्शन प्रकट हुआ है उसमें भारतीय संस्कृति, कर्मयोग, जीवन की क्षणभंगुरता अध्यात्म, नैतिकता, कर्मसाधना त्यागमयी जीवन शैली आदि के बारे में चितंन प्रकट किया गया है प्रत्येक चौपदी में किसी न किसी विचार को लेकर रचना की गयी है जिसमें कही कर्म की आवश्यकता, कर्म की सहजता, सक्रियता भारतीय जीवन पद्धति का समर्थन, चितंन की प्रौढ़ता आदि को प्रतीको कें माध्यम से बिम्ब व शैली का प्रयोग करते हुये प्रस्तुत किया गया है।

जगत सार नै समझण ताणी, नेमी धरमी भोत घणां।
वेद–पुराण लोक नै पढ़–पढ़, मतो विचारयो जणां–जणां।। 21 ।।

भव रो भेद किणी ना पायो, फैलायो दूणो उलझाड़।
जग–रस रमो करम–पथ चालो, जीवो जीवण सफल बणां।। 21।।

कवि ने प्रतीकात्मक शैली मे मनुष्य को जगत के झगड़ों को छोड़नें की शिक्षा दी है–

दिवलो बोल्यो जोवणिया सुण, मेरो सो जीवण व्रत ले।
जग रा झगड़ा छोड़ बावला, त्याग तपस्या मे तप ले।।
अन्तर तम नै बाळ जगत में, जीवन री जोती भर दे।
तेरी जीत जगमगै जग में, यूं तेरो जीवण फळ ले ।। 48 ।।

माया रै बल में या काया, कठपुतली ज्यूं चकरी डोर ।
घाणी हालो बैल फिरै ज्यूं, मिनख घूमै सुध बुध खोर।। 50।।

एक–एक कर सगला प्यारा, जावैगा जड़ तन्नै छोड.।
दो दिन रा ए सगला साथी, क्यूं राखै तू इण रो कोड।। 58 ।।

कवि ने कर्म करते रहने के लिए प्रेरित करते हुए कहा है–

चलणो ही जीवण री संज्ञा, रूकणो मरणो एक समान ।
चाल बटाऊ सत रै पथ पै, क्यूं जगती नै देख झकै।। 77 ।।

जिण री छायां बैठ जाणिया, सुसतावै लेवै या सीख।
पर–सेवा अर सुगरथ नर रा, अमर गंध ज्यूं गरणावै।। 104 ।।

(घ) भक्ति काव्य

हमारे भारतवर्ष में प्राचीनकाल से ही भक्ति की लहर चली आ रही है। सभी सम्प्रदायों व मतों में ईश्वर की साधना व उपासना की जाती है। सभी अपने–अपने तरीके से ईश्वर के गुणों का बखान व गुणगान करते है। उन्हीं मतो में नाथपंथ शैवमत के अन्तर्गत आता है। हमारे देश में धर्म के क्षेत्र में जिन महान महापुरुषों का नाम आता है, उनमें गुरु गोरखनाथ का नाम महत्त्वपूर्ण है। इन्होंने परमात्मा तक पहुँचने के लिए कई विधियाँ बताई जिन्हें गोरख साधना के नाम से जाना जाता है। इनके द्वारा दिये गये उपदेश को उनके बारह शिष्यों द्वारा बारह सम्प्रदायों में विभक्त किया गया जिनमें एक मन्नाथी सम्प्रदाय रहा है, जो शेखावाटी अंचल मे विशेष प्रचार प्रसार पर अग्रसर है।

इसी मन्नाथी परम्परा में सिद्ध योगी व अपनी विलक्षण अवधूत अमृतनाथ जी महाराज (फतेहपुर शेखावाटी) हुए। उन्हीं की शिष्य परम्परा को आगे बढ़ाते हुए सहयोगी संत श्री श्रद्धानाथ जी महाराज भी हुए।

पूज्य श्री श्रद्धानाथ जी महाराज का जन्म लक्ष्मणगढ़ तहसील के पनलावा गांव में आषाढ़ शुक्ल तृतीय संवत 1975 को हुआ। अपने विलक्षण कार्यो के कारण सम्पूर्ण शेखावाटी अंचल में विख्यात हो गये। श्रद्धानाथ जी महाराज ने कई देशों में प्रमुख तीर्थ व धार्मिक स्थानों का भ्रमण किया। संत महात्माओं के दर्शनों से जीवन के प्रति कई अनुभव भी लिये। अपने गुरु शुभनाथ जी महाराज के आग्रह पर इन्होंने 23 मार्च 1972 में लक्ष्मणगढ़ आश्रम की स्थापना की वहाँ कर्त्तव्य को बिना किसी सहायता राशि लिए स्वयं पूरा करके 21 अगस्त 1985 ई को गुरु चरणों की सेवा के लिए ब्रह्मलीन हो गये।

आज ये शारीरिक रूप से साथ न होकर भी समाधि रूप में सभी के लिए प्रेरक शक्ति के रूप में मौजूद है। हजारों आने जाने वाले परिचितों, दुःखी, भक्तों व श्रद्धालुओं की करूण पुकार को सुनकर उनकी रक्षा करते है, तथा उनकी समस्याओं का निवारण करते है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने '**श्रद्धा सागर**' काव्य में सतगुरु श्रद्धानाथ जी महाराज की जीवनी के विविध पक्षों को दोहों एवं सोरठों को सरल ढंग से अभिव्यक्त किया है। काव्य स्पर्श से इनकी जीवनी व उनके रोचक प्रसंगो का आकर्षण बढ़ा है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने उनकी जीवनी के महत्त्वपूर्ण प्रसंगो को सरल एवं सरस काव्य शैली में उनकी महती गरिमा के अनुकूल प्रस्तुत किया है।

श्रद्धानाथ जी महाराज के संत व्यक्तित्व व सकारात्मक सोच के साथ इन्होंने शेखावाटी बोली के माध्यम से एक प्राणवान काव्य की रचना की। किसी भी संत के चरित्र को अपनी वाणी के माध्यम से शब्दों में पिरोना एक रचनाकार का उसके प्रति आस्था का प्रमाण है। डॉ. उदयवीर शर्मा स्वयं एक संत प्रकृति के भक्त रहे है उनकी आस्था, भावना और चितंन उसी परिप्रेक्ष्य में जीवन्तता लिये हुए है। वे स्वयं कहते है कि उनके नाम मात्र से ही मुझे सृजनात्मक उर्जा प्राप्त होती है । डॉ. शर्मा कहते है –

थारो रूप विराट, सेवक मन ओछो घणो।
अंतर देवो पाट, नमो–नमो श्री नाथ जी।।

चेतन रमणो घूमणो, चेतन थारा बोल।
चेतन कण कण भावना चेतन प्रेम अबोला।।

इन्होंने श्रद्धा सागर के माध्यम से श्रद्धानाथ जी के महान गुणों और चारित्रिक विशेषताओं को काव्यबद्ध रूप में उजागर किया है। उन्होंने भक्तों व सेवको को सच्चा मार्ग बताया है उनके बारे में डॉ. उदयवीर शर्मा कहते है कि बाबाजी तो प्रेम के समुद्र है। इन्होंने सभी को अपने प्रेम के वशीभूत किया है।

बाधं प्रेम री डोर, भगतां रा मन बस करया ।
प्रेम तत्व रो सार, समझयो समझायो घणो।।

आश्रम की गरिमा व्यक्त करते हुये वे कहते है

शंकराचार्य सा तपी, धरम जगत समराट।
रम्या अठै करपातरी, आश्रम बण्यो विराट।।

इन्होंने भक्ति काव्य के अन्तर्गत काव्य को सूत्रात्मक विचारों व पूर्ण गहराई के साथ प्रकट किया है। इनके अनुसार जो भी महाराज के दर पर आया है उसकी झोली सदैव प्रसन्नता से भरी है।

खाली हाथां आणिया, जाता ले मन मोद।
ज्यूं दाता रै द्वार पै, रीतै कदै न होद ।।

इन्होनें श्रद्धानाथ जी के सरल व ज्ञान के भण्डार व्यक्तित्व को अपने काव्य के माध्यम से प्रकट किया है उनके अनुसार स्वयं प्रेममय बनकर प्रेम का विस्तार करो तथा चारो ओर प्रेम सौहर्द्र की भावना की लहर दौड़ाओं।

सदा लुटायो प्रेमरस, जीवन मुगत सुजान।
आणद मेलो लागियो, करयो पुलक रस–पान।।

प्रेम रूप परमात्मा, प्रेम जगत रो सार ।
कहियो सत मत नाथजी, करो मिनख सूं प्यार।।

एक प्रेम री आतमा, एक ईस–विस्वास।
भेद भाव सै बालदयो, थरपो प्रेम निवास।।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने 'श्रद्धा सागर के माध्यम से महाराज श्रद्धानाथ जी की जीवनी, जीवन चरित्र संत चरित्र की महानता व गरिमा को व्यक्त किया। यह इनकी सशक्त व प्रौढ़ कृति है। इसमें आत्मीय भावों की व्यंजना हुई है। इसमें इनके जीवन दर्शन की दार्शनिक झलक भी दिखाई देती है। इनके महिमामयी व्यक्तित्व को शर्मा जी ने भाव सम्पदा व व्यंजनात्मकता के माध्यम से प्रकट किया है।

इन्होंने श्रद्धानाथ जी की वाणी के एक–एक शब्द को मर्म–स्पर्शी व प्रेरणा देने वाला बताया है। वे त्याग को प्रदर्शन की वस्तु न मानकर भीतरी भावना मानते है

त्याग दिखावे री नहीं, त्याग मायली चीज।
त्याग गरब नै मेटणो, त्याग समरपण बीज।।

इन्होंने 'श्रद्धा सागर' के माध्यम से सिद्ध महापुरुष श्री श्रद्धानाथ जी के असाधारण व्यक्तित्व को उकेरा है इनके विराट व्यक्तित्व को बड़ी सफलता के साथ सरसता में प्रकट किया है।

गुरु महिमा जस कीरती, आभा रो आलोक।
जगमग करै समाध नै, दीपै सरधा लोक।।

भक्ति काव्य के अन्तर्गत इन्होनें श्रद्धा सागर, श्रद्धा समर्पण व भक्ति की अनुभूति परक मन मोहक अनुपम काव्य कृतियों के माध्यम से जीवन में प्रेम, त्याग का संदेश, प्रेरणा, भक्ति दर्शन, जीवन के मूल्य तत्वों का समावेश किया है।

श्रद्धा सागर

पड़ी भगत पर भीड़, उथल पुथल मन भट्करयो।
मेटो मन री पीड़, नमो–नमो श्री नाथ जी ।। 7।।

संत गुणां री खाण, निबलो मन अर लेखनी
किस विध करूं बखाण , नमो–नमो श्री नाथ जी।। 25।।

जनम योगी

पनलावो तीरथ बण्यो, सत री धार पुनीत ।
जनम भौम सिध संत री, कण कण गावै गीत।। 1।।

लाल तिलक धारी तपी, बाबो सिद्ध सुजाण।
गाहड़–भगती–परखली, हिवडो लियो पिछाण ।। 4।।

भ्रमण साधना

मन री दीठ जगावणां, सिद्धां रा सै धाम।
भाव बढ़ावै मांयला, धरम ध्यान रा थाम ।। 1।।

कासी गया पिराग, अर रिसीकेस हरद्वार।
सगलै रमिया नाथजी, आंणद मिल्यो अपार ।। 11।।

सरधा भगती प्रेम रो, उजलो रूप सरूप ।
बठै विराजै सांवलो, भारत मन रो भूप।। 5 ।।

देह भूल न्हाया जणा, आपो जुडयो विराट।
सत्ता में सत्ता मिली, मन रो मिट्यो उचाट।। 28।।

चमत्कार

आर्य समाजी दो जणा, उलझया करयो विवाद।
एक मरयो तन–जलण सूं, दूजो खोई याद।। 170 ।।

यादां दयाई नाथजी, करजो करियो माफ।
हरिजण हरखाया धणा, गूंगो बोल्यो साफ।। 179 ।।

सौ कोसां लग गूंजरया, इमरत बोल अणंत।
जै, जै, जै, श्रीनाथजी, इण धरती रा संत।। 190 ।।

जै, जै, जै, श्रीनाथजी, मनहर रूप अनूप।
भगत बछल करूणाकरण हिवड़ो मोम–सरूप।। 192।।

सुगणी सीख

संजम निष्ठा साधना, परम जोत विसवास।
नित पूजा नित ध्यावना, राखो हरख हुलास।।1।।

रस पूरो संसार यो, समझयो संत सुजान।
प्रेम रमै परमातमा, 'सरधा' दीन्यो गयान।। 3।।

आपो खोवै बूंद ज्यूं, राख समरपण भाव।
करता सारी ओटले, सत रज तम रा चाव।। 5।।

आपों सूपं विराट नै, अपणी सत्ता भूल ।
कारज करै विदेह बण, यो समाधि रो मूल।। 7।।

प्रेम रूप परमात्मा, प्रेम जगत रो सार।
कहियो संत–मत नाथजी, करो मिनख सूं प्यार।। 13।।

सिद्ध समाधि

तनडै ताणी उणमणा, अन्तर धणो सचेत।
मनस्या–बल पे तन टिक्यो, जग सूं बणया अचेत।। 1।।

भाव बदलिया नाथजी, जग सूं हुया उदास।
मन री धूणी तापरया, जाणी कोई खास।। 2।।

देह भूल अब नाथजी, मन मे करयो निवास।
जोत–जोत सूं जोडली, अन सूं हुआ उदास ।। 13।।

परम तत्व रै बोध सूं प्रगटै च्यानण दीठ ।
मिलै लोक आलोक सूं, एकोकार अदीठ ।। 14।।

समरपण

भगता में शिव रूप हा, ओढरदानी नाथ ।
आमी बांटयो ग्यान रो, सत गुरू सरधानाथ।। 1 ।।

सुख सौरभ मुख कवलं सूं, फूटै करै सनाथ।
करूणा भावी सान्त चित्त, सत गुरू सरधानाथ ।। 3।।

मन री पीड़ पिछाण, सेवक नै समझावता।
मत कर घणी उड़ाण सत गुरू सरधानाथजी ।।14।।

जगती रा जंजाल, भगती मे बाधक बण्या।
राखो सार–संभाल, सतगुरू सरधानाथजी।। 18।।

प्रार्थना–सप्तक

ब्रह्मचारी, योगधारी, ज्ञानसिद्ध परमार्थी।
तत्व ज्ञाता, बुद्धिदाता, सद्‌गुणों के सारथी ।। 1।।

जन्म योगी, सत्यभोगी मोक्षकारी साधना।
मस्त मौजी, तत्वखोजी, सत्य चित्त अराधना ।। 3।।

जगत स्वामी परमधामी, भक्त के भगवान है ।
रक्षा करो रक्षा करो, नाथ पुरण काम है ।। 5।।

पाप मोचन, ज्ञान लोचन, जय जय पूरण काम है।
जय–जय श्रद्धानाथ गुरुजी बारम्बार प्रणाम है ।। 6।।

(ङ.) कथा काव्य –

कथा काव्य के अन्तर्गत राजस्थान के प्रसिद्ध प्रेमाख्यान 'मूमल' और पांच ऐतिहासिक कथानकों को मानवीय संवेदना और राजस्थान के सांस्कृतिक मानव मूल्यों के रूप में प्रस्तुत किया है।

मूमल एक प्रेम कथात्मक काव्य है जिसमें संयोग व वियोग का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। लौकिक जीवन से जुड़े हुये इस कथा काव्य मे जीवन की मौलिकताओं व पारम्परिक श्रृंगार पक्षों में दोनों पक्षों का चित्रण किया गया है। इसमें उन्होनें अपने लोक संस्कृति लोक इतिहास, लोकरंग का मार्मिक चित्रण किया गया है।

इनकी कथाओं में देश प्रेम और धर्म की रक्षा से जुड़ी पांच कथाओं को **'सत री सौरभ**' काव्य मे अभिव्यक्ति दी है। 'मूमल' और 'सत री सौरभ' दोनो लघु काव्य है। एक में जहाँ प्रेम की पवित्रता के लिए त्याग है वहीं दूसरी में राजस्थान की आन–बान और मान मर्यादा के सर्वस्व अर्पण का आदर्श है। '**सत री सौरभ**' की ये ऐतिहासिक कथाएं अपने कथ्य में एक ऐसी प्रेरणा लिए हुए है जो भविष्य मे समाज के लिए प्रेरक होगी।

राजस्थान की भूमि में वीर संस्कृति में त्याग, शौर्य, बलिदान, मातृभूमि की रक्षा के लिए सर्वस्व समर्पण आदि भाव है। इसके साथ ही भाव, कल्पना, समरसता, काव्य कौशल शिल्प आदि की विशेषताओं से परिपूर्ण हैं।

मूमल –

राजस्थान की अमर प्रेम कहानी 'मूमल' सहज, सरस और संवेदना से पूर्ण है। इस प्रेम कथा के 211 पद्यो को कवि ने पांच खण्डों मे विभक्त किया है।

(1) महेन्दरो 33 पद्य (2) सिकार 65 पद्य (3) आणौ–जाणौ 39 पद्य

(4) अड़चन 31 पद्य (5) प्रेम परीक्षा 43 पद्य ।

मूमल एक प्रेम कथा है, जिसमे मूमल के रूप, श्रृंगार, विरह मिलन आदि का सहज भाव मे वर्णन किया गया है। कवि द्वारा मूमल का जो शब्द चि़त्र बनाया गया है, उसे पाठक वर्ग अपने मन से स्वतः ही आत्मसात कर सकता है। वर्णन को पढ़कर ऐसा लगता है, जैसे मूमल हमारी आखों के सामने खड़ी है। उसके रूप सौन्दर्य से सभी प्रभावित होते है।

कड़या रळकता केस सजीला, बाळ–बाल मोती ज्यारा।
ज्यूं मावस री रात अंधेरी , दीपै साथै ले तारा।।

नाक सूरंगी सूवो लाजै, रतनारा रस झीणों नैण।
काजळियें से ओपै दूणा, बोली मीठी ज्यूं पिक बैन।।

लाल गुलाबी रेषम बरणा, कवळा–कवळा पतळा होठ।
बतीसी चिमकै भीतर सूं, रूप रंग री बांधी पोट ।।

मूमल की सुन्दरता को देखकर महेन्द्र अपनी सुध–बुध खो बैठता है। ऐसी सुन्दरता उसने पहले कभी नहीं देखी थी।

दो चंदा देख्या इक साथ, गगन चमकतौ मेड़ी मांय ।
म्हेन्दर मिरगौ बण्यौ ठग्यौ सो, मूमळ मुळकी मनड़ मांय।।

इस प्रेम कहानी मे श्रृंगार रस के दोनों रूप संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार देखने को मिलते है। मूमल का वियोग में बुरा हाल हो जाता है।

मिरगानैणी, चंदा बदनी, गजगमनी सूवै सी नाक।
विरह लाय सूं सारी सुसगी, चूस्यौड़ी नींबू सी फांक।।

सत री सौरभ –

सत री सौरभ मे कुल पांच कथा संग्रहित है और कुल 350 पद्य है। इन कथाओं मे

(1) पदमा 51 पद्य (2) हाडी राणी 65 पद्य

(3) विद्‌युलता 81 पद्य (4) कानसिंह री वीर मायड़ 51 पद्य

(5) महामाया 102 पद्य ।

राजस्थानी संस्कृति से झिलमिलाती कथाओं में से पांच विशेष कथाओं को चुनकर कवि ने यहां संग्रहित किया है। इन कथाओं मे प्रण पालन, त्याग, बलिदान , धर्म, बल और शौर्य आदि का रूप दिखाई देता है।

चित्तोड़ चमकरयो चांदी ज्यू, केसरियो झंडो चिमकै हो।
मेवाड़ भौम रै कण–कण में , वीरां रो गौरव दमकै हो।।

देश प्रेम देखते ही बनता है।

देस प्रेम रा बादल उमड़या जुद्ध भेस में दीपे जोस।
कड़ी–कड़ी कवचां री खणकै, मोद–भांग पी नाचै होस ।।

मरुभूमि की क्षत्राणियां स्वयं अपने पति को युद्ध के लिए प्रेरित करती रही है।

प्राणनाथ जावो रण खेतां, राष्ट्र रुखाळो राखो आण।
विजय पताका लहरै थारी, मेरो प्रेम रुखाळै प्राण।।

डॉ. उदयवीर शर्मा की कथाओं की पृष्ठभूमि मे ग्रामीण परिवेश के दर्शन होते है। इन कथाओं में गाँव के रास्तों, खेतों, बाड़ों, मौसम आदि का चित्रण किया गया है। इन कथाओं में समाज की सम्पूर्ण गतिविधियाँ दृष्टिगत होती है।

डॉ. उदयवीर शर्मा के काव्यों मे **प्रशस्ति काव्य** भी अपना विशेष महत्त्व रखता है। प्रशस्ति काव्य का विकास वैदिक स्तोत्रों से माना जाता है। वैदिक काल में देवताओं की स्तुतियां की जाती रही है, जो प्रशस्ति काव्य के ही उदाहरण है। लेकिन समय के साथ देवताओं के गुणगान के स्थान पर मनुष्यों का गुणगान होन लगा क्योंकि उन्होंने अपने कार्य से देवत्व प्राप्त कर लिया है। प्रशस्ति का अर्थ है – प्रशंसा, बड़ाई, यश, कीर्ति। प्राचीन काव्य कार अपने आश्रयदाता के दरबार में रहकर अपने आश्रयदाता की प्रशंसा वीरता, उदारता, दयालुता, दानशीलता, का अवसरानुकूल प्रशस्ति गान किया करते थे। यह काव्य रचना प्रशंसा पात्र को प्रसन्न करने के दृष्टिकोण से की जाती थी, अतएव इन रचनाओं का अत्युक्तियुक्त होना सम्भव है। प्रशस्ति काव्य में कवि किसी विशिष्ट व्यक्ति के कृतित्व की अच्छाइयों को उजागर करते हुए उसके प्रति अपने आदर भाव को अभिव्यक्ति देता है।

डिंगल काव्य में दुरसा आढा कृत 'विरूद्ध छिहतरी', केशवदास गाडण कृत 'गुण रूपक' सूर्यमल्ल मिश्रण कृत 'रामरंजाट' आदि कृतियों का उल्लेख किया जा सकता है। आधुनिक समय मे भी अतीत की परम्परा को निभाते हुए अनेक प्रशस्ति काव्यों की रचना की गई है। इनमे उल्लेखनीय काव्य कृतियां है – नाथूसिंह महियारिया कृत गांधी शतक, नारायण भाटी कृत दुर्गादास व परमवीर, रामेश्वरदयाल श्रीमाली कृत हाडी–रानी, हणुवन्त सिंह कृत 'सूरा दीवा देश रा' आदि । इन प्रशस्ति काव्य की परम्परा को प्रशस्त करते हुए **डॉ. उदयवीर शर्मा** ने आधुनिक युग और परिस्थितियों के अनुरूप प्रशस्ति काव्यों की रचना की है। सेवा–साहित्य, दान–बलिदान, शक्ति–भक्ति की परम्परा शेखावाटी में सदैव रही है।

ऐसे भावों से विभूषित प्रशस्ति में डॉ. उदयवीर शर्मा शतक काव्यों का सर्जन किया है। जो निम्न प्रकार है –

(1) श्रीलाल शतक	(2) गंगाधर शतक	(3) मनोहर शतक
(4) सुरजन सुजस	(5) म्हारो गाँव	(6) मरुधर शतक
(7) गुरु महिमा	(8) श्रद्धा शतक	(9) विद्याधर सौरभ शतक
(10) श्रद्धा सौरभ शतक	(11) वामन बण्यो विराट (सौरभ शतक)	

श्री लाल शतक मे बिसाऊ में जनमे प्रख्यात शिक्षाविद् व साहित्यकार पं. श्रीलाल मिश्र के जीवन चरित्र को उजागर करने का सफल प्रयास कवि द्वार किया गया है। पं. श्रीलाल मिश्र की प्रशस्ति में 107 दोहे रचे गये है। मिश्र जी श्रेष्ठ शिक्षक, प्रवीण प्रशासक, समर्थ साहित्यकार, पुष्ट पहलवान, सच्चे स्वतंत्रता सेनानी, दलितों के देवता, शिष्यों के सिरमोर, पक्के पुरूषार्थी थे।

छीन दुःखी, निबळा, दलित, सैं नै मिन्तर मान।
काळजिये में ठौड़ दी, आं हित लड़या सुजान ।।

शिक्षा अर साहित्य मे रह्या सरावण जोग।
पहलवान नामी घणा, यो लूठों संयोग।।

शिक्षा विद्, धाकड़ कुसल खरा प्रशंसक धीर।
शिष्य सहायक बांटिया , विद्या गुण गंभीर।।

पुरुषारथ रा महारथी, ज्ञान लोक रा सूर।
पुन्यधरा रा यातरी, जस जोड़यों भरपूर।।

पं. श्रीलाल मिश्र सक्रिय सामाजिक कार्यकर्ता व सच्चे समाज सेवक थे। उनका त्याग, तपस्या, कर्म–कौशल, देश भावना, मानव धर्म, करूणा भाव आदि गुण सभी के लिए प्रेरणादायक है।

गंगाधर शतक में वैष्णवी और वेदान्ती विद्वानों की नगरी लक्ष्मणगढ़ के पं. गंगाधर जोशी की प्रशस्ति मे डॉ. शर्मा ने 111 दोहों की रचना की है। पं. जोशी शास्त्रों के अनुपम ज्ञाता, वेद पुराण, गीता–भागवत, दर्शन–उपनिषद् और प्राचीन संस्कृत वाड्.मय के उद्भट विद्वान थे। जोशी जी निर्भीक, स्वाभिमानी, वेश–विचार दोनो से धार्मिक, सह्रदय, संवेदनशील थे। माँ भगवती के परम उपासक जोशी जी की कीर्ति कथा 'गंगाधर शतक' पांच भागों मे विभक्त है।

पहले भाग में उनके ज्ञान–ध्यान, धर्म–कर्म, शक्ति–भक्ति, तत्व–सत्व, लोक–शास्त्र आदि का बड़ा ही भावपूर्ण चित्रण किया गया है।

गंगाधर ग्यानी गुणी, गंगाधर रिसी रूप।
गंगाधर सत–सूरमा, वां रो रूप अनूप।।
ग्यान करम समरस बणा, कीनी तत्त्व पिछाण।
भगती र समे घणा रम्या, जगती रस ने जाण।।

दूसरे भाग मे प्रेम, अन्तर्मन, आध्यात्मिक व भक्ति भाव को अभिव्यक्ति दी गई है। **तीसरे भाग** में संत–सज्जन–ज्ञानी व्यक्ति व दुर्जन अज्ञानी व्यक्ति का वर्णन करते हुए अप्रत्यक्ष रूप से जोशी की महिमा गान किया है।

रोम–रोम मे फूटियो , भगति रो रस रंग।
अन्तर झूम्यों बाजियो, अनहद अन्तर चंग।।

सजना रा मेळा भला, भली उणा री बात।
दुष्ट कदे छोड़े नहीं, अपनी बाण कुजात।।

चौथे भाग मे मरुधर के माध्यम से मरुभूमि के इस संत की प्रशस्ति की गई है। **पांचवे भाग** मे पं. गंगाधर जोशी की कीर्ति को अजर–अमर करने वाले पूज्य भाव है, और कवि ने उन्हें अपना भाव गुरु बनाया है।

तन बळियों गुण ना बळया, प्रगट्या घण तप जोर।
डम्बर फूटी जगत में, कण–कण भाव हिलोर।।

भाव सुमन अरपण कर्या, श्रद्धा भाव बणाय।
अन्तर जोत जगाइयो, भाव गुरु नित आय।।

मनोहर शतक यह शतक काव्य कवि ने अपने गुरुदेव 'साहित्यमनीषी' डॉ. मनोहर शर्मा की प्रशस्ति मे रचा है। जिनकी प्रेरणा, मार्गदर्शन, व छत्रछाया में कवि साहित्य–सृजन के पथ पर आगे बढ़े और बढते चले गये। मनोहर शतक काव्य हिन्दी और राजस्थानी के यशस्वी साहित्यकार डॉ. मनोहर शर्मा के जीवन पर गुरु दक्षिणा के रूप में लिखा गया है। डॉ. मनोहर शर्मा एकनिष्ठ साहित्य साधक थे। इन्होन प्राचीन–अर्वाचीन साहित्य, शोध, संपादन, संग्रह और साहित्य की सभी विधाओं में उच्चस्तरीय लेखनकार्य किया है।

मनोहर शतक में वंदना, परिचय, साहित्य साधना और समरपण शीर्षकों के अन्तर्गत डॉ. मनोहर शर्मा के व्यक्तित्व के साथ कृतित्व को भली भांति उजागर किया गया है। कवि ने अपने गुरु के प्रति समर्पित पूज्य भाव को बड़े सुन्दर ढंग से चित्रित किया है।

दियो मनोहर ज्ञान, गुरुवर परस सुहावणों।
विनवूं चरण महान, वरदहस्त सिर पर धरो ।।

इस प्रकार संपूर्ण कृतित्व को बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। शतक के प्रत्येक छन्द मे प्रकट कवि की भाव प्रवणता, आत्मीयता और सहृदयता अव्वल दर्जे की है। अंत मे पूर्ण श्रद्धा व समर्पण भाव से कवि ने कहा है –

करै हजारां शिष्य नित, कल कीरत रो गान।
काव्य, कला, साहित्य अर, विद्या विनय निधान।।
शतक बणा चित चाव सूं, गुण गौरव आधार।
उदयवीर अरपण कर्‌यो, श्री गुरु परम उदार।।

सुरजन–सुजस यह काव्य कवि ने शेखावाटी के सुप्रतिष्ठित इतिहासकार ठा. सुरजन सिंह शेखावत, झाझड़ (झुझुनू) के जीवन चरित्र एवं साहित्य साधना को उजागर करने की दृष्टि से उक्त शतक लिखा है। इस शतक की प्रेरणा श्री गोपीराम जी मुरारका , नवलगढ़ से मिली। इस काव्य में सुरजन सिंह जी शेखावत की शालीनता, आत्मीयता, सहृदयता, विद्वता आदि से प्रभावित होकर कवि ने उनके गुणों व कार्यों को 111 छन्दों (9 सोरठों व 102 दोहो) मे बद्ध करके गुणीजनों के सम्मुख प्रस्तुत करने का संस्तुत्य कार्य किया है।

विनवूं चरण पुनीत, जय वरदा वागेसरी।
पाळू साहित रीत, थारो बळ पा सारदा।।

श्री सुरजन सिंह के व्यक्तित्व–कृतित्व के उज्ज्वल पक्ष को उद्‌घाटित किया है।

तन रजपूती भावना, मन सहित री चाह।
दोनूं भाव उजाळिया, वाह रै सुरजन वाह।।
मितभासी ग्यान सुधी, गुण पूरो नर नांह।
कीरत थामा रोपिया, वाह रै सुरजन वाह।।
ख्यात बात इतिहास में, थारी पैनी दीठ।
सहित रो पख ऊजळो, रंग सुरंग मजीठ।।

कवि ने श्री शेखावत लिखित राव शेखा, मांढण युद्ध, नवलगढ का इतिहास, शेखावाटी प्रदेश का प्राचीन इतिहास आदि प्रसिद्ध शोधपूर्ण कृतियों का उल्लेख किया है, जो उनके इतिहास और साहित्य गौरव का परिचायक है।

म्हारो गाँव यह डॉ. उदयवीर शर्मा की श्रेष्ठ कृति है। यह काव्य कवि ने अपने पिताश्री चिमनलाल जी के श्रीचरणों में समर्पित है। इस काव्य मे कवि ने तन–मन–धन से अपनी जन्मभूमि के प्रति कृतज्ञता व आदर भावना के साथ कुल पन्द्रह शीर्षकों मे अपने गाँव

बिसाऊ का सांगोपांग चित्रण व यशोगान किया है। श्री गणेश वंदना के साथ कवि अपने गाँव के गौरव, गढ़, टीबा, जोड़ा, बाग बगीचा आदि का चित्रण मंगल कलश और समरपण मे अपने आत्मिक भावों को अभिव्यक्ति दी है।

मात भोम तू नाम धन, तू प्यारो सूख धाम।
तू जीवण रो प्राण–धन, अमर बिसाऊ गाँव।।

कवि ने अपने गाँव बिसाऊ के प्राकृतिक सौन्दर्य का मनोरम चित्रण किया है। यहाँ के बीड़, टीबड़ा, जोड़ों बाग–बगीचों के सौन्दर्य से अभिभूत हो उनकी सरस भावाभिव्यक्ति है।

एकै पासे टीबड़ा, दूजै पासै बीड़।
मरु मांडण यं मोवणा, वा जीवां रो नीड़।।

बीड टीबडा बाड़ियां, भर ऊंची गूगाण।
इण रै रस गौरव जूड़ी, तेरी मधुर पिछाण।।

रस मतवाळी बेलड़्या, रंग बिरंगा फूल ।
बिरछ सुरंगा सोवणा, सैं उपवन सुख मूळ।।

इस काव्य मे कवि ने बिसाऊ के गढ़, मंदिर, विद्यालय, पुस्तकालय का भी प्रशस्ति गान किया है। संत–महात्माओं को भी श्रद्धापूर्वक स्मरण किया है। मंगळ–कळश में कवि की अभिलाषा है कि सभी क्षेत्रों में बिसाऊ का कीर्ति यश फैले व सभी सुखी रहें, यही मंगलमयी कामना की गई है। समरपण मे पूर्ण समर्पित भाव से अपनी जन्म भूमि को सबसें बड़ा तीर्थ स्थल बताते हुए, इसका यशोगान किया है।

बसो बिसाऊ सौ गुणो, कीरत करे किलोळ।
जण रो जीवण जगमगै, सुख घट पोळमपोळ।।
गाँव घणा तीरथ घणा, पुन्न थल धाम अनेक।
जलम भोम सो पुन्नथल, ढूंढयो मिलै न एक।।

सम्पूर्ण काव्य में कवि ने अपन गाँव के प्रति कृतज्ञता का भाव व आत्मीयता को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। म्हारो गाँव बड़ी सरस, मनमोहक व भावपूर्ण रचना है।

मरुधर शतक वास्तव में तो प्रशस्ति काव्य नहीं है। लेकिन मरुभूमि की महिमा का यशोगान जिस आत्मीयता के साथ कवि ने किया है, उसे देखते हुए इसे प्रशस्ति काव्यों में शामिल कर सकते हैं। इस शतक काव्य में, मरुधर महिमा, मरुधर री मुळक, पर्यावरण–प्रदूषण, शहर–गाँव, राज अर समाज, मरुवेदना और समरपण इन सात खण्डों मे

167 सोरठों का सृजन कर मरुधर री महिमा व प्राकृतिक सौन्दर्य का सजीव चित्रण किया है। इस धोरों की धरती मे उत्पन्न उद्‌भट वीरों व मरु–मांटी की महिमा को कवि ने चित्रित किया है।

निवण–निवण नटराज, जूझारां ने जलमिया।
गरणायों गुण गाज, मरुधर मद महकावज्यो।।
मरुधर मैठ मरोड़, झूंझारा रो झूझणों।
हुवै न होसी होड़ , गौरव गावै गीतड़ा।।

'मरुधर शतक' मूलतः प्रकृति काव्य है। मरुधर री मुळक शीर्षक खण्ड मे मरुधरा की प्राकृतिक छटा का बड़ा ही मनोहारी व रसपूर्ण चित्रण कवि ने किया है।

लहरा लेवे लोग, गावै गीत गुवाळिया।
सावण सुख संजोग, मरुधर मन मीठी मुळक।।

इस काव्य में कवि ने पर्यावरण–प्रदूषण व शहर गाँव शीर्षक मे प्राकृतिक प्रदूषण व सांस्कृतिक प्रदूषण के प्रति चिन्ता को व्यक्त किया है, और राज अर समाज मे वोट की राजनीति, नेताओं की कुटिलता, भौतिकता की अंधी दौड़ सामाजिक मूल्यों का पतन आदि का यथार्थ चित्रण किया है।

गुरुमहिमा शतक इस काव्य में कवि ने 115 दोहों का सृजन कर गुरु की महिमा का गुणगान किया है। इस काव्य के प्रेरक आपके अभिन्न मित्र डॉ. अमोलक चंद जांगिड रहे है। यह काव्य आपकी गुरु भक्ति का अनुकरणीय उदाहरण है। कवि ने अपनी शैक्षिक व साहित्यिक सफलताओं का संपूर्ण श्रेय गुरुकृपा को ही दिया है। इस कृत–कृत्य भाव से भावित हो गुरु का गौरव गान किया है। यह शतक श्री गणेश, गुरु गौरव, गुरुमहिमा, जुगबोध और समरपण इन पांच शीर्षकों मे वर्णित है। गुरु का पद भगवान से भी बढकर माना गया है। गुरु ज्ञान की ज्योति है, शिष्यों के अन्तर को जाग्रत कर ज्ञानपथ पर अग्रसर करने वाला है। गुरु का आशीर्वाद मिलनें पर सभी कार्य सफल हो जाते है। गुरु तो सच्चे कृपा निधान है।

गुरु हिवडै रो च्यानणौ, दिव्य ज्ञान री जोत।
अमर चेतना जगत री , अंधियारै री मोत।।

जिण–जिण नै गुरु आदर्‌यो, उजळया बांरा नाम।
कीरत थामा बै बण्या, जे'ड़ा लिछमण राम।।

गुरु तीरथ गुरु देवरो, गुरु सांचल भगवान।

गुरु सेवा में नित रमो, गुरु तो क्रिपा–निधान।।

पर, वर्तमान युग में न तो गुरु की गरिमा रही, न शिष्यों का समर्पण भाव। भौतिकतावादी आर्थिक युग में गुरु–शिष्य संबधों मे बहुत बदलाव आ गया है, जो हम सभी के लिए विचारणीय है।

श्रद्धा शतक यह काव्य शेखावाटी के सिद्धसंत श्री श्रद्धानाथ जी को समर्पित है। इस में सुविख्यात लोकोपकारी संत श्री श्रद्धानाथ जी के पावन व प्रेरक जीवन चरित्र को रेखांकित किया गया है। सहज योगी संत श्रद्धानाथ महाराज के उदात्त जीवन चरित्र, जीवन चरित्र, जीवन गाथा व कीर्ति कथा का बखान करने की दृष्टि से कवि 'श्रद्धा–सागर' शीर्षक से एक काव्य ग्रन्थ का निर्माण किया। इसमे लगभग 600 दोहे–सोरठे है। जिसका प्रकाशन मुश्किल था, इसलिए इसे तीन शतकों मे विभाजित कर प्रकाशित करवाने का निर्णय लिया गया जो निम्न प्रकार है – (1) श्रद्धा–शतक (2) श्रद्धा सौरभ (3) श्रद्धा सुजस। इसमे प्रथम श्रद्धा शतक मे 211 छंदों (23 सोरठे और 188 दोहे) का संकलन किया गया है। इस काव्य के प्रारम्भ में अपने भाव सुमन समर्पित करते हुए सिद्धसंत श्री श्रद्धानाथ जी महाराज के श्रीचरणों की वंदना प्रस्तुत की है।

नाऊं चरणां सीस, सहज संत सिध आतमा।
मेरे मन रा ईस, नमो–नमो श्री नाथ जी।।

चरण कमल पर सीस, प्रेम सनेसो देणिया।
दयो बुध री बकसीस, नमो–नमो श्री नाथ जी।।

'विद्याधर सौरभ शतक' इस काव्य मे चूरू में जन्मे कृत उद्भट विद्वान और बीकानेर राजघराने में सम्मानित महामहिम विभूति पं. विद्याधर शास्त्री की प्रशस्ति मे कुल 175 दोहो की रचना की गयी है। यह काव्य वंदना, अवतरण, सौरभ, बिरमलीन, और समरपण इन पांच शीर्षकों मे विभक्त है। पं. विद्याधर शास्त्री संस्कृत भाषा और साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान थे। आप डूंगर महाविद्यालय मे संस्कृत के विभागाध्यक्ष रहें है। आपन संस्कृत बहुत से ग्रथों का सृजन किया है।

श्रद्धा सौरभ शतक 'श्रद्धा–सागर' काव्य ग्रंथ के दूसरे भाग के रूप में 'श्रद्धा सौरभ शतक' का प्रकाशन किया गया। इसमे 14 सोरठे व 163 दोहे है, जो सात शीर्षकों मे विभक्त है। सर्वप्रथम कवि ने नाथ जी महाराज से सेवक–सेव्य भाव से अरदास की है।

सुणों–सुणों अरदास, पीड़ा मेटो मांयली।
चरण शरण री आस, नमो–नमो श्रीनाथजी।।

द्वितीय शीर्षक 'सिद्ध संत' में श्री श्रद्धानाथ का बचपन, शिक्षा–दीक्षा, वैराग्य, प्रेम, भक्ति, साधना आदि का भावपूर्ण चित्रण किया गया है। कवि के अनुसार बालक नारायण ने कोई औपचारिक शिक्षा ग्रहण नहीं की । सिर्फ अक्षर ज्ञान ही था। लेकिन आत्मिक ज्ञान व लोक ज्ञान उच्च कोटी का था। मात्र 8 वर्ष की अवस्था में ही पिता का साया सिर से उठ जाने पर भी बालक ने धैर्य नहीं खोया और सभी को धीरज बंधाया। उसके इस व्यवहार से सभी समझ गये की यह सच्चा योगी बनेगा। नारायण ने श्री अमृतनाथ जी को अपना मानसगुरु बनाकर भक्ति प्रेम में मगन हो गये ।

मायड़ प्यारो ग्यान रस, उपजायो अनुराग।
जुड़िया इमरतनाथ सूं, लहरायो मन बाग।।

तृतीय 'रमण भ्रमण' शीर्षक में काशी, गया, प्रयाग, ऋषिकेश, हरिद्वार, कोलायत, ओंकारेश्वर, कुंभ, कुरुक्षैत्र, स्वर्णमंदिर, पशुपतिनाथ आदि अनेक तीर्थस्थलों की यात्रा व पुण्यलाभ प्राप्त करने का वर्णन है। चतुर्थ शीर्षक 'सहजयोगी सुजस' में श्री श्रद्धानाथजी का पावन उज्ज्वल चरित्र व गुणों का गौरव गान किया गया है।

मिनखपणै तांणी नम्या, निरमल आतम वान।
समरसता री मुरती, सहज गुणा री खान।।

इस शतक में भक्ति–भाव की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति हुई है। श्रद्धा–प्रेम, सेवा–समर्पण की सौरभ से सुरभित इस शतक की प्रस्तुति सरस व शानदार है। इस शतक को श्री श्रद्धानाथ जी महाराज के श्रीचरणों में समर्पित करते हुए कवि ने लिखा है।–

थारा गुण सरणाम, भाया सो गाया अबुध।
मेरो तो बस नाम, थांरी थांने भेंट या।।

भावां रो सिणगार, श्रद्धा सौरभ शतक यो।
भगती रो उदगार, उदयवीर अरपण कर्‌यो।।

वामन बण्यो विराट (सौरभ शतक) – यह शतक सुविख्यात शिक्षाविद् व गणितज्ञ डॉ. घासीराम वर्मा के जीवन परिचय व उनके उदात्त व्यक्तित्व की निर्मल झाँकी प्रस्तुत करने वाली कृति है। इस सौरभ शतक काव्य को प्रशस्ति काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। यहाँ डॉ. वर्मा की दान भावना, परहित चिंतन, परसेवा हितार्थ समर्पण, जनकल्याण, शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए आर्थिक सहयोग, महिला शिक्षा के विकास हेतु तन–मन–धन से सहयोग, निःस्वार्थ सेवा भावना, सहज–सरल व सादगीपूर्ण जीवन आदि अनेक मानवीय गुणों को इस शतक के माध्यम से गाया – गूंथा गया है। कवि शर्मा ने इस काव्य में 197 दोहों में नमन, वंदन, बचपन, पढ़णों–पढ़ाणों, यूरोप भ्रमण, कीरत–कुंभ, जस

री सौरभ और समरपण इन सात भागों में डॉ. घासीराम वर्मा के जीवन चरित्र को चित्रित किया है। कवि ने डॉ. वर्मा को श्रद्धापूर्वक नमन किया है।

दान्या री ऊंची धजा, नमन करै संसार ।
दीन दुख्यां रा देवता, लोक हियै रा हार।।

दिव्य लोक रा महारथी, भाव लोक रा दूत।
वंदन उण री जोत नै, रचना धरमी पूत।।

सादा जीवन उच्च विचार के अनुयायी डॉ. घासी राम जी वर्मा ने दान को ही धर्म का मूल माना है।

सादो जीवन जीवणों, ऊंचो भाव विचार।
जीवन पथ पै चालिया, घासी घणो उदार।।

दान दया री साधना, दान धरम रो रूप।
मानव–पोसण धरम भल, थे समझी नर भूप।।

कवि उदयवीर शर्मा ने इन शतक काव्यों के सृजन में जिस भाव, भाषा एवं शैली को अपनाया है, उससे ये कृतियां सरस, रोचक व प्रेरक बन गई है। इन प्रशस्ति काव्यों में नीति तत्व, लोक तत्व, धर्म–दर्शन, समाज, इतिहास, देशकाल व प्रासंगिकता, कथ्य भाव, रस, छंद, अलंकार, भाषा आदि की सबल अभिव्यक्ति है, जिसका विवेचनात्मक, अध्ययन अपेक्षित है।

(च) विविध –

डॉ. उदयवीर शर्मा की रचनाशीलता मे जहाँ विविधता के आयाम है, उसमें सामाजिक मूल्य, सामाजिक संवेदना को गहराई से जोड़ा गया है। डॉ. उदयवीर शर्मा की कविता में सहज शिक्षा की समानता वाली ये कविताएं सृजन चेतना से जुडी हुई है।

इनके काव्य के अन्तर्गत 'शतक साहित्य' में 'मरूधर शतक और' म्हारो गाँव शतक की साहित्य सृजना हुई है, जिसमें शिक्षा, साहित्य, कला, विज्ञान, भक्ति आदि क्षेत्रों से जुड़कर समाज के सामने एक आदर्श प्रस्तुत करना चाहते है। मरूधरा मे धोरों की धरती की महिमा का बखान किया गया है वहीं **'म्हारो गाँव'** मे आत्मीयता के भावों को जोड़कर उसे राष्ट्रीयता के बीच की कड़ी माना गया है कि किस प्रकार वहां का जीवन सीधा, सरल व मनुष्य को प्रकृति के साथ जोड़ने वाला हो सकता है।

मात भोम तू नाम–धन, तु प्यारो सुख धाम ।
तू जीवण रो प्राण–धन, अमर बिसाऊ ग्राम ।। 1।।

तेरै प्राणां सुं जुड़या, मेरे सुख रा साज ।
मन री सरबस भावना, अरपूं तन्नै आज ।। 7।।

धोरां रो संगीत यो, घणा लुभावै लोग ।
भरै गुटकळी मोद री, मिलै भाग–संजोग।। 10।।

देव धरा तू जागती, तू तीरथ तप–लोक ।
रस–भावां में तू रमै, देवै मनड़ो धोक ।। 6।।

धोरा की धरती की सुन्दरता का वर्णन कवि ने निम्न रूप मे किया है –

सदा सुरंगा सोवणा, सुबरण बरणो रूप ।
धोरा री रस–रागणी , मधरी विमल अनूप ।। 9।।

इतिहासां में ऊजळो, गूजें इण री धाक ।
झूंझारा रो गढ़ सुदिढ, रण बंका री नाक ।। 27 ।।

सुबरण बरणो सोवणों बाळू रो संसार ।
प्रेम–राग रस रागणी, रोम–रोम अणपार ।। 101।।

जलमभोम रो जस कथ्यो, यो घण मीठो छीर ।
अरपै चरणा में शतक, उदयवीर मतिधीर ।। 161 ।।

चतुर्थ–अध्याय

रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : गद्य 124–153

(क) ललित निबंध

(ख) एकांकी

(ग) लघुकथा

(घ) भावात्मक गद्य

(ङ) विविध

चतुर्थ–अध्याय

रचनात्मकता के विविध सन्दर्भ : गद्य

डॉ. उदयवीर शर्मा बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार है इन्होंने गद्य व पद्य में लेखन कर्म कर अपने भावों को लेखनी के माध्यम से कागज पर उकेरा है। गद्य में इन्होंनें ललित निबंध, लघुकथा, भावप्रधान गद्य, संस्मरण आदि पर अपने विचार अभिव्यक्त किये है।

इनके ललित निबंधों में समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, समाज की कुरीतियों, सहजता, व्यक्तिगत प्रभाव के गुण, रचनाकार की ईमानदारी, संवेदनाओं का संस्पर्श आदि गुण दिखाई देते है।

(क) ललित निबन्ध

इनके ललित निबंधों में लालाजी री धीगां धींगी, धोबीघाट, मीठा सुपना, खारा गीत, बिसवास, ठेकेदारी, घूघू री पिछाण, गैलड़ा भला बाजगा, इन्कलाब जिन्दाबाद, अभिनंदन 'ग्रंथा' री पीड़ा, गागैं रो गटर, पार्टीबाजी री जय, नई चाल रा च्यार निबंध आदि सम्मिलित है। डॉ उदयवीर शर्मा ने इसी श्रेणी लघु निबंध के अन्तर्गत कई भावों से परिपूर्ण होकर अपनी रचनाएं लिखी है जिनमें इनका पहला **लघु निबंध** निम्न है। **इन्होंने संस्कृति से जुड़ें निबन्धों के साथ ही नई चाल के निबन्ध भी लिखे है।**

लालाजी री धीगां धींगी –

'लालाजी री धीगां धींगी' निबंध में इन्होंने राजनीतिक भ्रष्टाचार तथा समाज में रिश्वत खोरी व आपसी भेदभावों की घटना को अलग–अलग बातों के माध्यम से बताया है। इसकें माध्यम से ईमानदार व्यक्ति के बारे में बताया है, कि वह समाज में अगर भलमन साहत, भलाई, परोपकार काम अगर करे तो उसे जगह–जगह व्यंग्यात्मक बाणों की बौछार सहनी पड़ती है, तथा उसे जगह–जगह नैतिक मूल्यों का हनन होने के कारणों को जानते हुये भी चुपचाप सहन करना पड़ता है।

धोबीघाट –

धोबीघाट नामक निबंध के लेखन में सभी जातियों, सम्प्रदायों के विभिन्न लोगों के पेशों को दर्शाते हुये बताया है, कि कोई व्यक्ति पुलिस प्रशासन से संबंधित है, या कोई कवि या लेखक, अमीर या गरीब, उच्च कुल या निम्न कुल, कोई राजा या रंक सभी के कपड़े जब घाट पर धुलने आते है, तो ऐसा लगता है कि वह उस व्यक्ति के काले कारनामें

व कच्चे चिठ्ठों को उघाड़ते है। कपड़े जो कि व्यक्ति के नग्न शरीर को ढ़ककर उस की शोभा बढ़ाते है तथा ऊपरी परिवेश उस व्यक्ति के काले कारनामों को ढ़ककर उसे सभ्य व समाज में उच्च आदर्श के महत्त्व भी दर्शाता है। लेकिन उन वस्त्रों के अगर जुबान होती तो वह शायद उस की पोल अवश्य खोल देते।

इसके माध्यम सें लेखक ने समाज में सभ्य दिखने वाले लोगों पर कुठाराघात करते हुए, व्यंग्यात्मक तीखे बाणों का प्रहार करते हुए कहा है, कि केवल दिखने से या सभ्य के समान परिवेश धारण करने मात्र से ही व्यक्ति सभ्य नहीं होता उसे व्यवहारिक रूप से सभ्य बनना पड़ता है।

मीठा सुपना खारा गीत –

इस मीठा सुपना खारा गीत के माध्यम से कवि ने भारत की दुर्दशा के बारे में बताया है, कि आजादी के लिये क्या–क्या स्वप्न देखे गये थे कितने प्रयास आजादी प्राप्त करने के लिये किये गये लेकिन बाद में हुआ क्या इसी आजादी खुशी के लिए दिन–रात एक किये गए लेकिन भारत ही अलग–अलग टुकड़ों में बंट गया और भारत में अत्याचार, भ्रष्टाचार, बलात्कार, लूटपाट आदि विसंगतियां पनपने लगी जितनी खुशी व प्रसन्नता प्राप्त हुई सभी, विषाद, दुख में परिवर्तित हो गयी व्यक्ति सपने तो रोज देखता है लेकिन कोरी कल्पना से व्यक्ति के सम्पूर्ण काम सफल नहीं हाते है, इसलिए व्यक्ति को जोश तथा होश दोनों को ध्यान में रखकर ही अपना काम करना चाहिये नहीं तो यही कहावत चरितार्थ होगी – **''मेरा मीठा सुपना रूलगा घर में खारा गीत गवीजण लागा''**

विश्वास –

डॉ. शर्मा ने **विश्वास** का बखान करते हुए कहा है कि विश्वास की कसौटी वादा है और वचनों की सच्चाई ही विश्वास है ''**प्राण जाय परू वचन नै जाई**'' विश्वास एक ऐसा जरिया है जिससे व्यक्ति अपने कार्यों को पूरा कर सकता है और इससे श्रद्धा का जन्म होता है और उसका मान– सम्मान, इज्जत बढ़ती है।

घूघू री पिछाण –

इसमें समाज का वास्तविक रूप हमारे सामने उभर कर सामने आया है। इसमें हम ज्ञान का प्रतीक है वहीं घूघू अज्ञान का लेकिन इस बात से सभी वाकिफ होते हुए भी बेचारे हम को कोई भी समर्थन नहीं देता है। बल्कि अज्ञान व मूर्ख को ही समाज सम्मानीय व महत्त्वशाली बना देता है। चाहे उसमें कितने ही अवगुण क्यों न हो। हमें समाज की इसी सोच को बदलना होगा और सत्य और असत्य के भेद व दबदबे को मिटाना होगा।

गैलडा भला बाजगा –

इसमें समाज की गंदी मनोवृतियों व मनुष्य के स्वभाव को प्रदर्शित करते हुये बताया गया है कि जहां एक पिता अपने परिवार का पालन पोषण करने के लिए श्मशान में दबे हुए बच्चों के कफन उतारकर वापिस उन्हें मिट्‌टी में दफना देता है जो कि उसका कर्त्तव्य हैं। वहीं उसका पुत्र केवल पेट भरने का सोच कर उन बच्चों को नहीं दफनाता है, केवल कफन ही उतारता है वह अपने कर्त्तव्य को पूर्ण रूप से निभा नहीं पाता है। इसलिए उसका पिता गलत होते हुए भी समाज में पुत्र से भला माना जाता है अर्थात गलतियां सभी मनुष्य करते है, लेकिन कुछ व्यक्ति केवल सैद्धान्तिकता पर ही ध्यान देकर व्यवहारिक नहीं हो पाते है। इसलिए उससे पहले वाला सभी की नजरों में भला हो जाता है।

इन्कलाब जिंदाबाद –

इन्कलाब जिन्दाबाद से यह बताया गया है कि यह नारा हमें अपने आपको सभी बन्धनों से मुक्त करवाता हुआ प्रतीत होता है लेकिन वास्तव में स्वतंत्रता के लिए व्यक्ति को स्वयं के प्रयास करने होगें केवल नारा लगाने से ही मुक्त नहीं हो सकते हैं।

इन्कलाब जिंदाबाद इसके माध्यम से लेखक यह नारा हमारे देश के वीर नौजवानों ने भारत को स्वतंत्र बनाने के लिये अपनाया था तथा स्वयं तन मन से भारत भूमि के लिए समर्पित थे लेकिन आज का राजतंत्र केवल भ्रष्ट है। वह इस नारे का सहारा लेकर अपनी कुर्सी व सत्ता को पकड़े रखना चाहता है यह उसकी मनोवैज्ञानिक सोच को दर्शाता है, कि केवल इस नारे को रटने मात्र से ही देश की सेवा नहीं होगी मन तन से भी व्यक्ति को समर्पित होना पड़ेगा।

अभिनंदन ग्रन्थां री पीड़ा –

इसके माध्यम से यह बताया गया है कि ग्रन्थों की रचना होने के साथ ही उसकी सार्थकता तभी है, जब उसे पढ़ा जाये क्योकि जब तक उसे नहीं पढ़ा जायेगा। उसके मूल भाव व सार्थकता का पता नहीं चल पायेगा कई बार तो कुछ ग्रन्थ बिना खुले ही रह जाते है। इसलिए कुछ ग्रन्थों की अभिनन्दन की मन में ही रह जाती है।

अभिनंदन ग्रन्थां री पीड़ा के माध्यम से लेखक हमारा ध्यान उन साहित्यकारों के लिखे हुए ग्रन्थों की तरफ ले जाना चाहता है। जो बहुत सारे ग्रन्थों का, रचनाओं का निर्माण तो करते है लेकिन शायद वह व्यक्ति के मन को स्पर्श करे बिना ही ग्रन्थालयों में सजाकर रख दिये जाते है। उनमें क्या विशेष बात बताई गई है यह कोई नहीं जानता,

केवल होली की भीड़ में सभी एक के बाद एक इक्कठे होते जाते है। यह ग्रन्थ की अपनी पीड़ा है कि हमारा भी कोई सत्कार अभिनंदन करे तथा हमारे होने को सार्थक बनाये।

पार्टीबाजी री जय –

इसमें निबन्ध में आज की राजनीतिक व सामाजिक व्यवस्थाओं पर करारा व्यंग्य किया गया है सभी लोग अपनी–अपनी पार्टी को महत्त्व देकर कार्य करते है एक पार्टी का व्याख्यान करता है तो दूसरा उसका दोष निकालने में लगा रहता है सरकार भी अपने कार्यों को न करके केवल रिश्वत, घूसखोरी, भ्रष्टाचार में लिप्त होकर, केवल अपना स्वार्थ साधती है। आज के समय मे यर्थाथता के भाव बोध पर लिखा गया यह निबन्ध हम सभी के लिए प्रेरणा स्रोत है। वर्तमान युग में नेताओं का धर्म जनता की सेवा न होकर केवल अपनी स्वार्थ पूर्ति है।

धरती रो मिनख –

इस निबंध के माध्यम से धरती पर रहने वाले लालची, स्वार्थी, धन लोलुप में लीन व्यक्ति के व्यवहार को दर्शाया गया है, कि वह स्वर्ग में जाकर भी अपने छलकपट से परिपूर्ण नीति, अन्याय, अधर्म को नहीं त्याग पाता बल्कि वह वहाँ भी अपना व्यापार बढ़ाकर वैसा ही वातावरण उपस्थित करना चाहता है लेकिन उसे यह नहीं पता कि वहां पर रहने वाले लोगों का व्यवहार, आचरण अधर्म व अनीति पर न होकर धर्म व न्याय पर आधारित होता है। इसलिये उसे वापिस स्वर्ग से धरती पर भेज दिया जाता है।

मूंछयां री राड़ –

मूंछयां री राड निबंध में एक व्यक्ति अपने से ज्यादा एक दूसरे को बढ़कर मानता है, आपसी होड़ मचती है तथा एक दूसरे को कमजोर समझने का प्रयास करते है। इसमें एक अध्याापक के तबादले के विदाई समारोह से संबधित कार्यक्रम में बताया गया है, कि सभी एक दूसरे के सामने अपने दिखावटीपन को प्रदर्शित करना चाहते है, जबकि हकीकत यह है कि वास्तव में कोई भी सच्चे मन से एक दूसरे का सम्मान करने को पूरी तरह से तैयार ही नहीं हो पाते है, केवल बाहरी औपचारिकता व दिखावा मात्र ही करते है। कोई भी व्यक्ति अपने कार्य को ईमानदारी से नहीं करता है केवल अपने स्वार्थ को पूरा साधने में ही लगा रहता है।

हकीकत एक पीरियड री –

इस निबंध के माध्यम से शिक्षक व शिक्षा के घटते स्तर व सोच को प्रदर्शित किया गया है जहां बालक पढ़ना तो चाहते है लेकिन एक अध्यापक अपने ही कर्त्तव्य से बचना

चाहता है उसे तन्खवाह से मतलब है न कि बच्चों को शिक्षित करने से वह केवल कक्षा में घंटी बजने पर आता है। अपनी घर की थकान को कक्षा में नींद पूरी करके उतारता है और केवल अधूरे स्वप्न लेकर, समृद्धि की उड़ान भरकर घंटी बजने पर चला जाता है। वहीं कुछ बच्चों के आवाज उठाने पर उन्हें अंको के भय से चुप करवा देता है। वर्तमान में भी कई शिक्षक केवल दण्ड व शक्ति के बल का प्रयोग करके बच्चों को भयभीत कर देते है और अपना कार्य सही समय व तरीके से नहीं करवाते है।

कांटां री कुर्सी –

कांटां री कुर्सी नामक निबंध में विद्यालयी शिक्षकों पर करारा व्यग्यं किया गया है। इसमें यह बताया गया है कि कुछ शिक्षक केवल यह मौका ढूढ़ते है कि उन्हें पढ़ाने से किस तरह बचना है। इसलिए वे अलग–अलग तरकीब लगाते है, जैसे आज कक्षा में बच्चे कम आए है, आज मौसम खराब है, आज किसी का भी मन नहीं है। इसलिए हैडमास्टर जी के सामने अपने अलग–अलग तर्क–वितर्क देते हुए आधी छुट्टी करने की सलाह देते है। बेचारे प्रधानाध्यापक की कुर्सी काटों की होती है, क्योंकि उस पर चारों तरफ से दबाव होता है। समाज, नेता, शिक्षकों आदि का वह न चाहते हुए भी बच्चों की आधी छुट्टी करने के लिए मजबूर हो जाता है। लेकिन जैसे ही आधी छुट्टी होती है, वहीं शिक्षक सारा दोष हैडमास्टर जी पर थोपते है, कि उनको केवल सदैव छुट्टी चाहिए ऐसा रोज करने से हमारा कोर्स पूरा नहीं होगा लेकिन कांटे री कुर्सी का दर्द केवल हैडमास्टर ही जान सकता है।

इस प्रकार डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने निबन्धों के माध्यम से आधुनिक विषयों कों छूनें का प्रयास किया है। इनके ललित निबंधों में अपनापन व्यक्तित्व के गहन स्तर से संबधित संघर्ष एवं व्यक्ति तथा समाज के अन्तर्विरोधों पर प्रकाश डालते है। साथ ही इनमें साफगोई, सहजता, व्यक्तित्व प्रभाव के गुण, रचनाकार की ईमानदारी, संवेदनाओं का संस्पर्श आदि गुण भी दिखाई देते है।

(ख) एकांकी

डॉ. उदयवीर शर्मा के समग्र दूसरे खंड में 'गौड़ बुलावै घाटवै' एक सामाजिक अैार ऐतिहासिक एकांकी है इन्होंने शेखावाटी के इतिहास को ऐतिहासिक घटनाओं के साथ साहित्य में प्रेषित किया है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने 'गौड़ बुलावै घाटवै 'प्रणवती राणी' 'बलजी भूरजी' 'तोगा री तलवार' 'गोरां रो त्याग' 'हार देय पिव पावियौ' 'पगफेरो' जैसी एकांकियों में इतिहास व आदर्शों का प्रभावी चित्रण किया है।

"गौड़ बुलावै घाटवै" महारावल शेखाजी के जीवन की अंतिम प्रसिद्ध धटना है, जहां शेखाजी ने अपने शत्रु गौड़ की चुनौती को स्वीकार करते हुये युद्धभूमि में अपना प्राणोत्सर्ग किया। इन सभी एकांकियों में नारी अस्मिता के लिए संघर्ष, शरणागत वत्सलता, प्रतिशोध की भावना, न्याय के लिए मर मिटने वाले आदर्श का प्रभावी चित्रण हुआ है। इनकी एंकाकियों का प्रमुख विषय राजस्थान की संस्कृति, आन–बान के लिए मर मिटना देशप्रेम, नारी रक्षा, स्वाभिमान, प्रतिज्ञावान आदि महत्त्वपूर्ण जीवन मूल्य है।

इनकें एकांकी काव्य त्याग, बलिदान, शूरवीरता, देशभक्ति के इतिहास संदर्भ में प्रमाणित है। इनकी एकांकियों का संग्रह तत्कालीन देशकालीन इतिहास और जन संस्कृति को समझने के लिए पठनीय और संग्रहणीय है। इनके एकांकियां सरल और ग्राह्य नाटकीय तत्वों के साथ–साथ दर्शक, लेखक, पाठकों के बीच संवाद अभिव्यक्त करने में सक्षम है।

ऐतिहासिक एकांकियों के माध्यम से इन्होंने राजस्थानी संस्कृति, आन–बान, मान, मर्यादा को काफी बारीकी से उजागर किया है डॉ. उदयवीर शर्मा का जीवन इतिहास से जुड़ा हुआ होने के कारण इसकी झलक हमें इन्ही एकांकियों के माध्यम से दिखाई पड़ती है।

गौड़ बुलावै घाटवै –

महाराव शेखाजी के वीरता के चरित्र चित्रण को उजागर करने वाली इतिहास की घटना से परिपूर्ण यह एकांकी है। जिसमें यह बताया है कि उन्होंने किस प्रकार नारी की मान मर्यादा को सदा उच्च्य सम्मान दिया। इसमें शेखाजी ने अपनी मान मर्यादा के लिए मानव मूल्यों की रक्षा के लिए अपना बलिदान तक कर दिया। इसने झूंथरी में शासक कॉलवराज की घटना बताई गई है, कि उसने कई तालाब खुदवाये लेकिन उसका यह नियम था कि कोई भी अगर उस तालाब के समीप से गुजरे तो उसे चार टोकरी मिट्टी खोदकर बाहर गिराना है। एक बार ऐसा संयोग हुआ कि एक सिपाही अपनी पत्नी के साथ वहाँ से होकर गुजरा। उसे भी न चाहते हुये यह नियम मानना पड़ा लेकिन जब उसकी पत्नी को भी मिट्टी खोदकर बाहर गिराने के लिए बाध्य किया तो उसने उनका विरोध किया तथा वीर कछावो सिपाही के साथ युद्ध करते हुये मारा गया। वीर कछावो की पत्नी ने सारा कथा वृतांत राव शेखाजी के दरबार में सुनाया।

राव शेखाजी ने कॉलवराज को नारी धर्म के प्रति घोर अन्यायी बताया तथा उसका सिर काटने की प्रतिज्ञा की युद्ध में वचन का पालन करते हुसे वह वीरगति को प्राप्त हुऐ। इस एकांकी के माध्यम से राव शेखाजी के चरित्र की विशेषता बतायी गई है, कि उन्होंने

नारी मर्यादा, शरणागत की रक्षा की यही उनका क्षत्रिय धर्म था। वे अन्याय के प्रति लड़ने के लिए सदैव तैयार रहते थे। उन्होंने प्रजा का पालन करना ही अपना कर्त्तव्य समझा।

प्रणवंती राणी –

इतिहास से ही जुड़ी दूसरी कहानी, एकांकी प्रणवंती राणी में है। इसमें झुन्झुनूं के शासक शार्दूलसिंह की पुत्री गुमान कंवर का विवाह बून्दी के हाड़ा छतरसिंह के साथ हुआ। विवाह के समय वर अपने साले जोरावरसिंह का घोड़ा मांगनें की हठ करने लगा। बहुत समझाने पर भी नहीं माने जोरावरसिंह ने उनके सम्मान मे अपने सिर की पगड़ी भी उनके पैरों में रख दी लेकिन वर ने उसे भी ठुकरा दिया। इस स्थिति को देखकर गुमान कंवर को बहुत अपमान का अनुभव हुआ और इसी समय उसने यह प्रतिज्ञा ली कि बून्दी की सींव में चाहे कुटिया बनाकर जीवन व्यतीत कर लूगीं लेकिन कभी भी बून्दी के महलों में नहीं जाऊगी। यहाँ गुमान कंवर के माध्यम से नारी आत्म स्वाभिमान की महिमा मण्डन को दर्शाया गया है। इस प्रकार वह अपना जीवन व्यतीत करती है एक दिन उसके पति के मरने का समाचार मिला तो उसकी खबर सुनकर तुरन्त सदमें से उसके प्राण भी निकल गये इस प्रकार उसके पतिव्रता धर्म, स्त्री के आदर्श को भी दर्शाया गया है।

बलजी भूरजी –

उनकी एकांकी **बलजी भूरजी** में डकैत और बारोठिंया की भावना का चित्रण किया गया है कि वे किस प्रकार अंग्रेजों व अमीरों से धन लूटतें थे और उस धन का उपयोग गरीबों की सहायता के लिए करते थे। बलजी भूरजी दोनो डकैत होते हुए भी उन्होन कभी भी जन सामान्य को क्षति नहीं पहुँचायी। उनके मन में गरीबों के प्रति दया व मानव के मानवता का भाव विद्यमान थे। उनके मन में देश भक्ति की भावना, दया, तथा दूसरों की सहायता करने की भावना कूट–कूट कर भरी हुई थी।

तोगा री तलवार –

एकांकी में तोगा की वीरता को प्रदर्शित किया गया है। इसमे बताया गया है कि अपने विवाह होते ही बादशाह की सेना से लड़ने जाता है। वहाँ पराक्रम के साथ वीरता का प्रदर्शन करते हुए, अपने सिर को धड़ से अलग होने पर भी केवल धड़ सें लड़ता रहता है। इस प्रकार उसने अपनी वीरता का परिचय दिया, उसकी पहली भठियाणी राणी भंवरी सती हो जाती है। यह एकांकी एक वीर पुरुष के क्षत्रिय धर्म को प्रदर्शित करती है, वहीं वीर क्षत्राणि के सतीत्व धर्म को दर्शाती है।

भोग न चालै साथ, त्याग सदा जग में अमर।
हथळेवै रो साथ, बलिदानां सू ऊजळौ।।

गोरां रो त्याग –

इस एकांकी में त्याग, बलिदान, देशभक्ति, स्वामिभक्ति और जीवन मूल्यों को दर्शाया गया है, जिसमें एक स्वामिभक्त गोरां के चरित्र को उजागर किया गया है। जब जोधपुर नरेश के पुत्र अजीतसिंह के लिए दिल्ली में बादशाह ने एक फरमान भेजा कि इनका पालन पोषण दिल्ली में ही होना चाहिए। जब दुर्गादास मुकुन्ददास को इसमें, बादशाह के षड़यंत्र का आभास हुआ, तो उन्होंने एक योजना बनाकर कुवंर अजीतसिंह को दिल्ली से जोधपुर भेजा। गोरां का पुत्र भी नरेश के पुत्र के समान ही आयु व हुलिये वाला था, उन्होंने कहा कि स्वामिभक्त व देशप्रेम के लिए अजीतसिंह के स्थान पर अपने पुत्र को सुला दिया। वीर प्रसूता मरुभूमि के लिए इससें बड़ी कोई बात नहीं कि गोरां ने देश धर्म को बड़ा मानते हुए, जिनका नमक खाया है उनके लिए त्याग बलिदान कर दिया। इस एकांकी मे देश हित को सर्वोपरि बताया गया है।

हार देय पिय पावियों –

इस एकांकी मे एक सच्ची प्रेमिका रानी उमादे का चित्रण किया गया है। रानी उमादे राजा से बहुत प्रेम करती है लेकिन राजा अपनी बड़ी रानी लालादे के प्रेम में इतना अनुरक्त रहता कि उसे उमादे की कोई खोज खबर नहीं होती। उमादे की सहेली झीमा अपनी सखी की व्यथा दूर करने के लिए लालादे को चंदन हार दिखाती है उसके मन में लालच उत्पन्न करके एक शर्त यह रखती है कि यह हार तभी आपको मिलेगा जब आप एक रात के लिए राजा को उमादे के महल में भेज दे रानी इसके लिए तैयार हो जाती है, और राजा व उमादे का मिलन होता है और जब राजा को पता चलता है कि लालादे राणी ने एक हार की कीमत लेकर राजा को बेच दिया तो उसका मन खिन्न हो जाता है, और उसे उमादे के सच्चे प्रेम का आभास होता है। वास्तम में सच्चा प्रेम किसी भी मोल भाव का मोहताज नहीं होता है।

पगफेरो –

यह एकांकी सामाजिकता से जुड़ी हुई है इसमें एक साधारण व्यक्ति के मन के सपनों को उजागर किया गया है जो मकान बनवाने के साथ अपने बच्चों की जिम्मेदारी को भी पूरा करना चाहता है एकांकी का पात्र छीतर व मनभर अपनी आर्थिक तंगी के कारण अपने परिवार के उत्तरदायित्वों को भी बखूबी निभातें है, उन्होनें अपने बच्चों की शिक्षा पूरी की। धीरे–धीरे समय व्यतीत के साथ उनके संबध तय हुये और वे कमाने लगे उसका कर्ज भी उतर गया। उनकी छोटी बहू का पगफेरा लक्ष्मी के समान हुआ उसके आने से खूब धन

ऐश्वर्य ठाट–बाट हो गये। इस एकांकी में एक मेहनती, धैर्यवान व सुखी परिवार के बारे में बताया गया है।

दायजै रो बंटवारों –

इसमें दहेज के लोभी किस प्रकार अपने बच्चों को पढ़ा लिखाकर उनके विवाह के समय दहेज के लिए मांग करते है लेकिन किशोरीलाल का बेटा इसका काफी विरोध करता है तो किशोरीलाल को बुरा लगता है। यह एकांकी हमें यह समझाना चाहती है कि आज हमें एक जैसी सोच समाज मे रखनी चाहिए ताकि दहेज जैसी कुरीति को समाज से दूर किया जा सके। यदि हम सभी इस कुप्रथा का विरोध करें तो इस कुप्रथा को हम जड़ से उखाड़ सकते है। माता–पिता व बालकों को इस कुप्रथा का विरोध करके इसके प्रति दृढ़ संकल्पित होना होगा।

डॉ. उदयवीर शर्मा की प्रत्येक एकांकियां साहित्यिक व रंगमंच दोनों दृष्टियों से सफल है। इन्होने एंकांकियों मे ऐसे कथ्यों को चुना है जो परम्परा, समाज, संस्कृति से जुड़े हुये है। उनकी एकांकियों को देखकर ऐसा लगता है, कि इतिहास, समाज व संस्कृति सें इन्हें अटूट प्रेम है।

(ग) लघु कथा – (किरत्यां रो झूमको– भाग एक)

डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपनी साहित्य रचना में लघु कहानियाँ भी लिखी है। इसमें उन्होनें सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक इत्यादि दृष्टिकोण से युग यर्थाथ और आम आदमी की मनः स्थिति का चित्रण किया है। लघुकथा चाहे आकार में छोटी हो लेकिन वह जीवन की संवेदना को प्रभावी शिल्प के माध्यम से प्रकट करती है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने इन दोनों संग्रहों में **लगभग 150 लघुकथाएं** लिखी हैं, और यह सामाजिक, राजनीतिक धार्मिक, नैतिक यर्थाथ स्थिति को प्रभावशाली रूप में चित्रण करती है। इन लघुकथाओं के माध्यम से आम आदमी की स्थिति व जीवनमूल्यों पर तीखा व्यंग्य किया है। इनकी **'ठूंठ', 'मन अर वासना'**, **'अमर पट्टो**,' **'मिनखाचार'**, **'जिनगानी री सफलता', 'अक्कड़'** आदि लघुकथाएं आज की स्थितियों को सोचने के लिए मजबूर करती है। इनकी संवेदना का विस्तार एक छोटे से शिल्प में समाया हुआ है, लेकिन वही स्थिति जब पाठक की संवेदना से टकराती है तो विस्तार का दायरा बढ़ता ही चला जाता है।

डॉ. शर्मा जी की लघुकथाएं प्रतीकात्मक भी है तो प्रकृति, पशु–पक्षी, पृथ्वी आदि प्रतीक रूप मे कथ्य को प्रभावी भी बनाते है। शिल्प, भाषा और संवेदना की परिपक्वता डॉ.

शर्मा जी की लघुकथाओं में है। ये लघुकथाएं समय के दस्तावेज मे उलझे जीवन–यथार्थ के एक–एक स्तर को सहजता से उदघाटित करती है। खेत, खलिहान, जंगल, बरसात और लोक परंपरा से जुड़ी अनेक लघुकथाएं सीधी, सरल व सहज संवादात्मक शैली मे लिखी गई है।

डॉ. उदयवीर शर्मा की संग्रहित लघुकथाएँ अत्यंत मार्मिक एवं प्रेरणादायक होने के साथ–साथ रंजक भी है। लेखक ने अपनी लघुकथाओं में प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग किया है, जिसमे राज, समाज, मानव की आदतों को प्रतीकों के माध्यम से चित्रित किया है। इनकी लघुकथाएं आकार मे लघु है लेकिन भावबोध मे विस्तृत है।

आणो जाणो –

आणो जाणो कथ्य में वीणा का एक तार टूटने के माध्यम से यह बताया है, कि संसार में जिस प्रकार लोगो का आना जाना बना रहता है। किसी के भरोसे कोई काम नहीं अटकता है, वैसे ही वीणा का एक तार टूटने से उसका मूल्य नहीं घट सकता। एक कलावंत उसे नया तार जोड़कर स्वरों को साधता है, जिससे वीणा से मधुर स्वर झकृंत होने लगते है।

मन अर वासना –

इस कथ्य के माध्यम से यह बताया गया है कि व्यक्ति मन को बाहरी वासनाओं से मुक्त कर एकाग्रचित्त करना चाहता है वह यह भी जानता है कि यह वासना का जाल उसे अपनी माया में फंसाकर गलत कर्म करने पर मजबूर करता है। जब बार–बार वासनाऐं मन पर हावी होने का प्रयास करती है, तो मन उनका विरोध कर उसे अपने से दूर करना चाहता है। वासना में लिप्त होकर व्यक्ति कुछ समय तक ही प्रसन्न रह सकता है लेकिन बाद में वह उसे काफी दुःखी करतीं है। वासना व्यक्ति को न चाहते हुये भी सांसारिक माया के जाल में भ्रमित करती रहती है, और मन चुपचाप हो जाता है।

दरसाव –

इस कथ्य में एक मूर्ति की सुन्दरता को बताया गया है कि जैसी ही मूर्ति की प्रतिष्ठा कर उसके दर्शन सभी को कराये गए तो सभी ने उसकी सौन्दर्यता का बखान किया और कहा कि इसे किस भगवान ने इतना सुन्दर बनाया। उसी समय वहाँ मूर्तिकार दिखाई दिया अर्थात उसे देखकर ऐसा आभास हुआ कि मनुष्य ही विधाता की सबसे सुन्दर कृति है। उसमें बहुत सुन्दर मानवीय गुणों का भण्डार है। वह अपने कर्मो के द्वारा धरती

पर अच्छे पुण्यों का फल प्राप्त कर सकता है, तथा अपने कर्मों से ही ईश्वर के दर्शनों के समान सभी को सुन्दर लग सकता है।

दरपण रो उपदेस –

इस कथ्य में यह बताया है कि व्यक्ति कई घंटों तक दर्पण के सामने बैठकर अपना मुख सौन्दर्य निहारता है, और अपने आप पर अहंकार करता है, तभी उसके अन्तर्मन से आवाज आती है कि कभी तुम्हारे अन्दर जो बुरी भावनाएं भरी हुई है, उन बुरे भावों को मन से बाहर निकालकर मन को सभी के प्रति पवित्र रखो।

झाड़ी –

इस कथ्य में **झाड़ी** अपने फलों से लदी हुई होती है, तथा इसके फलों का सेवन करने वाले बार–बार इस पर पत्थर फेंकते है, और मना करने पर भी नहीं मानते है। कुछ दिनों बाद मानों वह झाड़ी सूख कर कह रही हो सब मीठे फल खाकर तृप्त हो जाओ अर्थात जो व्यक्ति दूसरों का सदैव हित चाहता है, वह किसी के लिए बाधा नहीं बनता है। उसने सदा सभी को कुछ न कुछ देना ही सीखा है फिर भी लोग उसे बाधा पहुँचाने में लगे रहते है।

कतरणी –

इस कथ्य में कतरनी से एक व्यक्ति पूछता है कि तुमको केवल काटना या अलग करना ही क्यों आता है तुम्हें जोड़ना क्यों नहीं आता अगर ऐसा होता तो तुम्हारी गिनती भले लोगो में होती। कतरनी कहती है कि जैसे लोग मुझे चलाते है मैं वैसे ही आगे बढ़ती हूँ, इसमें उसे चलाने वाले का दोष है इसमें मेंरी कोई भी गलती नहीं है अर्थात कोई भी हथियार हो उसको चलाने का ज्ञान तो चलाने वाले को ही होना चाहिए। यह नहीं कि हथियार यह तय करे कि मुझे कैसे चलना है, अर्थात मनुष्य के स्वयं का मत होना चाहिये कि उसे कैसे कर्म करने चाहिए जो उसके हित में हो।

इनके जैसे बहुत से लघुकथा प्रसंग इन्होंने लिखे है जिससे हमें जीवन की कुछ न कुछ मूल्यपरक, महत्त्वपूर्ण शिक्षा मिलती है। जिनमें **स्वारथ रो सपूत, सवाल, झूठ रा पग, मन रो निर्णय, स्वार्थी, आँधी, धरती रो नाज, मन की भूख, पंछी, भारी पोथी, अवसर रो धनी, आज रै जुग रो नेम धरम** आदि दैनिक जीवन से जुड़े हुये शीर्षक है जिनसे हमें कुछ न कुछ सीखने को अवश्य मिलता है।

लघुकथा (किरत्यां रो झूमकों – भाग दो) – 'किरत्यां रो झूमकों भाग दो में इन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आध्यात्मिक नैतिक मानव मूल्यों से जुड़ी हुए कथ्यों को आधार बनाकर अपनी बातें कही है।

बडकां री रीत –

इस लघुकथा में पुरानी परम्पराओं, रूढ़ियों को वर्तमान में तोड़ने की बात कही गई है। इसमें दीपक व पंतगें को प्रतीक बनाकर कहा गया है, कि जब पतंगे को जलने से मना किया जाता है, तो वह यही कहता है कि यह पुरानी परम्परा है, लेकिन उसको समझाकर यह बताया जाता है कि पुरानी परम्पराओं को निभाने के लिए स्वयं को मारना और अपने अस्तित्व को मिटाना मूर्खता है। तुम्हें अपने जीवन में सही परम्पराओं का निर्माण करना चाहियें, ताकि भावी पीढ़ी इससे कुछ शिक्षा ग्रहण कर सके।

सुरग नरक –

इस लघुकथा के माध्यम से चील को प्रतीक बनाकर यह बताया गया है कि धरती पर प्राणियों के लिए ही स्वर्ग और नरक मायना रखता है। हम सभी पक्षियों पर तो ऊपर कोई भी फर्क नहीं पड़ता, तभी दूसरी चील बोल पड़ी कि ये फालतू बाते धरती पर ही हो सकती है। धरती पर व्यक्ति अपने कर्मों को न देखकर केवल बाह्य लोकाचार या दिखावा करता है, जबकि स्वर्ग या नरक दोनो धरती पर ही देखे जा सकते है। वास्तव मे देखे तो स्वर्ग नरक अन्य कहीं नहीं है, सभी इसी धरती पर ही है। व्यक्ति अच्छा कर्म करता है, तो उसे सुख प्राप्त होता जो स्वर्ग समान है, और यदि बुरा कर्म करता है, तो दुःख भोगना पड़ता है, जो नरक समान है।

परमतत्व रां प्रतिनिधि –

इस लघुकथा के माध्यम से यह बताया गया है कि प्रत्येक मनुष्य परमात्मा के ही अंश है। उसे अच्छे कर्म करते रहना चाहिये तथा अपने ज्ञान विवेक से अपने कार्यों को करते रहना चाहिए। जब एक व्यक्ति नें एक महात्मा से पूछा कि अगर सभी परमात्मा के प्रतिनिधि होते है तो एक भक्त को सारी सुख सुविधायें मान सम्मान मिलता है, तथा दूसरे को दर–दर भटकना ऐसा क्यों ? तभी महात्मा बिजली का उदाहरण देकर अपनी बात का तर्क देते है कि बिजली सभी स्तरों पर एक समान स्तर से गुजरती है लेकिन कहीं उसका पावर अधिक जगमगाता है, कही परिस्थिति के अनुसार कम अर्थात अपनी–अपनी शक्ति सामर्थ्य के अनुसार प्रकाश जगमगाता हुआ दिखाई देता है उसी प्रकार सभी भक्त अपनी सामर्थ्यता, शक्ति, विवेक से ही समाज में श्रेष्ठ नाम कर सकते है।

सांचल सुख –

सांचल सुख लघुकथा में एक योगी व्यक्ति की महता का वर्णन है, कि त्याग में सम्पूर्ण सुख है क्योंकि त्याग से ही माया छूटती है और ईश्वर की भक्ति होती है। भक्ति आने से मनुष्य में सम्पूर्ण गुण आते है तो दूसरा भोगी व्यक्ति कहता है कि भोग सें सम्पूर्ण गुण आते है। भोगी व्यक्ति कहता है कि भोग में सम्पूर्ण सुख है खाने–पीने का सुख, भौतिक सुविधाओं का सुख। दोनों अपनी–अपनी बात से हटने को तैयार नहीं थे, अन्त में दोनो अपने गुरु कें पास पहुँचे और कहा कि हमारा न्याय कीजिए और बताइये कि सच्चा सुख किसमें प्राप्त होता है। गुरु जी ने कहा सच्चा सुख तो मन मे संतोष प्राप्त करने से ही होगा। सभी मुनिगण व भोगी इसके बिना व्याकुल है और लड़ते रहते है। अतः मन को संतोषमय, संयमशील बनाओ।

करम–धरम –

इस लघुकथा के माध्यम से यह बताया गया है कि व्यक्ति सदैव दूसरों के कर्मो को देखकर ही उसके दोष निकालता है जबकि वह स्वयं नहीं सोचता है कि वह किस प्रकार के कर्म कर रहा है। एक शेर जब बंद पिंजरे मे दहाड़ता है तो सभी उसका तमाशा देखते है, लेकिन जब वह पिजरें में मांस खाता है तो वहाँ एक ब्राह्मण यह देखकर कहता है, कि अभी भी तूने मासं खाना नहीं छोड़ा इस कर्म फल के कारण आज तुम इस कैद में हो लेकिन यह सुनकर शेर कहता है कि यह तो मेरा भोजन है, लेकिन तुम अपना धर्म तो देखो तुम्हें जब भोजन दिया गया है, तो भी तुम मेरा भोजन अर्थात मांस खाते हो यह पाप है या पुण्य। तुम पहले अपने कर्म और धर्म को देखो बाद मे दूसरों के दोष निकालो।

कलजुग री हवा –

इस लघुकथा में कवि ने एक किसान की पीड़ा को व्यक्त करते हुये बताया है कि कलियुग में जो पहले असंभव था वह संभव हो गया है। क्योंकि जिस प्रकार एक मनुष्य अपने सदाचार, नैतिक मूल्यों को अपने स्वार्थ के कारण भूल जाता है उसके मन में धोखा, छल कपट होता है। उसे भी संसार में कलियुग की हवा लग जाती है ठीक उसी प्रकार जब सूखे खेत में किसान वर्षा की प्रतीक्षा करता है, जब बादल आसमान में आते है, तो उसमें उम्मीद की किरण जगती है लेकिन जब बादल एक खेत को तो लबालब भर देते है, वही दूसरे खेत को सूखा ही छोड़ देते है तो कहा जाता है कि बादलों को भी कलियुग की हवा लग गई है वह सभी की पूर्ति नहीं करके, किसी को बिना तृप्त किये ही, तो कही अधिक मात्रा में पानी देकर जरूरतमंद की भावनाओं को ठेस पहुँचाते है।

मुसाफिरखाने री पीड़ा –

इस कथ्य में कवि ने यह बताया है कि जिस प्रकार मुसाफिर खाने में लोग गाड़ी की प्रतीक्षा करने के लिए कुछ समय तक विश्राम करते है या ठहरते है। गाड़ी आने से पहले वहाँ सभी व्यक्तियों की धीरे–धीरे भीड़ बढ़ती जाती है वहाँ सभी कोई खाने में, खेलने, बैठने, सोने में, चढ़ने से पहले टिकट न लिये हुये भी मेले की भांति इक्कठे रहते है, लेकिन जैसे ही गाड़ी समय पर स्टेशन पर आती है, सभी अपने–अपने गन्तव्य स्थान पर जाने के लिए उसमें चढ़ जाते है, और वह मुसाफिर खाना वापिस सुनसान हो जाता है। कुछ समय की ही चहल–पहल होती है, ठीक उसी प्रकार संसार में भी व्यक्ति मुसाफिर खाने की भाँति कुछ समय के लिए आता है लेकिन अपने जीवन का कुछ समय बिताकर यहाँ से सदा के लिए चला जाता है इसलिए अपने कुछ समय तक के जीवन को जीने के लिए मनुष्य को अच्छे कर्मों को करते रहना चाहिए। संसार में माया जाल में नहीं पड़ना चाहिए, क्योंकि यह कुछ समय तक का ही भ्रम है।

राड़ रा भाव –

इस लघुकथा के माध्यम से कवि यह बताना चाहते है कि जब ब्रह्म जी ने सृष्टि का निर्माण किया तब एक जाति में कुत्तों की लड़ाई के बारे में विचार किया कि दो–चार कुत्ते एक हड्डी के टुकड़े के लिए आपस में लड़ रहे है और उनमें इतनी खींचातानी हुई कि वे लड़ते–लड़ते मर गए। विधाता ने सोचा इससे अच्छा अगर में इन्हें मनुष्य बनाता तो शायद वे ऐसा नहीं करते और अपना ज्ञान बढ़ाते हुये सभी का भला करते। उन कुत्तों को अगले जन्म में मनुष्य बना दिया लेकिन अब भी वह पहले से ज्यादा झगड़ रहे थे लेकिन फर्क इतना ही था कि इस बार उनके लड़ने की वजह 'पद', कुर्सी, और अपना अहंकार था। विधाता ने सोचा अब इस राड़(झगड़े) को मिटाने के लिए क्या करना चाहिए, अर्थात मनुष्य विवेकी माना जाता है लेकिन वह पशुवत व्यवहार करता है।

सत रै मारग री बाधा –

इस लघुकथा में एक साधु और राहगीर का प्रसंग बताया गया है। एक राहगीर दुनियादारी को त्यागकर साधु के साथ जाना चाहता है, ताकि शांति से अपना जीवन जी सके। लेकिन उसके सामने एक शर्त रखी जाती है, कि तुम्हें वे सभी काम छोड़ने पड़ेगें जो तुमने अभी तक किये है, और जो तुमने नहीं किये है, वह काम अब करने पड़ेगे। जब राहगीर साधु की इस शर्त को नहीं समझ पाया तो साधु ने राहगीर को समझाया कि सत्य के मार्ग पर अगर तुम्हें चलना है तो माया, मोह की लालसा को त्यागना पड़ेगा। इनके

त्याग से ही तुम सत्य मार्ग का अनुसरण कर पाओंगे।यही माया, मोह का जाल सत्य मार्ग मे बाधक बनता है।

करड़ो कांटो : कवलों फूल –

इस कथ्य में यह बताया गया है कि एक बगीचे में बहुत सारे फूल खिले हुये थे। एक फूल अपनी रंगत, सुगंध, सौन्दर्य पर इठलाता है वह काटें से कहता है कि तुम इतने कठोर हो और में कितना कोमल। सम्पूर्ण उपवन की शोभा मुझसे ही बढ़ी हुई है। तुम लगातार मेरे समीप रहकर भी मुझसे कोई, सीख क्यों नहीं लेते हो इस पर कांटा चुपचाप उसकी बात सुनता है, लेकिन थोड़ी देर बाद वह बोला मेरे कोमल होने से तुम्हारी शोभा नहीं बढ़ेगी, इससे फूल को हंसी आयी वह खिलखिलाकर हंस पड़ा। लेकिन कुछ समय बाद फूल मुरझाने लगा लेकिन कठोर कांटा अडिग भाव से देखने लगा। थोड़ी देर में ही कोमल फूल चूर–चूर हो गया। उसका गर्व, रूप, अभिमान भी उसी के साथ मिट गया। इसलिए व्यक्ति को अपने रूप, यौवन का कभी भी ंगर्व नहीं करना चाहिए यह क्षण भंगुर है। लेकिन जो कांटा है वह दिखावा न करके अपने लक्ष्य पर अडिग है।

स्वारथ की भूख –

इस कथ्य में एक गांव में घेर घूमेर वृक्ष के बारें में बताया है, जो फलों से भी लदा हुआ था। सभी पक्षियों का वह आसरा था। सभी उस पर आनंद से चहचहाते थे। वहीं राहगीरों के लिए भी उसकी छाया तपती धूप में स्वर्ग के सुख के समान थी। सभी बच्चे भी फल के लिए उस पर पत्थर फेंकते है तो भी वह सभी को मीठे फल देकर परोपकारी भाव को दर्शाता है। सभी गांव के व्यक्ति भी उसकी गौरव गाथा गाते थे। वहीं कुछ समय बाद उस गांव में सड़क बनने का निर्णय लिया गया तो उस पेड़ को वहां से काट दिया गया। लोगों ने उसकी जड़ों को भी नष्ट कर दिया। उसके परोपकार के बदले में सभी ने उसके साथ ऐसा व्यवहार किया। यही स्वार्थ की भूख होती है, जब तक अपना स्वार्थ होता है, उससे प्रेम रखते है। लेकिन बाद में उसके समर्पण को कोई नहीं देखता। व्यक्ति व उसके अस्तित्व को भी मिटा दिया जाता है।

कालजे री लाय –

इस कथ्य के माध्यम से कवि ने यह बताया है कि किस प्रकार मनुष्य अपने स्वार्थ लिप्सा के लिए प्रकृति के सौन्दर्य को नष्ट करता जा रहा है। वह केवल बाह्य सौन्दर्य को देखना चाहता है, जैसे कि एक पहाड़ प्रकृति के सौन्दर्य को बढ़ाता है, लेकिन स्वार्थी मनुष्य दिन प्रतिदिन उसके कलेजे को काटता रहता है तथा उसकी पीड़ा को सदैव अपनी स्वार्थ

लिप्सा के कारण बढ़ाता है। फिर भी यही कहा जाता है कि डूंगर बलती तो सै देखे, पैरा बलती कोई नी देखे।

बुरायां रो अंधेरो –

इस लघुकथा मे दो मित्रों के वार्तालाप को बताया गया है। जब रात्रि का समय होता है तो दीपक के प्रकाश को देखकर वे आपस में बातें करते है कि यह दीपक सम्पूर्ण अंधकार को चीरकर चारों ओर प्रकाश फैला देता है। लेकिन भाग्य की विडम्बना देखो की फिर भी इसके नीचे अंधेरा ही रहता है। दीपक के सामने अंधेरे को कहीं भी छुपने की जगह नहीं मिलती इसी समय दीपक बोल पड़ा कि आप लोगों में कौनसी कमी नहीं है। आपके मन में भी तो घनी बुराईयों का अंधकार भरा पड़ा है। ऊपर से तो मनुष्य केवल अच्छा बनने का दिखावा करता है। लेकिन मन में सभी के प्रति बुरे विचार भरे हुए होते है। जब कि मेरा तन–मन तो सभी के समक्ष खुला है। यह एक यर्थाथ है कि आप लोगों को तो बुराईयों ने चारों ओर से घेर रखा है। दोनों मित्र दीपक की इस बात को सुनकर चुप हो जाते है और वे अपने अन्तर्मन में छिपे बुराई के भावों के बारें में विचार करने लगते है।

सनातनी संघर्ष –

इस कथ्य के माध्यम से दीपक और बाती के वार्तालाप को दर्शाया गया है। दीपक से बाती कहती है कि हम अपने धर्म का पालन करते हुये सम्पूर्ण संसार को अंधकार से प्रकाश प्रदान करते है, लेकिन फिर भी अंधेरा चारों ओर घेर कर खड़ा रहता है। तभी दीपक बोल पड़ता है कि युगों–युगों से अंधकार हमारे पीछे पड़ा हुआ है, लेकिन फिर भी वह हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सका है। हम जितना आगे बढ़ते है वह हमारी हानि नहीं पहुँचाकर केवल दूर से भयभीत करता है, और बुरे कर्मों वाले व्यक्ति भी उस की ओट लेकर ही अपना कर्म करते है, लेकिन वह कभी भी सफल नहीं हो पाते है। अंधेरे और उजाले का संघर्ष तो सदैव चलता रहेगा यह तो सनातनी संघर्ष है। हमें अपने धर्म पर चलते रहना चाहिए और सदैव सचेत रहना चाहिए इस बात को सुनकर बाती जोश से और भी लहरें लेकर चारों ओर प्रकाश फैलाती है।

ग्यान अर गुलामी –

इस कथा के माध्यम से यह बताना चाहते है कि अगर व्यक्ति के अन्दर भरपूर ज्ञान है तो उसे गुलामी नहीं सहन करनी चाहिए। जिस प्रकार एक तोते को सारी सुख सुविधायें देने के उपरान्त भी वह खुले में उड़कर प्रसन्न है। इसलिए जब उससे पूछा जाता

है तो वह कहता है कि आपने मुझे सुख सुविधायें प्रदान की ज्ञान प्रदान किया तो मेरे लिये गुलामी किस काम की।

इस कथ्य में यह बताया गया है कि जब एक बार तोते के पिजरें का दरवाजा खुला छोड़ने से वह उस बंधन से मुक्त होकर वातावरण में खुली सांस लेकर गुलामी के बंधन से सदैव मुक्त होकर प्रसन्न हो जाता है जब मालिक उससे पूछता है कि तोते मैंने तुम्हारी समय–समय पर खाने–पीने, सुरक्षा की पूरी तरह संभाल की तुम्हें बोलना सिखाया, ज्ञान दिया तुम्हारें लिये स्वर्ग के समान सारी सुख सुविधायें भी दी फिर भी तुम मौका पाकर यहाँ से निकल पड़े तभी तोते ने उत्तर दिया कि दासता के स्वर्ग से तो मुक्त नरक ही अच्छा है तभी यह कहावत प्रसिद्ध है कि ग्यान और गुलामी का कोई मेल नहीं है। गुलाम बनाकर ज्ञान दिया जाये ंतो यह सबसे बड़ी मूर्खता होगी।

जगत री हवा –

इस कथ्य के माध्यम से यह बताया गया है कि जब कोयल दूर भी बोलती है तो उसकी सरस आवाज जैसे ही सभी के कानों में पड़ती है सभी मदमस्त होकर उसे बार–बार सुनना चाहते है। वहीं कौआ घर–घर के द्वार झांकता है, फिर भी उसकी आवाज कड़वी लगती है उसे कोई भी नहीं सुनना चाहता है। तभी एक व्यक्ति कहता है कि अगर कोयल को भी जगत की हवा लग जाये तो वह भी खारी बोलने लगेगी अर्थात् संसार मे भी अगर सभी स्वार्थी हो गये तो सभी के मनों पर वह अधिकार नहीं कर पायेगें।

साधना –

इस लघु कथा में भौतिक तथा आध्यात्मिक संसार की विशेषता बताई गयी है कि जब व्यक्ति भौतिकता से हटकर ईश्वर की भक्ति में लग जाता है, तो उसे संसार की कोई भी वस्तु आकर्षित नहीं कर पाती है। जबकि आध्यात्मिकता से ध्यान हटने पर वह एक पल के लिए भी भौतिकता की ओर बिना आकर्षित हुए नहीं रह सकता है। इसमें जब व्यक्ति अपने आप को ईश्वर को समर्पित कर देगा तो उसे सांसारिकता में कोई भी मोह नहीं रहेगा। व्यक्ति का ध्यान यदि परमतत्व में लगा रहता है, तो वह इस भौतिक जगत की मोह–माया आदि प्रपंचो से स्वतः ही दूर रहता है।

इस कथ्य के माध्यम से यह बताया गया है कि जब एक भक्त भगवान के मन्दिर के जाकर मूर्ति के सामने एकाग्रचित होकर ध्यान लगाता है, तो अपने अन्तर्मन से वह ईश्वर के एकदम समीप होता है और उसे ईश्वर के दर्शन होते है। आत्मा आनंद में डूब जाती है। लेकिन जैसे ही उसकी भौतिक भावना जागी तो ईश्वर की मूर्ति और ध्यान

अंधकार में लिप्त हो गया वह घबराता हुआ गुरु के चरणों में बैठकर उचित मार्गदर्शन के लिए कहने लगा तभी गुरू ने कहा शुद्ध व पवित्र आत्मा को प्रभु के दर्शन होते है, जबकि सासांरिकता के मोह माया जाल में लिप्त व्यक्ति को अज्ञान का अंधकार ही प्राप्त होता है इसलिए तुम सच्ची साधना भगवान के प्रति रखो तुम्हें सफलता अवश्य मिलेगी। एकाग्रचित मन रखो और अपनी कर्म साधना में लीन रहो।

टेलिफोन एक्सचेंज –

इस कथ्य के माध्यम से यह बताया गया है कि एक बार भक्तों की मंडली में एक महात्मा जी अपने ज्ञान की गंगा बहा रहे थे तभी एक भक्त ने कहा आप हमें भगवान के दर्शन करा सकते है क्या? तभी महात्मा जी ने कहा भगवान तो भक्त की लगन से ही मिल सकते है हम तो केवल ईश्वर तक जाने का मार्ग ही बता सकते है। इस मार्ग पर तो स्वयं भक्त को ही चलना पड़ेगा। हम तो केवल टेलिफोन एक्सचेंज का ही काम करते है, भक्त की लाइन भगवान से जोड़ देते है लेकिन बात तो स्वयं भक्त को ही करनी पड़ेगी अब यह उस पर ही निर्भर है, कि वह कितने समय तक भगवान से वार्तालाप को स्थिर रखता है। इस प्रकार से महात्मा जी के सहज सरल उत्तर को सुनकर सभी भक्तों के मुख पर आनंद की मुस्कुराहट छा गई और कुछ समय बाद वहीं भाव रम गए। भगत जगत में रम गये।

(घ) भावात्मक गद्य –

डॉ. शर्मा ने अपने काव्य मे भावात्मक लेखन को भी महत्व दिया है। उनकी प्रमुख रचना तिरवेणी भावात्मक लेखन का प्रमुख उदाहरण है।

इस तिरवेणी काव्य में तीन धाराएं प्रवाहित हुई है। पहली वेणी मे रेखाचित्र दूसरी वेणी में लघुनिबन्ध व तीसरी वेणी में बातचीत की धारा प्रवाहित हुई है। शर्मा जी ने अनेक रेखाचित्र लिखे है। जिनमें संस्मरणात्मक और कल्पनात्मक दोनों ही प्रकार के रेखाचित्रों का समावेश किया गया है।

इनकी प्रथम वेणी के प्रमुख रेखाचित्र है **मीठण माजी, सोधण दादी, मोटा माजी, चम्पो चपरासी, भानी भूवा, जोसण दादी, माड़ीया माजी आदि हैं,** जिनमें अपने आस–पास के चरित्रों को ध्यान में रखकर इन्होंने प्रमुख रेखाचित्र लिखे है। इनके पात्र दैनिक जीवन में हमसे जुड़े हुये है।

'मीठण माजी' शर्मा जी का भावात्मक रेखाचित्र है। इस रेखाचित्र मे एक ऐसी महिला का चित्रण किया है, जो एक वृद्ध महिला है, जिसका बाल विवाह कर दिया जाता है। जिसे यह भी पता नहीं होता कि विवाह क्या होता है। विवाह को समझती उसके पहले

ही वह विधवा हो जाती है। वह समाज में दुर्भाग्यशाली मानी जाती है। उसें अपने पीहर में शरण लेनी पड़ती है। उसका आगे जाकर नाम मीठण माजी हो जाता है।

वह ऊपर से जितनी कठोर दिखाई देती है, उतनी हीं अन्दर सें मीठी, धैर्यवान सभी के लिए मुसीबत में काम आने वाली होती है। वह बहुत ही परिश्रमी, साहसी होती है। उसने अपने जीवन में काफी संघर्ष देखा है। जिसकें कारण वह अन्तर्मन मे ंकाफी दुःखी होती है, लेकिन सभी के सामने हिम्मतवाली बनी रहती है।

'सोधण दादी' में एक ऐसी महिला के चरित्र को उकेरा गया है, जो केवल शुद्धता पर ही अपना समय व्यतित करती है। वह दिन से लेकर रात्रि मे देर तक पवित्रता पर ही ध्यान देती रहती है, कभी नल को दस बार धोना, कभी अपनी चप्पलों को धोना आदि। उसके इस प्रकार के व्यवहार के कारण घर परिवार व समाज के लोग उसे सोधण दादी से संबोधित करते है। वह अपने इस प्रकार के स्वभाव के कारण अपने परिवार व समाज के साथ सामंजस्य स्थापित करने में असफल रहती है। इस प्रकार के व्यवहार के कारण उसकी नई बहु भी उसके साथ निबाह नहीं कर पाती है, और सास, बहु में रोजाना झगड़ा होने लगते है। बेटे बहु उसे छोड़ के चले जाते है। वह अकेली ही रह जाती है।

'मोटा माजी' इस रेखाचित्र मे सामाजिकता व धार्मिकता से जुड़ी हुई एक महिला का चित्रण किया गया है। व्रत,दान–पुण्य, ईश्वर मे गहरी आस्था के साथ ही दीन–दुखियों की सहायता करने के लिए सदैव तत्पर रहती है। वह परोपकार की भावना से ओत–प्रोत है। लेकिन वह अपनें क्रोधी स्वभाव के कारण समाज मोटा माजी के नाम से अपनी अलग पहचान रखती है।

'माड़ीया माजी' यह रेखाचित्र एसी महिला की कहानी है, जो भरे पूरे परिवार की मालकीन होती है। उसके सारे सुख वैभव थे, लैकिन पति की मृत्यु के बाद वह परिवार में हर तरह से सांमजस्य स्थापित करना चाहती है। कभी–कभी उसे बहुओं की फटकार भी सुननी पड़ती है। वह चुपचाप अपना कार्य करके सभी बहुओं को प्रसन्न रखने का प्रयास करती है। वह सभी की दुःख दर्द में सहायता करती है। वह सभी को अच्छी बाते बताती थी। एक दिन उसने अपनी चारों बहुओं को अपने पास बुला कर समझाया कि जीवन में मान सम्मान समर्पण से ही सुख प्राप्त हो सकता है। दुर्भावना व छल कपट से कभी जीवन में आनन्द की प्राप्ती नहीं हो सकती है। इसलिए आप सभी एक होकर साथ मिलकर आगे बढ़ोगे तो निश्चित ही आपको सफलता प्राप्त होगी। माजी की इस प्रकार की शिक्षा से बेटें बहुओं ने उनके चरण पकड़ कर उनसें माफी मांगी व उनकी शिक्षा को जीवन में अपनाने का वचन भी दिया।

'**चम्पों चपरासी**' इस रेखाचित्र में एक एसे व्यक्ति का चित्रण किया गया है। जो चपरासी है। वह दिन भर विद्यालय में सभी के प्रति समर्पित रहता है। कभी भी किसी अधिकारी व अध्यापक को वह काम के लिए मना नहीं करता है। लेकिन कभी–कभी वह अपने पेट भराई के लिए किसी से कुछ रिश्वत भी मांग लेता है। अपने इस व्यवहार के कारण उसने सभी का मन मोह लिया था। उसे कभी क्रोध भी आता तो वह अपना क्रोध विद्यालय के घंटे पर निकालता। वह स्वभाव से भोला था। अपने इस भोलेपन के कारण उसे सदा मात खानी पड़ जाती।

लेखक ने अपने रेखाचित्रों में एसे पात्रों को चुना जो हमारे इर्द गिर्द दिखाई देते है। ऐसे ही पात्रों में भानी भूआ, जोसण दादी भी इसी वेणी के पात्र है।

दूसरी वेणी मे डॉ. शर्मा ने साहित्यिक लघु निबन्धों की धारा प्रवाहित की है। जिनमें प्रमुख है – राजस्थानी साहित्य में देश प्रेम, सुतंत्रता री स्वर्ण जयन्ती आदि। ये सभी निबन्ध प्रेरणा दायक व भावनाओं से जुड़े हुए है।

राजस्थानी साहित्य मायं देश –

इस निबन्ध में हमारे साहित्य और संस्कृति का वर्णन किया गया है। यह हमारी संस्कृति के से जुड़ा हुआ लघु निबन्ध है। इसमें अपनी जन्मभूमि के प्रति सहज लगाव जुड़ाव होना ही संस्कृति सभ्यता व देश प्रेम का परिचायक माना जाता है। वेदों में भी जनम भूमि को मां का गौरव प्रदान करते हुये उसकी महिमा का गुणगान किया गया है।

माता भूमि : पुत्रोऽहं पृथ्व्याः

अर्थात् भूमि मेरी माता है और मैं इसके पुत्र के समान हूँ। इसकें प्रति मेरे मन में सदैव मान–सम्मान का भाव उभरता रहेगा । कवि वाल्मीकि ने रामायण में बताया है कि स्वयं राम कहते है कि –

जननी जन्म भूमिश्चः, स्वर्गादपि गरीयसी

अर्थात् मुझे जन्म देने वाली मां और मेरी मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है राजस्थानी में भी जन्मभूमि का जयघोष किया गया है जिसमें सूर्यमल्ल मिश्रण ने अपनी सतसई में मातृभूमि की वंदना करते हुये कहा है कि –

इला न देणी आपणी, हालरियै हुलराय
पूत सिखावै पालणै, मरण बडाई मांय

अर्थात् एक मां पालने में सोते हुए बालक को यही शिक्षा देती है कि जन्मभूमि की सदैव तुम्हें रक्षा करनी है चाहे तुम्हारें प्राण ही क्यों न चले जाये। यहीं सीख वह मनुष्य को

देते हुये श्रद्धा, सम्मान, समर्पण से परिपूर्ण राष्ट्रीयता की शिक्षा देती है। राष्ट्रीयता ही देश प्रेम का दूसरा नाम है। राजस्थानी साहित्य में देशप्रेम की रसधारा सदैव ही बहती रही है।

केसर नह निपजै अठै, नह हीरा निपजंत ।
सिरकटियां खग सामणा, इण धरती उपजंत।।

यही वीर भूमि ही इस राष्ट्र का आधार होती है। यही मातृभूमि ही देश प्रेम के प्रति एक दिव्य साधना है एक उसके प्रति अटूट श्रद्धा और निष्ठा है देश प्रेम की भावना का बखान किया गया है।

धरती म्हारी हूं धणी, ढालू नेजा ढल्ल।
कूण उतारै ठाकरां, ऊभा सीहां खल।।

यही देश प्रेम है राजस्थानी मरूभूमि में धीर, वीर, प्रणवीर, सत्यवादी, अपने खून से इतिहास लिखने वाले कई वीर योद्धाओं ने जन्म लिया है। सम्पूर्ण संसार में वीर धरा व देश प्रेम की कीर्ति का परचम फहराया जाता है। राजस्थानी साहित्य देश प्रेम की संस्कृति का अनूठा आधार है। उनकी चेतना ही उनका गरबीला हतिहास माना जाता है। राजस्थानी साहित्य देश प्रेम की गाथा से सरोबार है। इनमें लोकगीत, दूहा, कविता, कथा काव्य आदि देश भक्ति में रचा गया है। केसरीसिंह बारहठ की रचना '**चेतावनी रा चूंगटयां**' प्रसिद्ध रचना है जिसके माध्यम से उन्होंने उदयपुर के महाराणा फतैहसिंह को दिल्ली दरबार में जाने से रोका।

पग पग भम्या पहाड़, धरा छांड राख्यो धरम।
महाराणा मेवाड़, हिरदै बसियो हिंद रै ।।

देश प्रेम के भाव से विकास और मान व्यापक होता है क्योंकि इसके माध्यम से देशभक्ति, शौर्य, त्याग, कर्त्तव्यनिष्ठा स्वाभिमान, आदि गुणों से परिपूर्ण है। मेघराज मुकुल की कविता 'सैनाणी' वीर रस से भरपूर है। वहीं कन्हैयालाल सेठिया की कविता 'पाथळ अर पीथळ' को वीर भावों के कारण लोकप्रियता और प्रसिद्धि मिली। कवि ने देश प्रेम को एक साधना माना है। आस्था, भक्ति, भावना से ओतप्रोत माना है, और इसके समर्थन हेतु यह कहा गया है।

जलम भौम अर देश री, तीजी भगती ईश।
मिनखा कर तू लगन सूं, भली करै जगदीश ।।

राजस्थानी रो रंग : संस्कृति रै संग –

यह भी हमारी संस्कृति के से जुड़ा हुआ लघु निबन्ध है। संस्कृति में संस्कारों की प्रधानता होती है। संस्कार मनुष्य के कोमल मन के भाव है यह समाज में आदर्श रूप लेकर ही फलीभूत होते है। मनुष्य के हृदय में जो भी भाव दूसरों के हित के लिए हो चिन्तन मनन और चरित्र के सामूहिक मेल को ही संस्कृति की संज्ञा दी जाती है। राजस्थानी संस्कृति रंगीली, संजीली है। यहां प्रत्येक पर्व, उत्सव त्यौंहार को बड़े ही सुन्दर व आकर्षक ढंग से मनाया जाता है। यहां के वस्त्र, आभूषण वार्तालाप, खान–पान सभी की अनूठी रंगत है।

राजस्थानी संस्कृति का सेवरा है मेवाड़ का रासधारी, भीलों का गवरी नृत्य, तुर्राकिंलगी रम्मत, तेराताळी, पाबूजी री फड़, काळा गोरा भैरूं के भोपे, शेखावाटी का ख्याल यहाँ की लोक भावना दीवारों पर उकेरे गए चित्रों को देखकर लगता है, कि यह अभी सहज रूप से ही बोल पड़ेगें।

यहाँ जसनाथी सिद्धों की साधना भी अनूठी है, जहां वे एक तरफ आग के अंगारों पर नाचते है यह उनकी सच्ची आस्था का ही प्रमाण है। लोक संगीत की रसीली धुन भी अमृत रस बरसाकर सभी का मन मोह लेती है। यहाँ सभी धर्मों को समान आदर दिया जाता है राम, कृष्ण, विष्णु, गणेश सभी देवी, देवताओं की पूजा की जाती है वही पीर पैगम्बर, दरगाह भी पूजनीय है।

सभी अपनी आराधना मुक्त मन से करते है करणी माता, नागणेची, हिंगलाज, जीण माता, चौथ माता, शाकम्भरी, खाटूश्याम जी तिरवेणी, लोहागर आदि धर्म स्थान, तीर्थ पूजा स्थल है।

यहाँ के लोकदेवता भी अपनी शक्ति और भक्ति के प्रतीक माने जाते है इनमें गोगाजी, तेजाजी, रामदेवजी, पाबूजी, देवनारायण जी, हड़बूजी, भोमिया जी, इत्यादि देवता अपने चमत्कारों के कारण प्रसिद्ध रहे है।

राजस्थान संस्कृति और त्यौंहार का सच्चा मानदण्ड माना जाता है अगर समाज में कोई त्यौंहार और उत्सव नहीं मनाया जाये तो समाज का होना ठीक वैसे ही होगा जैसे चेतना हीन शरीर। क्योंकि उत्सव त्यौंहार ही संस्कृति का प्राणवान तत्व माना जाता है। राजस्थान में जैसे तीज के त्यौंहार का बहुत उमंग होता है सभी सखियां वर्षा ऋतु में एक दूसरी के साथ आनंदित होकर झूला झूलने लगती है, और चारों ओर सावन के गीत झूमने

लगते है ऐसा ही दूसरा पर्व महिलाओं के सौभाग्य का प्रतीक गणगौर माना जाता है। होली का त्यौंहार भी राजस्थानी जन जीवन से जुड़ा हुआ है। यहाँ चंग, नगाड़े, डांडिया, गीदंड धमाल आदि रसों से परिपूर्ण संस्कृति के दर्शन होते है।

यहाँ पर्व में आखातीज, रक्षा बंधन, दशहरा, दीपावली, संक्राति होली इत्यादि नें संस्कृति को प्राणवान बनाया है। यहाँ नवरात्रा और श्राद्धपक्ष भी संस्कृति को दर्शाते है। यहाँ के मेले, व्रत, धार्मिक मानवता लोक विश्वास, देव पूजा, तीर्थ स्थान आदि संस्कृति का सच्चा परिचायक है। साम्प्रदायिक सदभाव यहाँ का अनूठा प्रमाण है। यहाँ के मेलों व धर्म, उत्सवों में यहाँ की संस्कृति की झलक दिखाई देती है। यहाँ आंगन में मांडणा व अल्पना का भी अपना महत्त्व है।

लीप्यो चांक्यों आंगणो, च्यार कूंट चौगान।
मांडै मरवण मांडणां, निरखै चतुर सुजान ।।

वहीं राजस्थानी लोकगीत भी संस्कृति के परिचायक है। पीपली, पणिहारी बिणजारों, सुपनों आदि अनेक गीत राजस्थानी संस्कृति के सागर में अनमोल मोती है।राजस्थान सतियां, सूरमा अर सिध, सपूतां री धरती है राजस्थान वीरत्व का प्रतीक है। यहा आन बान शान के लिए सिर कटने पर भी धड़ युद्ध भूमि में लड़ पड़ता है। धन्य है राजस्थानी वीर संस्कृति –

नह पडौस कायर नरां, हेली बास सुहाय।
बलिहारी उण देश ड़ै, माथा मोल बिकाय।।

तेरा रो तलवार उठावै, इक्किस में झूझार
ई सूं बेसी जीवै जो भट, जीवण में धिक्कार

वहीं हम्मीर का हठ, सतियों का जौहर, मीरां की भक्ति, प्रताप की प्रणवीरता, भामाशाह का त्याग, नरसी रो मायरो इत्यादि संस्कृति के परिचायक है।

स्वतंत्रता संग्राम मायं नारी की भूमिका –

इस निबन्ध में भारतीय नारी का स्वतंत्रता संग्राम में दिये गये योगदान का चित्रण किया है।नारी को संसार की जननी माना गया है। वीर नरों की माँ होने का गौरव भी उसे प्राप्त है। साहित्य, समाज, संस्कृति और शिक्षा के क्षेत्र में वह सबसे आगे है। प्राचीन समय में दुर्गा ने दैत्यों का संहार किया वहीं सीता भी अपने सत्य मार्ग के लिए व पतिव्रत धर्म के लिए जानी जाती है।

अंग्रेजो के समय भी जब उन्होंने भारत में फूट डालो और राज करो की नीति अपनायी तभी आजादी का बिगुल बजाने के लिए नारी समाज में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने भी अपनी आजादी की लड़ाई अपने अन्तिम समय तक लड़ी।

आधुनिक समय में एनीबेसेंट का नाम भी समाज में गौरव का प्रतीक माना जाता है क्योंकि ये विदेशी होकर भी भारत में आजादी के लिए जन जागरण का बीड़ा उठाती है। आजादी का बीड़ा उठाने वाली अन्य नारियों ने भी अपने कदम आगे बढ़ाते हुए इतिहास में सदैव आगे रही।

जिनमें श्रीमती रमा देवी (पूना) श्रीमती शारदा देवी (अहमदाबाद) श्रीमती सुमित्रा देवी (पूना) श्रीमती जमना देवी (जयपुर) इन नामों की सूची की इन सभी नारियों ने स्वतंत्रता संग्राम के लिए नारी समाज की जागृति का प्रत्यक्ष प्रमाण दिखाई देता है।

इसी स्वतंत्रता संग्राम में कमला नेहरू, विजयलक्ष्मी पंडित, सरोजनी नायडू, का नाम भी इनके साहसशील कर्मों के कारण बड़े आदर के साथ लिया जाता है। श्रीमती जानकी देवी बजाज, अंजनी देवी धरम पत्नी श्री रामनारायण चौधरी रामादेवी जोशी आदि ने ंभी बिजोलिया आंदोलन में भाग लेकर अपना साहस दिखाया। असहयोग आंदोलन, नमक सत्याग्रह, भारत छोड़ों आन्दोलन में भी नारियों की अत्यधिक जागरूकता दिखाई देती है।

राजस्थान में 1925 ई. से आजादी का अंकुरण फूट पड़ा 1934 में सीकर में हुये प्रजापति यज्ञ में सभी ने बहुत जोश से भाग लिया इसी समय ठा. देशराज की धर्मपत्नी उत्तमादेवी के नैतृत्व में एक सशक्त महिला मण्डल का गठन हुआ एक विशाल जन समूह के साथ यह मण्डली कटराथल पहुँची इसमें रामेश्वरी देवी शर्मा अनुसुया देवी फूला देवी, किशोरी देवी, रामकंवरी देवी, रामप्यारी देवी आदि के नाम उल्लेखनीय है।

अतः भारत की वीर नारियों ने पुरुषों के साथ कन्धें से कन्धा मिलाकर अपनी धाक जमाई और इनका इतिहास में गौरव गान हुआ बड़ी साहसिकता के साथ अपने जोश का परिचय दिया।

राजस्थानी उपन्यासों माय बोलता जन–जीवन अर–विकास

इस लघुनिबन्ध में राजस्थानी जन जीवन के बारें में बताया गया है। गद्य साहित्य के अन्तंर्गत उपन्यास एक अनूठी विद्या है। इसमें सम्पूर्ण जीवन की झांकी संवेदना के साथ दिखाई देती है। इसमें जीवन के आस–पास के परिवेश, उस समय की परिस्थितियां जीते जागते प्रसंग और जीवन की व्यापकता के दर्शन होते है।

राजस्थानी में ऐतिहासिक, पौराणिक, राजतीतिक, मनोवैज्ञानिक उपन्यास की तुलना में सामाजिक उपन्यास ही लिखे गये है। जिसमें राजस्थानी का पहला उपन्यास '**कनक सुन्दर**' एक सामाजिक उपन्यास है। इसके साथ कई सामाजिक उपन्यास और भी लिखे गये है। जिनमें 1. चम्पा 2. आभै पटकी 3. आंधी अर आस्था 4. मैंकती कायाः मुळकती धरती 5. मेवैं रा रूंख 6. घर संसार 7. हूं गोरी किण पीव री 8. जोग संजोग 9. खुलती गांठां 10. अबोली

इन सामाजिक उपन्यासों का कथ्य जन जीवन से जुड़ा हुआ है। इसमें जन जीवन की संवेदनशीलता के दर्शन दिखाई देते है। कही इसमें शोषण की पीड़ा है, तो कही बेमेल विवाह की पीड़ा, भूख, प्यास, कुण्ठा, प्रताड़ना उपेक्षा, दहेज, अज्ञानता अशिक्षा, कुरीतियां आदि को भोगता हुआ तड़फड़ाता है, तो कोई स्वतंत्र होकर अपनी सासें लेना चाहता है।

राजस्थानी में लिखा पहला उपन्यास '**कनक सुन्दर**' जिसकी रचना **शिवचन्द भरतियां** के द्वारा हुई है यह एक सामाजिक उपन्यास है इसमें दो परिवारों की कथा का समावेश किया गया है, जिसमें हजारीमल का परिवार अशिक्षा और आडम्बर से जकड़ा हुआ है। वहीं मुरलीधर का परिवार इन बुराईयों को त्याग चुका है। इस उपन्यास में देश की पराधीनता, मारवाड़ी समाज की दुर्दशा, शिक्षा का महत्त्व, फिजूल खर्ची, व्यर्थ का दिखावा आदि का समावेश है।

वहीं **श्री नारायण अग्रवाल** ने '**चम्पा**' उपन्यास में वृद्ध विवाह की समस्या को बखूबी बताया है। इसी उपन्यास की कड़ी में तीसरा उपन्यास **श्रीलाल नथमल जोशी** द्वारा रचित '**आभै पटकी**' है इसमें विकास की विचारधारा और विश्वास की शैली की झलक दिखाई देती है। इसमें एक विधवा स्त्री की व्यथा को दर्शाया गया है। उसे अपने ससुराल में सभी अपने पैर की जूती मानकर दुर्भाग्यशाली, कुदर्शनी मानते है। उसके साथ बुरा व्यवहार किया जाता है। आखिरकार उसका देवर मोहन उससे विवाह करके इस समस्या का समाधान करता है।

मैकती कायाः मुलकती धरती यह **अन्नाराम सुदामा** का उपन्यास है। इसमें सुथारी नानी की पीड़ा को दिखाया गया है। इसमें राजस्थानी जन जीवन की झांकी सभी का मन मोह लेती है। वहीं '**आंधी अर आस्था**' भी सुदामा जी का दूसरा उपन्यास है। इसमें जनजीवन का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है। काल की व्यापकता का इस उपन्यास में चित्रण हुआ है। गरीबी बेरोजगारी, सेठ की व्याभिचारी प्रवृति, सरपंच का शत्रुवत व्यवहार आदि के

बारे में बताया गया है। **'मेवे रा रूखं'** इन्हीं के द्वारा रचित उपन्यास है इसमें मूलधन से साहुकारों द्वारा ग्रामीण लोगो पर किये गये शोषण का चित्रण किया गया है।

वहीं **'घर संसार'** में दहेज दानव के रूप में प्रत्यक्ष रूप से प्रकट सास ससुर से संघर्ष करती हुई सुधा के जन–जीवन में चेतना लाने का भरपूर प्रयास किया गया है। यह उपन्यास आज की नारी की सामाजिक समस्या व संधर्षशीलता को प्रकट करता है। इस उपन्यास में ग्रामीण जीवन की जटिलता सूदखोरी की मार, बेगारी के बंधन को भी बखूबी निभाया है।

'हूं गोरी किण पीव री' यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' द्वारा लिखित उपन्यास है इसमें विधवा विवाह की समस्या का चित्रण किया गया है। जिसमें देवर भाभी का नाता होता है, और उसके पति को जिसे मरा हुआ मानते है, वह बाद में प्रगट हो जाता है। इस उपन्यास की नायिका सुखड़ी सोचती है कि हूं गोरी किण पीव री। इसमें एक स्त्री के मर्म की व्यथा का यर्थाथ चित्रण हुआ है। इनके दूसरे उपन्यास **'जोग संजोग'** में विवाह संबधी सामाजिक विकृति का भी चित्रण हुआ है। जिसमें धन लोभ के लिए विवाह करना छोड़ना और दूसरा विवाह करना दुखी होना, दर–दर भटकना, आत्म हत्या करना आदि बातो द्वारा जन जीवन में संबधों की जड़ता को भी बताया गया है।

पारस अरोड़ा का उपन्यास **'खुलती गाठं'** में आधुनिक जीवन में फिरते प्रेम प्रंसग की समस्या, अन्तर्जातीय विवाह आदि का चित्रण हुआ है। **श्रीराम निवास शर्मा** का उपन्यास **काल भैरवी** में गांव में फेले अंधविश्वास, जन्तर डोरा, तंत्र–मंत्र, साधना का प्रत्यक्ष चित्रण हुआ है। क्योंकि आमजन इन सभी पर विश्वास करता है।
'भोलापण' उपन्यास में भी शोषण की कहानी है।

अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि सभी राजस्थानी उपन्यासों में प्रमुखतया समाज सुधार, शिक्षा प्रसार, शोषण से मुक्ति के बारे में बताया गया है। यहाँ सामाजिक बदलाव, कुरीतियों को दूर करने, अंधविश्वास से छुटकारा पाने के लिये सजग रहने हेतु भी प्रेरण दी गयी है। इसलिए राजस्थानी उपन्यास समाज का दर्पण भी माना गया है, क्योंकि इससे ही हम समाज को स्वस्थ व स्वच्छ निर्मल सोच प्रदान कर सकते है।

तीसरी वेणी के लेखन में बातचीत (इंटरव्यू) मे डॉ. शर्मा के द्वारा अपने आत्मीय जनों के साथ हुई बातचीत को संकलित किया गया है। इसमें इनकी आत्मीय अनुभूति सहज भाव से अभिव्यक्त हुई है। इसमें इनके मार्मिक कथन का मिठास साहित्य साधना की ललक, मर्म स्पर्शी भावों का चित्रण और आत्म कथ्य का आनन्द भी इस विधा मे देखने को

मिलता है। इसके साथ ही साहित्य शिक्षा कर्म निष्ठा आदि यथार्थ कथन भी प्रेरणादायी है। भावां रो झूमकों नामक रचना में लेखक डॉ. शर्मा ने 108 भावात्मक रचनाओं कों मणियों कें रूप में संजोंया गया है।

(ड.) विविध –

डॉ. उदयवीर शर्मा हिन्दी व राजस्थानी के ख्यात विद्वान् एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी है। उन्होंने अपने आस–पास के यथार्थ को अनुभूति का अंग बनाकर प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने काव्य भावां रो झूमकों में लगभग 108 लघु निबन्ध मणियों के रूप में संजोये है। जिनमें आध्यात्मिक चिन्तन, भक्ति, समरपण, भावपूर्ण अरदास, जीवन्त स्वावलम्बन, संवेदना, भाव प्रवणता, समाज चिन्तन, देश भक्ति, विराट भावना, सर्वव्यापकता, कामनाएं, समाज दीठ आदि से जुड़े भावों के तत्व दर्शन इनमें होते है। इनके काव्य में कथन की कारीगरी, संरचणा में संवेदनशीलता, भावां री भव्यता, सजीलों शिल्प, मरमीला कथन, विविधता का वैभव आदि विशेषता दिखाई देती है।

'यादां री कोथळी रा माणक मोती' एक संस्मरण काव्य है। जिसमें ग्यारह संस्मरण लिखे गये है। जिनमें श्रद्धा, सम्मान, समरपण, जीवन–प्रसंगों की मीठास, पुरानी यादों की रस भरी लड़ियां समायी हुई है। इसमें ग्यारह संस्मरण में इन ग्यारह विद्वानों कें साथ को स्मरण के आधार पर लिखा है। ये सभी राजस्थानी व हिन्दी भाषा के विख्यात लेखक, साहित्यकार, समर्थक, पोषक, उद्धारक, ज्ञाता आदि के जीवन से जुडें रोचक व सरस प्रंसगों को सजाया गया है। इन में साहित्य, संस्कृति और इतिहास से जुड़ें मनीषियों के गुणों के दर्शन होतें है।

डॉ. उदयवीर जी की लेखनी साहित्य के अन्य प्रमुख अंगों पर लिखने के लिए भी गतिशील रही है। आपने अपनी लेखनी से विविध पत्र–पत्रिकाओं का **संपादन** का कार्य भी सफलता पूर्वक किया है। जिसमें **'वरदा'** का नाम सर्वोपरि है। यह एक त्रैमासिक पत्रिका है। इसके अतिरिक्त आपने अनेक पुस्तकों का कुशलता के साथ संपादन किया है।

आपने शताधिक काव्यों की भूमिकाएं लिखि है। इन ग्रन्थों की भूमिकाओं में विचार मंथन, सहज विश्लेषण, सूक्ष्म दृष्टि, समीक्षा कौशल आदि विशेषताएं देखने को मिलती है। इन विशेषताओं के कारण ही आपके द्वारा लिखि गई भूमिकाएं उच्च भावों को प्रदर्शित करती है। शर्मा जी के काव्य में मनोविज्ञान का पुट, दर्शन शास्त्र का स्पर्श, निज की दीठ, निष्ठा, अनुभूति–अभिव्यक्ति आदि मिलकर एक साथ इनके काव्य को सरस, सहज, सरल और सुकोमल बनाती है।

अब तक आपने शताधिक पुस्तकों की लघु समीक्षाएं लिखी है, जो भिन्न भिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई है। जिनमें कृपाराम खिड़िया(हिन्दी), अम्बू रामायण (राजस्थानी), साहित्य की परम्परा एवं प्रगति, आदि प्रमुख है। इनके समीक्षा ग्रन्थों में शोध दृष्टि, विवेचन, विश्लेषण आदि की प्रखरता देखी जा सकती है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपनी काव्य रचना का आरम्भ इतिहास लेखन सें ही किया है। जिसमें बिसाऊ का सक्षिप्त इतिहास, शेखावाटी का संक्षिप्त इतिहास आदि प्रमुख है। आपके इतिहास लेखन की इस विधा में सरसता के साथ–साथ पुष्ट प्रमाण देने वाले तथ्य भी सभी के लिए प्रेरणादायी है।

आपने लोक साहित्य संग्रह और प्रकाशन में भी अपनी रुचि दिखाई है। आपके लोक साहित्य विषयक लेख पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहतें है। लोक गीत, लोक कथा, व्रत कथा, भजन, हरजस, कार्तिक स्नान कथा आदि भी आपने समय–समय पर करवाया। लोक साहित्य में आपकी गहरी पैठ है।

निष्कर्ष –

डॉ. उदयवीर शर्मा की गद्य कृतियों का मूल्यांकन करने पर ऐसा प्रतीत होता है, कि जिस प्रकार कविता अनुभूतियों और संवेदनाओं की गहराई और व्यापकता से जुड़ी हुई है, ठीक उसी प्रकार बाह्य संसार की क्रिया प्रतिक्रिया, परिवेश और स्थितियों से टकराते हुए, रचनाकार की अनुभव संपदा, आत्म संवेदन गद्य के विविध रूप में अभिव्यक्त होती है।

डॉ. उदयवीर की रचनाएं हमें कुछ न कुछ शिक्षा व नैतिक मूल्यों को सीखने का अवसर प्रदान करती है। इसी क्रम में इन्होंने 'तिरवेणी' में राजस्थानी साहित्य की तीन विधायें – रेखाचित्र, लघु निबंध, और साक्षात्कार को सम्मिलित किया है। इनके रेखाचित्रों में कल्पना व यर्थाथ को मिश्रित किया गया है।

कवि डॉ. उदयवीर ने कथाओं के अतिरिक्त अन्य विधाओं में भी अपनी लेखनी को सार्थक बनाया है। इन्होंने प्रथम वेणी में रेखाचित्र लिखें है, जो अपने आस–पास के ही पात्र है। दूसरी वेणी में इनके लिखे प्रमुख लघु निबंध, है जिसमें 'राजस्थानी मांय देश प्रेम,' 'स्वतंत्रता री स्वर्ण जयन्ती', 'राजस्थान रो रंग संस्कृति रै संग', 'स्वतंत्रता संग्राम में नारी की भूमिका', 'आ धरती राजस्थान री', 'धन री लालसा अर मानवता रो हास', सेवा रो नैतिक दायित्य', राजस्थानी उपन्यास मायं 'बोलतो जन–जीवन अर विकास' ।

तीसरी वेणी के संवाद (डॉ. गोरधनसिंह शेखावत), बतलावण (श्री दूलाराम सहारण), वार्तालाप (श्री संतोष कुमार गोयल), साक्षात्कार (श्री टी. सी. प्रकाश), बातचीत (द्वारा श्री

सुधाकर श्री वास्तव) है। इनके माध्यम से डॉ. उदयवीर शर्मा ने इनके दैनिक जीवन से जुड़े अनुभव और इनकी सफलता के सोपानों को सभी के समक्ष रखकर सभी के लिए एक उच्च्य मार्ग प्रशस्त किया है। इसमें साथ ही आपने शेखावाटी के इतिहास दर्शन को भी सभी के समक्ष साहित्य के माध्यम से प्रदर्शित किया है।

पंचम–अध्याय

गद्य–पद्य का रचनात्मकता का मूल्यांकन 154–196

(अ) कथ्यगत चेतना

(आ) प्रकृति और मानव प्रेम का समन्वय

(इ) सांस्कृतिक दृष्टिकोण

(क) इतिहास

(ख) युगबोध

(ई) मानवतावादी दृष्टि

(उ) मानवमूल्यों का समर्थन

(ऊ) परम्परावादी दृष्टि

पंचम–अध्याय

गद्य–पद्य की रचनात्मकता का मूल्यांकन

(अ) कथ्यगत चेतना –

हिन्दी व राजस्थानी के प्रसिद्ध व अपनी काव्य रचनाओं में प्रतिष्ठित समर्थ रचनाकार डॉ. उदयवीर शर्मा बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी है इन्होंने गद्य व पद्य दोनों में अपने काव्य सजृन करके कई आयाम प्रस्तुत किये है। इन्होंने अपनी कविताओं को जीवन से जोड़कर जीवन को एक नई दिशा प्रदान की है। कविता का व्यापक रूप डॉ. उदयवीर शर्मा के पद्य खंड की कविता में दिखाई देता है इसमे मानव कें उदार व मानववादी दृष्टिकोण को उभारा गया है। डॉ. उदयवीर शर्मा की गद्य व पद्य के काव्यों को पढ़ने से प्रतीत होता है कि यह अतल गहराई में छिपे हुये भावों को भी स्पर्श किए बिना नहीं रह सकती है। इनके गद्य व पद्यों को पढ़ने से लगता है कि जैसे ये एक गहरी सच्ची अनुभूति को लिये हुए है। इनकी सर्जना मे भी व्यापक कला की गहराई है। इनके काव्य कहीं तो सामाजिक जीवन से जुड़े हुये है, तो कहीं धर्म संस्कृति से जुड़कर अपने आप में अनूठा वातावरण प्रस्तुत करते है।

इनके काव्य का कथ्य अपने आप में विशिष्टता लिए हुए होता है। इनकी काव्य में चाहे कविता हो, चाहे लघु काव्य हो या गद्य साहित्य या साहित्य की अन्य कोई विधा वह अपने अहम् तक पहुंचकर अपने लक्ष्य को प्राप्त करती है। कवि ने अपनें विचारों को अनेक विधाओं के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है।

इसी प्रकार **डॉ. उदयवीर शर्मा** ने शेखावाटी क्षेत्र के त्याग बलिदान को उजागर करने वाली कई एकांकियां लिखी है, जिसमें राजस्थान की गौरव गाथा को प्रदर्शित किया गया है, जिनमें **गौड़ बुलावे घाटवै**, **प्रणवंती राणी**, **बलजी–भूरजी**, **तोगा री तलवार**, **गोरां रो त्याग, हार देय पिव पावियो, पगफेरो और दायजे रो बंटवारों** राजस्थानी भाषा में लिखे गये प्रभावशाली एंकाकी है। इन एकांकियों के संवाद सहज व सरल होने के साथ ही पाठक व श्रोता के मध्य एक संबध स्थापित करने में सफल हो पाते हैं। इन एकांकियों के माध्यम से भारतीय संस्कृति की परम्परा व जीवन से जुड़ने का भी अवसर प्राप्त होता है।

उनके **गद्य लेखन** की शृंखला की कड़ियो में **निबंधो** की भी रचना की है। यह निबंध कथन, कल्पना, भाव, शैली से ओतप्रोत है इसमें कई विषय समाज, साहित्य, शिक्षा,

धर्म, राजनीति से जुड़कर हमारे दैनिक जीवन में उपयोगी सिद्ध हुए है। जिनमें प्रमुख है **'धोबीघाट'** जिसमें बताया गया है कि विभिन्न जातियों के कपड़े एक ही घाट पर आकर मानो अपने–अपने कपड़ो को अहंकार से भरकर व्यक्त करते है।

गद्य लेखन मे अनेक लघुकथाओं की रचना की है। इन्होंने अपनी लघुकथाओं में **'ठूंठ'** शीर्षक में लिखा है जब एक वृक्ष हरा भरा था तो सभी पक्षी उस पर विश्राम करने आते तथा उसके फल फूल सभी को आनंदित व प्रसन्नचित कर देते थे, लेकिन जैसे ही वह सूख जाता है। वह अपने बीते समय की बातों को याद करके उदास होता है। इसे लेखक जीवन दृष्टिकोण से जोड़कर बताते है कि यह सुख–दुख तो ढलती छाया है। उसी प्रकार जीवन में भी कई उतार चढ़ाव आते ही है उन्हें भी प्रसन्नता धैर्यता से पार करना चाहिये।

कवि की सर्जनात्मक चेतना के आयाम अपने में इतने व्यापक और संवेदात्मक स्थितियों को इस प्रकार समेटे हुये हो सकते है, कि कविता का एक कदम तो अतीत व दूसरे कदम पर भविष्य हो सकता है। डॉ. उदयवीर शर्मा की अनुभव प्रक्रिया के अनेक स्तर इस तथ्य को उजागर करते है, कि कविता व्यक्ति के अन्तर्मन व परिवेश से जुड़कर अपने आपको सार्थक साबित करने में सफल होती है। उन्होंने अपने लेखन को विकास क्रम की ओर बढ़ाते हुये समाज के संवदेनात्मक व भावात्मक ढाचे से जोड़ा है, क्योंकि इससे वह समाज से तो जुड़ते ही है। साथ ही इससे यह भी पता चलता है, कि वह कितनी गहराई तक समाज के व्यक्तियों के हृदय को स्पर्श कर पाया है। इन्होंने गद्य पद्य दोनों विषयों में अपने साहित्य की रचना की। कविता खंड की कृतियां मनमोहक तथा अपनी विशेषताओं से परिपूर्ण है। समग्र कविता खंड को आठ खंडों में विभाजित किया गया है। –

1. प्रकृति काव्य
2. सम्बोधन काव्य
3. मुक्तक काव्य
4. भक्ति काव्य
5. कथा काव्य
6. भावानुवाद (पद्य)
7. शतक काव्य
8. विविधा (डॉ. शर्मा की चुनींदा कविताओं का संचय)

(1) प्रकृति काव्य –

प्रकृति काव्य में प्रकृति के प्रति इनकी सहज चेतना उजागर होती है इन्होंने डांफी, सूँटो, मरूधर री महक आदि रचनाओं को मानव की संवेदना सें जोड़ा है।

डांफी के माध्यम सें कवि ने माना है कि प्रकृति का चाहे विनाशक रूप ही क्यों न हो लेकिन वह सौन्दर्यगत आकर्षण भावना से जुड़ा हुआ जरूर है। इनकी मानवीकरण की भावना प्रकृति के साथ–साथ चेतन सत्ता के साथ सम्बंध जोड़कर कहीं दार्शनिक रूप से उभरी तो कहीं अपनी समता व विषमता को लेकर विद्रोही रूप में प्रकट हुई है।

डांफी ठारै जगत नै, छाय घोळती छान।
म्हैर राख, पाछी बुला, पवन–पूत हणमान।।

रस भरिया रस झूमतां, खेत बाग बन पहाड़।
खावै डांफी चांदड़ी, भावै घणो उजाड़।।

रोही–रोही रूंखड़ा, खींप फोगला कैर।
सरणागत नै राखरया, डांफी सूं कर बैर।।

डांफी दीखी आवती, खोयो सगळा होस।
दुरजण री छाया बुरी, डाकण रो पाड़ोस।।

गरमी कुवै कुदगी, डांफी री खा मार।
ठिरया कीलिया बारिया, तपै चिलम नैं स्हार।।

सूँटो राजस्थानी का यह एक ऋतु काव्य है। यह एक प्राकृतिक जीवन से जुड़ा हुआ काव्य है इसमें सूंटो का अर्थ सामान्यतया आँधीं के बाद आने वाली वर्षा से है इसे संस्कृत में झञझां, अंग्रजी में 'स्टोर्म' और उर्दू में 'तूफान' नाम से संबोधित किया जाता है।

राजस्थानी में 'सूँटो' शब्द संस्कृत के सवृष्टिक शब्द से उत्प्रेरित है लेकिन भूगोल मे इसे चक्रवात और अंग्रेजी में 'साइक्लोन' इसका परिभाषिक शब्द है। उर्दू में 'तूफान' शब्द चीनी भाषा में 'ताई–फून' से बना है।

हमारे राजस्थानी काव्य में भी ऋतुओं का वर्णन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। जैन शैली में फाग, चौमासा, बारह मासा को प्रमुखता दी गई है रासो काव्य परम्परा में बीसलदेव रासो, वंश भास्कर आदि में ऋतु वर्णन भरा हुआ है इसके बाद राजस्थानी मे एक के बाद एक क्रम से ऋतु काव्यों की रचना हुई जिनमें कलायण, लोर, बिरखा, बीनणी, मेघमाल आदि है।

'पवन पूत' रै कुल में जलम्यों, राख सदा तूं कुल री कांण'।
राम भगत सी सेव कर तू , निज खिमता नै सही पिछाण।।

भारी जोस, जवानी लूंठी, ऊंचों कुळ ऊंचो आवास ।

ई ढाळे जै करतब हो तो, सूंटाँ सोनै मांय सुवास ।।

बिरखा ओळा घणै बेग सूं, चढ़ चालै जद पून बिवाण ।
रोही काँपैं, खेती धूजै, आवै फाँफां बे–परवाण ।।

ढाँढा बिलखै ढूढा तिड़कै पड़ै पंखेरू हो विद्रुप।
रावण सो जद अट्टहास कर सूंटो प्रगटे असली रूप।।

डॉ. उदयवीर शर्मा के पद्यात्मक काव्य में सम्बोधन काव्य की रचना हुई है, इसके अन्तर्गत यह बहुत पुरानी व प्राचीन परम्परा रही है। भारतीय संस्कृति में वेद उपनिषदों में अग्नि, इन्द्र, सोम, वरूण आदि देवताओं को बार–बार सम्बोधित किया गया है।

पालि, प्राकृत डिंगल, अपभ्रंश, जैन सभी साहित्यों मे इसका प्रत्यक्ष प्रमाण दिखाई देता है। राजस्थानी लोक साहित्य में भी इसका अनुपम उदाहरण देखने को मिलता है। लोककाव्य में **ढोला मारू रा दूहा** का बड़ा महत्त्व है इसमें प्रेम कथा व सम्बोधन काव्य को बहुत महत्त्व प्रदान किया गया है।

इस परम्परा में ''**जेठवै रा सोरठा**, **दुरसा जी आढ़ा री बिरदा छितरी**, 'महाराणा प्रताप' को सम्बोधित करके लिखी गयी सम्बोधन काव्य रचना है। नगजी खिड़िया की '**भवा–स्तोत्र** दुर्गा को सम्बोधित करके लिखी गयी रचना **पाबूजी रा सोरठा**' **करूणा बावनी**' इसी क्रम में रची हुई है।

सम्बोधन काव्य परम्परा की शुरूआत कृपाराम जी खिड़िया की रचना 'राजियै रा सोरठा' से हुई है।

राजस्थानी साहित्य में सम्बोधन काव्यों में दुलियां को सम्बोधित करके लिखे गये पदों में लाखणसी रा दूहा, किसनिया, राजिया, रामला, नोपला, रेखला, मगनिया, मातिया, दानिया, चकरिया, रमणिया, शेखरा, भायला, सावंरा आदि लोकप्रिय रचनायें है।

इन सभी में '**मोलका रा सोरठा**' राजस्थानी भाषा में राष्ट्रीय पर्यावरण का प्रतीक एक सम्बोधन काव्य है जिसमें वर्तमान समय के प्रदूषण को प्रतिकार करके प्राकृतिक, सामाजिक, राजनैतिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक पर्यावरण को शुद्ध व पवित्र रखने की बात कही गई है। भ्रष्टाचार के द्वारा भी हमारा सामाजिक और राजनीतिक वातावरण भी दूषित होता जा रहा है।

मोलका रा सोरठा राजस्थानी सोरठा **शतकावली** रूप में है। इसमें सात शतकों में 886 सोरठें लिखे है। जिनकी मंगलाचरण से इसकी शुरूआत की गई है इनमें सभी देवी देवताओं की प्रार्थना की गई है। जिनमें दुर्गा, गणेश, सरस्वती, श्रीराम, हनुमान आदि को

सम्बोधित किया गया है। इसके साथ ही बढ़ती जनसंख्या, कटते वन–घटते पशु–पक्षी, निर्धनता, अभावग्रस्त जीवन आदि राष्ट्रीय समस्याओं व समाधानों से भी सचेत किया गया है।

पहले शतक में – जय जवान जय किसान में 'लालबहादुर शास्त्री' के जीवन की ज्योति को उजागर किया गया है कि देश को विजय किरण का प्रकाश देकर स्वयं जय धाट की समाधि में चिर निद्रा की समाधि में सोये हुये है तथा यह उनके माध्यम से 'जय जवान जय किसान' के नारे को सम्बोधित करके लिखा गया शतक है। जवान व किसान दोनो को ही क्रियाशील रहना चाहिये क्योंकि जवान तो राष्ट्र की सुरक्षा करता है, और राष्ट्र के विकास में किसान का योगदान है।

जय जवान – इसमें वीरता, जोश, उत्साह का वर्णन करते हुये राजस्थानी काव्य में युद्ध वर्णन, बलिदान, त्याग में वीर रस का सांमजस्य दिखाई पड़ता है। कवि ने पारम्परिक युद्ध वर्णन के साथ–साथ निज मौलिकता को भी प्रकट किया है। वीर जवान दूसरों के दुःख संताप दूर करने के लिए अपने जीवन की कभी भी चिंता नहीं करता है।

सूर हरै संताप, खूद रो जीवण खोय कै ।
ओटै पर–दुःख आप, मरतो–मरतो, मोलका।। 1।।

वह युद्ध भूमि को अपनी सेज समझ कर, अपने तप और तेज का परिचय देता है।

समर भौम री सेज, वीर बिछाया बिस्तर ।
तप सूं ओपै तेज, मद गरणावै, मोलका।। 2।।

जय किसान – जय किसान में किसानों के जीवन का महत्त्व बताते हुये कहा गया है कि उसका जीवन त्यागी, तपस्वी के समान है। वह एक सच्चे कर्मयोगी के समान निष्काम भाव से अपना जीवन जीता है उसे सभी अन्नदाता, धनदाता और समृद्धिदाता के नाम से संम्बोधित करते है। उसके खून–पसीने का रंग फसल के रूप में पनपता है।

धन–धन धरती पूत, तेरो सो तू ही सबळ।
करम–धरम रो दूत, खेतां रमरयो, मोलका।। 137।।

कृषि से ही अपने पूर्वजो का मान सम्मान बना हुआ है, और किसान धरती के मान सम्मान के लिए अपने आप को समर्पित करता है।

करसा तेरै पाण, पुरखां रो रुतबो बण्यों।
धन धरती,धन आण, अटल निभावै, मोलका।। 150।।

दूसरे शतक मे **'पर्यावरण'** के अन्तर्गत ऋतुओं का वर्णन किया गया है, जिसमें गर्मी, वर्षा, सर्दी को अनेक उपमाओं से सुसज्जित किया गया है। इन तीनों ऋतुओं का भौगोलिक व प्राकृतिक दृष्टि से राजस्थानी की मरूभूमि में बहुत महत्त्व है।

गर्मी के बारे में कहा है।

आकासां सूं आग, बरसै तगड़ो तावड़ो।
झुळस्या बणता बाग, अग–जग तपरयो मोलका।। 1।।

लूआं बरसै लाय, टीबा सूं झळ नीसरै ।
छायां छीपगी, जाय, मरणै सूं डर, मोलका।। 4।।

वर्षा ऋतु के महत्त्व के बारे में कहा है कि –

गरमी तेरै गैल, बरखा आवै बेग सूं।
खींचै दुःख सुख बैल, जीवन रथ ज्यूं, मोलका ।। 28।।

चौमासै रो चाव, च्यारूं कानी चिमकरयो।
खेत–गुवाड़ी–गांव, मस्ती छाणै, मोलका।। 30।।

सर्दी के महत्त्व को बताते हुए कह रहे है –

स्याळो आयो स्याम, घर में कोनी घासियो ।
चड़–चड़ फाटै चाम, मारै डाँफर, मोलका।। 96।।

सरदी मारी कूक, गरमी भाजी दबड़कै ।
कूआं में जा ल्हूक, जान बचाई, मोलका।। 100।।

कवि ने पर्यावरण के साथ–साथ **सामाजिक सांस्कृतिक** स्वरूप का बखान किया है। जहाँ पर्यावरण प्रदूषण की ओर से सभी व्यक्ति सतर्क और चौकन्ने होते है, वहीं हम ही सामाजिक सांस्कृतिक स्वरूप को स्वयं ही बढ़ावा देकर समाज में इन बुराईयों को प्रवेश देते जा रहे है। आज समाज में आर्थिक शोषण, भ्रष्ट राजनीति दहेज दानव, महंगाई की मार, बढ़ती जनसंख्या औद्योगिक अभिशाप, कटते वन आदि समस्याएं पावं पसारे हुए नजर आती है। जिन्हें कवि ने अपने काव्य में सम्मिलित करके इन्हें समाज से दूर करने का आह्वान किया है ।

दहेज दानव–

राकस रूप दहेज, पळकै बणती बेलड़यां ।
घटियों मन–बळ तेज, माया आँधी मोलका।। 5।।

बोटां री राजनीति–

वोटां रो व्यौपार, चाल्यो चोखो चाव सूं।
भेद खुल्यो जद भार, माथै मंडियो मोलका ।। 10।।

औद्योगिक अभिशाप –

जळ थळ नभ अर पून, परदूसण सूं बिगड़िया।
कर कुदरत रो खून, मुसकल बचणो मोलका। 95।।

जन्संख्या विस्फोट–

जन संख्या रो जाळ परगति रै पीछै पड़यो ।
जटिल बणयो जंजाळ, मिलकै काटो मोलका।। 97।।

कवि ने **तीसरा शतक** भी पर्यावरण को सौंपा है। यह पूर्ण रूप में भारतीय संस्कृति से ओतप्रोत किन्तु इसका रूपरंग बदल दिया गया है। प्रकृति का उपादान संस्कृति को समर्पित किया है। प्राकृतिक भौतिकवाद, सांस्कृतिक आध्यात्मिक आदि तत्वों की तरफ कवि ने संकेत किया है। इनके काव्य में टीबडा एवं खेजड़ें भी त्योंहार और महापुरुषों में बदल गये है।

टीबड़ा –

टीबा है मरुधर रा जाया, टुच पुचिया सूं कियां डरै ?
सै रुत रा बै झटका झेलै, सूंटै ने बै के सदरै ?।।

ज्यूं सीमा पै खड़यो सिपाही, पी जीवन री खारी घूंट ।
धरा रुखाळै, करतब पाळै, ज्यूं फैलावे चारूं कूंट ।। 54।।

रोही अर खेत –

कोई डाळो पड़्यो धरा पर, कोई अध टूट्यो लटकै ।
जाणै नर रां धरड़ू जुपस्या, अपणां में मनड़ौ भटकै।। 21।।

कई–कई बिरछा री डाळी, ठोड–ठोड सूं टूट पड़ी ।
जाणै गंजै रै सिर पर सूं, ज्यूं केसां री लड़ी–झड़ी ।। 22।।

गाँव –

गाँव गोरवै जूनो पीपल, ऊभो सूंटा देख्या भोत ।
इबकै यो सागीड़ो आयो, सूंसांती आई ज्यूं मोत ।।

तनड़ो काप्यों डाळयां काँपी, पान–पान काँपण लाग्यो।
पण बूढ़ो सगती रो पूरो, झेल्या झटका, बो भाग्यो ।। 46।।

त्योंहार –

तीज –

नैणां उझळयों नीर, साथण चाली सासरै।
धीरज हुयो अधीर, कुण झूलै अब, मोलका ।। 87।।

गणगौर –

सज धज खड़ी सु–नार, करै सुमंगल कामना ।
सदा करूं सिणगार, गोरल थारो, मोलका।। 102।।

महापुरुष –

सत जीवण रो सार, अजर अमर गुण ओपतो।
सजना रो सिणगार, मनरो मांडण, मोलका ।।103।।

गांधी दीन्यो ग्यान, मोहन जग नै मोहगो।
भळक्यों बण जग भान, मुकुट मिनख रो, मोलका।। 109।।

चौथे शतक में कवि ने **प्रदूषण व सामाजिक सांस्कृतिक** से जुड़े कुल 123 सोरठे लिखें है। इस काव्य का मूल आधार–भौतिक, सामाजिक आर्थिक राजनीतिक प्रदूषण से भी खतरे को दर्शाता है। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से तो अपनी सदाबहार सनातन संस्कृति को यूरोप की पाश्चात्य संस्कृति से भी खतरा बताया गया है। सभी के कृपण मन में स्वदेश के प्रति भावना केवल कहने मात्र को ही रह गई है। आज के समय मे यदि हमें सबसें बड़ा खतरा है, तो वह पाश्चात्य सभ्यता के अन्धानुकरण से है।

कवि ने प्रदूषण के कारण तो चितां व्यक्त की ही है साथ ही उसे भ्रष्टाचार व सामाजिक–सांस्कृतिक स्वरूप से अधिक भय दिखाई देता है साथ ही यहाँ समाज, देश में दहेज को दानव के समान बताया है वहीं महंगाई की मार, भेदभाव, आर्थिक शोषण, आदि ऐसे मुद्दे है जिसके कारण कवि का मन आहत होकर करूणा से भर उठा है।

वोटां री राजनीति –

वोट प्राप्त करने के लिए राजनेता किस–किस तरह के गलत काम करतें है, और मतदाताओं को प्रलोभन देते है। राजनेता वोट प्राप्त करने के लिए तो घर–घर भटकते नजर आते है, लेकिन फिर वो पांच वर्ष तक दिखाई ही नहीं देते ।

आप लगावै आग, दमकळ ल्यावै दबडकै।
घणो गंभीरो घाग, बोट, बटोरै मोलका ।। 28।।

राजनीत री राग, बारै भीतर दोगली।

भेद खुल्यां जा भाग, मुख मोटो कर मोलका।।

नाचै फिर–फिर नाच, बोट– भिखारी लाडला।
बरस कमावै पांच, दूंद फूलज्या मोलका ।। 48।।

गन्दगी –

स्हैरां बीच सड़ाँध, गाँवां मांही गन्दगी ।
बदबोई रो बांध, मचळै–उळझै, मोलका ।। 92।।

परदुसण रो नांच , नगरा में देख्यो जबर।
झूठ बणी अब सांच, सोक्यू बदळयो, मोलका।। 114।।

आजादी रो अप–रूप –

आभै अड़्या अभाव, भस्या पेट फिर–फिर भरै ।
आजादी रो चाव, माड़ो पड़गो मोलका ।। 24।।

आजादी री पोट, लूटै मिलकै लोगड़ा।
नितकी बाजै सोट, बंटवारै मे मोलका।। 12।।

दहेज दानव –

डाकी बण्यो दहेज, मोसी भोळी चिड़कल्यां।
उजड़ी सुख री सेज, नरक बण्यो घर, मोलका ।। 6।।

दि लमे लाग्या दाग, जात–पांत धन–धरम रा ।
कुण करसी बेदाग, भारत माता मोलका ।। 32।।

सर्वनाश –

प्रदूषण के कारण आज चारों हमें तरफ जो समाज का विकृत रूप दिखाई देता है। उसके लिए हम सभी उतरदायी है।

उजड़्यो जीव–समाज, वन उजड़्या उजड़ी धरा ।
परदूषण री गाज, पड़गी सै पर, मोलका।। 110।।

धनवानां रो जोर, निरधन नै मेटण तुल्यो।
ठसो समाजी जोर, मेट्यां सरसी मोलका।

रंगत और रो कांड, सुपनो रंग्गै आपरो ।
खोदै कूओ खाड, खूद ही पड़सी मोलका।।

मुक्तक काव्य–

मुक्तक काव्य में विभिन्न चौपदियों में कवि का चिंतन और जीवन दर्शन प्रकट हुआ है। उसमें भारतीय संस्कृति, कर्मयोग, जीवन की क्षण भंगुरता अध्यात्म, नैतिकता, कर्मसाधना, त्यागमयी जीवन शैली आदि के बारे में चितंन प्रकट किया गया है। प्रत्येक चौपदी में किसी न किसी विचार को लेकर रचना की गयी है जिसमें कही कर्म की आवश्यकता, कर्म की सहजता, सक्रियता भारतीय जीवन पद्धति का समर्थन, चितंन की प्रौढ़ता आदि को प्रतीकों में माध्यम से बिम्ब व शैली का प्रयोग करते हुये प्रस्तुत किया गया है।

जगत–सार नै समझण ताणी,नेमी धरमी भोत घणां।
वेद–पुराण–लोक नै पढ़–पढ़, मतो विचारयो जणां–जणां।।
भव रो भेद किणी ना पायो, फलायो दूणो उलझाड़।
ज्ग–रस रमो करम–पथ चालो, जीवो जीवण सफल बणाँ।। 21।।

दिवलो बोल्यो जोवणिया सुण,मेरो–सो जीवण व्रत ले ।
जग रा झगड़ा छोड़ बावळा, त्याग तपस्या मे तप ले।।
अन्तर–तम नै बाळ जगत में , जीवण री जोत भर दे।
तेरी जोत जगमगै जग में, यूं तेरो जीवण–फळ ले ।। 48।।

माया रै बल में या काया, कठपुतली ज्यूं चकरी डोर।।
घाणी हाळो बैल फिरै ज्यूं, मिनखो घूमै सुध–बधु खोर।।
ज्यूं ज्यूं उळझै त्यूं त्यूं डूबै , मिनखपणों माया रै ताळ।
सत छिपज्या अर लाभ बादळा उमड़े बोलै माया–मोर ।। 50।।

एक–एक कर सगला प्यारा, जावैगा जड़ तन्नै छोड़ ।
दो दिन रा ए सगला साथी, क्यूं राखै तू इण रो कोड।।
बाजीगर री झोळी में सै, खेल दिखा छिप ज्यावैगा ।
तू मूरख उळझै क्यूं इण में, क्यूं कूकै तू जिवड़ो तोड़।। 58।।

चालै जिण रो भाग चालसी, रुकज्या जिण रो भाग रुकै।
नदी अपणो पंथ बणावै, जोड़ो सिड़ज्या ठोड रुकै।।
चलणो ही जीवण री संज्ञा, रूकणो मरणों एक समान ।
चाल बटाऊ सतरै पथ पै, क्यूं जगती नै देख झकै।। 77।।

जग झूठो या काया जाणी, ग्यानी ध्यानी समझावै।

जीवण–पथ पै भल कामां रा, रूंख उगाता बै जावै।।
जिण री छायां बैठ जाणिया,सुसतावै लेवै या सीख।
पर सेवा अर सुगरथ नर रा, अमर गंध ज्यूं गरणावै ।।104।।

कथा काव्य–

कथा काव्य के अन्तर्गत राजस्थान के प्रसिद्ध प्रेमाख्यान 'मूमल' और ऐतिहासिक कथानको को मानवीय संवेदना और राजस्थान के सांस्कृतिक मानव मूल्यों के रूप में प्रस्तुत किया है।

मूमल एक प्रेम कथात्मक काव्य है जिसमें संयोग व वियोग का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। लौकिक जीवन से जुड़े हुये कथा काव्य मे जीवन की मौलिकताओं व पाम्परिक श्रृंगार के दोनों पक्षों का चित्रण किया गया है। इसमें उन्होंने अपने लोक संस्कृति, लोक इतिहास, लोकरंग का मार्मिक चित्रण किया है।

राजस्थान की भूमि में वीर संस्कृति के त्याग, शौर्य, बलिदान, मातृभूमि की रक्षा के लिए सर्वस्व समर्पण आदि भाव है इसके साथ ही भाव, कल्पना, सरसता, काव्य कौशल शिल्प आदि की विशेषताओं से परिपूर्ण है।

राग रंग रै गढ़ में जलम्यो, धडै बीच या भूखे द्वार।
खारा मीठा जिसा भाग में, लिख्या भोग तू मत मन हार।।
जिंदगानी रो घड़ो झरै सो, बूंद बूंद कर रस बीतै।
तन–तरवर रा पीळा पड़ पड़ पान झड़े ले पक्की धार।। 97।।

राग रूप सुख साज सजा कै, सोचै सुधरयो यो तो लोक।
धरमी, ग्यानी माया हाला, आस करै मिलसी सुरलोक ।।
पण ओचक यो आभो बोल्यों, सूणो सूणो सगळा भाई।
यो सुधरयो ना बो मिल पावै, चाल्यो जा मिनखा बेरोक।। 99।।

इनके काव्य के अन्तर्गत 'शतक साहित्य' में '**मरूधर शतक** और' **म्हारो गाँव शतक** की साहित्य सृजना हुई है जिसमें शिक्षा , साहित्य, कला, विज्ञान भक्ति आदि क्षेत्रों से जुड़कर समाज के सामने एक आदर्श प्रस्तुत करना चाहते है। मरूधरा में धोरों की धरती की महिमा का बखान किया गया है। वहीं '**म्हारो गाँव**' मे आत्मीयता के भाव को जोड़कर उसे राष्ट्रीयता के बीच की कड़ी माना गया वहाँ किस प्रकार जीवन सीधा, सरल व मनुष्य को प्रकृति के साथ जोड़ने वाला हो सकता है।

मात भोम तू नाम–धन तू प्यारो सुख धाम
तू जीवण रो प्राण–धन, अमर बिसाऊ गाम ।। 1।।

तेरै प्राणां सूं जुड़या, मेरे सुख रा साज
मन री सरबस भावना ,अरपू तन्नै आज ।। 7।।

धोरां रो संगीत यो,धणा लुभावै लोग
भरै गुटकळी मोद री, मिलै भाग–संजोग ।।10।।

देव धरा तूं जागती, तूं तीरथ तप–लोक
रस–भावां में तू रमै, देवै मनड़ो धोक ।। 6।।

विविधा के समग्र खंड में डॉ. उदयवीर शर्मा की रचनाशीलता मे जहाँ विविधता के आयाम है वहीं उसे सामाजिक मूल्य, सामाजिक संवेदना को गहराई से जोड़ा गया है। डॉ. उदयवीर शर्मा की कविता में **सह शिक्षा की समानता** वाली ये कविताएं सृजना चेतना से जुड़ी हुई है।

सुण सुण सजता सूर, सत साहित संजीवनी
भाव भरया भरपूर, मरु मायड मदमावती।। 21।।

मीठो मधुर मतीर, मरूधर–मनडो मोवणों।
निपट निरोगो नीर, मिसरी मिलियो मायलों।। 3।।

बलिदानी अर दिढ़व्रती, मरुधर तेरा पूत।
घूंठी में गुण पाइया, लड़ै मौत नै नूंते।। 5।।

भल मरूधर री चांदणी, भल मरूधरी री महक।
वारूं मरुधर वीरता, अर भगती री चहक।। 8।।

(आ) प्रकृति और मानव प्रेम का समन्वय

प्रकृति और मानव का प्रेम प्राचीन काल से ही चला आ रहा है जिसमें प्रकृति उसकी एक माँ की तरह पालन पोषण करते हुये सानिध्य बनायें रखती है। वहीं मनुष्य भी एक पुत्र की भांति इसके वात्सल्य व ममत्व की छाया में उसके निकट रहता है। वह प्रतिपल उदार भाव से उसे कुछ न कुछ देने के लिए तत्पर रहती है, तथा वह प्रेम रस से लबालब होकर प्रेममयी चित्रण उपस्थित करती है। साथ ही इसमें प्रकृति जब कुपित होकर अपना रोद्र रूप धारण करती है तो सम्पूर्ण मानव सृष्टि का विध्वंस भी करती है।

प्रकृति का प्रकोप सूँटो भी है जिसमें कवि ने काव्यात्मक रूप में उसका भी सुन्दर चित्रण किया है।

संस्कृत में इसे प्रकृति से संबोधित किया गया है वही अंग्रेजी में 'नेचर' से इसे सुषोभित किया गया है इससे भौतिक वातावरण व मानव की मानसिकता को व्यक्त किया गया है। साधारण भाषा में कुदरत और स्वभाव भी कहा जाता है कहीं–कहीं इसे बाह्य प्रकृति और अन्तः प्रकृति भी कहा गया है, जिसके अन्तर्गत व्यक्ति के मन के भावों के अनुसार प्रकृति के जीवन में सुख–दुख, हर्ष, शोक, काम क्रोध आते है, और चले जाते है। उसी प्रकार प्रकृति में आँधी, पानी, सर्दी, गर्मी, डॉफी सूटों भी आते है और चले जाते है।

जिस प्रकार मनुष्य कें जीवन और मृत्यु का जीवन चक्र चलता रहता है। यही परिवर्तन है, उसी प्रकार प्रकृति में भी सूटों के माध्यम से परिवर्तन होता है। तभी तो कहा गया है –

'मिनखै रै मन में भी सूटों, क्रोध भाव रो प्रतीक है। बाह्य प्रकृति के कार्य व्यापार के माध्यम से मानव मन की झलक देखने को मिलती है।

मानवीकरण में प्रकृति और ऋतु काव्य का मूलसार दिखाई देता है। यहाँ पर कवि ने सूटों के माध्यम से भौगोलिकता के साथ–साथ साहित्यक मींमासा भी की है। इन्होंने इसका साहित्यक स्वरूप उभार कर इसे बखूबी निभाया है।

पून आपरै धोड़ै चढ़कै, चाल पड़ै जद पूरै बेग।
सूसाटो माचै चौफेरी, झणणावै ज्यूं तीखी तेग।। 4।।

बादल हो सूटे रै बळ में, चाल पड़ै जद आभो चीर।
जाणै सेना जंग जीतबा, हुकम मिल्यो जद होगी बीर।। 14।।

घोर अंधेरो, बिजळी चिमकै, ढोल गुड़ै ज्यूं हो अरड़ाट।
धरती रो कण–कण थर्रावै, सूंसाटो मांचै धर्राट ।। 5।।

प्राकृतिक परिस्थिति और साहित्यिक परिस्थित के अलावा एक क्षेत्र मनोविज्ञान भी है प्रकृति के परिवर्तनों के साथ–साथ मनोविज्ञान का भी अपना महत्त्व है। मन की गहराई में भी मनोविज्ञान काफी सहायक है।

उसी प्रकार सूंटो को क्रोध का प्रतीक माना गया है। उसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है।

कोप सूंटियो एक डोल रा, दोनूं कुबद करै उडधंग।
एक मॉंय सूं दूजो बारै, जण–मन नै करदै बदरंग।। 23।।

कोप घूटे जद अन्तरमन में, डूब उठै हो अन्तर द्वन्द्व।
कुआ फॉंसी करै मिनखड़ा, यू काटै जीवन रो फन्द।। 28।।

जिस प्रकार साहित्य में नौ रसो का समन्वय होता है, वैसे ही प्रकृति में सूटों के आने से वीर, भयानक, वीभत्स, अदभुत, रौद्र रस का आर्विभाव होता है। सूंटो में क्रोध भाव के साथ ही रौद्र रस का आगमन हुआ। इसमें आलम्बन, उद्दीपन संचारी भाव का आगमन हुआ है।

इस साहित्य में प्रकृति के सुन्दर दृश्य जिसमें खेत, खलिहान, बाग, टीबे आदि का सुन्दर वर्णन किया गया है जिसमें सम्पूर्ण प्रकृति को मनुष्य के साथ सांमजस्य करते हुये दिखाया गया है।

दड़ा छंट हो मानो आयो, रौद्र रस सूंटै रै रूप ।
गरजै तरजै बेग दिखावै, मानी भट ज्यूं कोप सरूप।। 132।।

रौद्र रूप तज शान्ति धारले, करुणा री पीले दो घूंट।
निज करणी पर सोक मनाले, मत कर तूं जगती सूं खूंट।। 135।।

रात बिचाळै सूटों आयो, भरयै खेत रो बिगड़यों डोळ।
टापी उड़गी, झूपो खिंडगो, सै बूंटां नै दिया घिथोल।। 28।।

लड़ालूम फळियां रा बूंटां, करसै री पूरी मन साध।
ठोकर मारां ऐस काळ रै, सूटो आकै करदी आध।। 34।।

मन करके तिल बोया खेतां, उग्या भलेरा चारू मेर।
पाक सूल आई घेघरियां, लड़ा लूम हो घेर घुमेर।। 37।।

बाग बगीचां सूंटो आयो, रंग बिरंगा झड़गा फूल।
जाणै छींट बिछी धरती पर, कठै कठै आ पड़गी धूल।। 47।।

दीन–दुःखी भूखा तिसियां रै, अन्तर मन री पीड़ पिछाण।
सरबहार सोसित मिनखां रै, नेड़ै आ तू हियो सिळाण।। 165।।

उण रो दरद करुण रस मानो, छितरायो चारूं कूंटां ।
हाँसी बांट धरा पर आकर, धन तेरो आंणो सूँटो।। 165।।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने राजस्थान के प्रसिद्ध प्रेमाख्यान मूमल और ऐतिहासिक कथानकों को लेकर मानवीय संवेदना व राजस्थान में सांस्कृतिक मान मूल्यों के रूप में प्रकट किया है। इन्होंने इसका आधार लोक जीवन से जुड़े हुये तथ्यों को लेकर वियोग श्रृंगार का प्रयोग करते हुये काव्य में रोचकता व नवीनता के भाव को प्रकट किया है।

इन्होंने राजस्थान की धरती की वीरता, शौर्यता, सांस्कृतिक त्याग, देश प्रेम, धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राणों को भी न्यौछावर कर देने वाले भावों को प्रकट किया है। इन गुणों के कारण ही राजस्थान की वीर भूमि का अपना अलग ही महत्त्व है।

मूमल काव्य में मूमल और राजकुमार महेन्द्र के प्रेम का वर्णन निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत किया गया है – प्रेम परीक्षा, अड़चन, महेन्दरो, सिकार आदि बिन्दुओं के अन्तर्गत किया है।

प्रेम परीक्षा –

सुपनो आयो मूमल जागी, बोलै महेन्दर बेगो आव।
आयो, रूस्यो पाछो फिरगो, यो के सुपनो, यो के भाव ।। 1।।

पीव–पीव कर थकी चातकी, पण बादल आयो कोनीं ।
मूमल भी यूं पड़ी ढेर–सी, तन रै सागै मान कोनीं ।। 6।।

विरहण रा सै हार टूटगा, रजनी–सोकण लिया उठाय ।
ल्या चमकाय अपणै तन पै, चन्दो–साजन लियो छिपाय।। 15।।

राग–रागनी खारी लागै, मन हरखै ना बजा सितार ।
तारां री झिणकारी रोवै, नैणज बरसै पावस–धार ।। 17।।

अड़चन –

महेन्दर री पण आठ राणियां, एक दिवस सै भेळी होय ।
बात प्रगट कर दीनी सारी, इब तांणी राखी मन गोय ।। 1।।

माणकदे रै चिन्ता उपजी, बीसळदे सूं बोली जाय।
थारो बेटो म्हेन्दर बिगड़यो, सारी दीनी खोल सुणाय ।। 18।।

मूमल री मेड़ी रो दीवो, देख्यो म्हेन्दर करी पिछाण ।
इब मैं पूगूं दोय पलक में, चाल टोरड़ा बगतो ढाण ।। 22।।

मूमल मेड़ी म्हेन्दर पूंच्यो, तारां छाई ढळती रात।
देख ढोलियो पीळो पड़गो, चन्दै रो मुख ज्यूं प्रभात ।।25।।

महेन्दरों –

चहल–पहल सूं नाचै धरती, अमरकोट में मोद घणो
फूलां री सोरम गरणावै, सुख सूं नाचै जणो–जणो ।। 1।।

बीसलदे री बाई सोढ़ी, परणी जीं री दूजी रात।

साजन संग करी रंगरेळी, प्रेम लोक री न्यारी बात।। 3।।

घणों हेत दोन्यां में बधगो, तन दो नाकै मन पण एक।
राणो यूं हिवडै सूं कहरयो, लाखां में है सोढो एक ।। 33।।

सिकार –

धर कूचां धर मजलां चाल्या, डेरा देता जगां–जगां।
हरियाली रोही जद आई, डेरा दिन्यां देख जगां ।। 5।।

किस्तूरी केसर री लपटां, मूमल रै लारै भाजै ।
आभै री बिजळी ज्यूं चिमकै, होली री झळ–सी साजै ।। 31।।

किसै, वंश रा सूर चाँद थे, किण नगरी नै करी उदास ।
किसी खान रा थे दो हीरा,किण रै थे मनड़ै री आस ।। 21।।

पद्मावती रानी की ऐतिहासिकता व वीरता के भावों को पद्मा नामक काव्य में प्रकट किया है। इस काव्य में सत्य से जुड़ी राजस्थानी कथाओं का राजस्थानी संस्कृति में प्रेरणा देने और सभी जन समूह के मन में सत्य को सराबोर करने और राजस्थान के इतिहास को सत्य से सिंचने की परम्परा का निर्वहन किया गया है। राणी पद्मावती ने अपनी व चित्तौड़ की मान मर्यादा के लिए जौहर करके वीर क्षत्राणी होने का धर्म निभाया साथ ही सभी के लिए प्रेरणास्पद बनी।

सत री अगनी ही तन मांही, धरती री अगनी साख भरै।
हर–हर करती पदमा कूदी, सतियां कुदी इब कूण गिणै।।

जय–जय सतियां री जय हो, पदमा री जय–जय गूंज उठी।
खिलजी रो नाम सदा नीचो, आ बात सुरग लग गूंज उठी ।।

हाडी रानी ने भी अपने क्षत्राणी होने का वीरता के साथ परिचय दिया है। जब राव चूड़ा का विवाह होने के उपरांत युद्ध मे जानें की बात आई तो वह हाडी रानी के प्रेम वशीभूत होकर कर्तव्य से विमुख होने लगा तो क्षत्राणी ने प्रेम की निसाणी के रूप मे अपने सिर को का तलवार से काटकर राणा को भेंट कर दिया। राणा चूड़ा इससे प्रेरित होकर युद्ध भूमि में पूर्ण शोर्य के साथ लड़ कर अपने क्षत्रिय धर्म का पालन किया। हाडी राणी का यह त्याग उन्हें अमर बना कर सभी के लिए प्रेरणा देता रहा है। राजस्थान में ऐसी वीर क्षत्राणियों की गाथाएं घर–घर मे गायी जाती है।

रंग म्हैल रै धवल आंगणै, बाये कर में सा'म्यां सीस।
राणी रो धड़ ऊभ्यो देख्यो, धन सेवक तू बिसवाबीस ।।

धरती र कण–कण में गूंजे, जय–जय सत री वाणी।
धन्य–धन्य भारत री सतियां, रंग तन्नै हाडी राणी ।।

इसी प्रकार विद्‌युलत्ता, कानसिंह आदि का भी जीवन हम सभी के लिए प्रेरणा दायी रहा है। जिन्होनें अपने प्रण की रक्षा अपने प्राण देकर भी की है। ये सभी एतिहासिक पात्र अपने कर्त्तव्य से विमुख होती आज की युवा पीढ़ी के लिए प्रेरणा देने का कार्य कर रहें है।

(इ) सांस्कृतिक दृष्टिकोण –

डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने काव्य में सांस्कृतिक दृष्टिकोण को बखूबी उभारा है इसमें अन्तर्गत कर्मशीलता, सार्थक जीवन की गुणवता, जनकल्याण की भावना, नीति, उपदेश, आदि सहज भावों की आनन्दमय अनुभूति इनके काव्य में सार्थक प्रतीकों के माध्यम से मिलती है। लेखक ने जीव–माया, सुख–दुख, जीवन दर्शन की झलक, माया जाल का क्रम आदि विभिन्न विषयों को अपने काव्य में पिरोया। इसके साथ ही सासांरिकता की महक, मोज मस्ती री महक, जीवन विधना का लेख आदि विषयों पर अपनी संस्कृति व परम्परा को जोड़ा।

इसमें जीवन को सार्थक बनाने के लिये कहा गया है। वेदों, शास्त्रों को पढ़ने मात्र से कुछ नहीं होगा। बल्कि व्यक्ति इनकें वाद–विवादों में घिर कर ही रह जायेगा इससे अच्छा है कि आप अपने कर्म पथ पर आगे बढ़कर अपने जन्म और जीवन को सफल बनाये।

जगत सारन समझणताणी, नेमी–धरमी भोत घणा ।
वेद पुराण लौकन पढ–पढ़ मतो विचारयो जणां–जणा।।

(क) इतिहास –

इतिहास हमारे देश व समाज का दर्पण होता है, जिसमे हमारी छवि स्पष्ट दिखाई देती है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने साहित्येतिहास के साथ–साथ शेखावाटी के इतिहास पर भी अपनी कलम चलाई है। जिससे ऐतिहासिक वस्तुस्थिति स्पष्ट हो सके तथा राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक मुद्दों के यथार्थ की जानकारी भी हो सके। राजनैतिक इतिहास के साथ–साथ आपने शेखावतों के इतिहास की सम्पूर्ण श्रंखला को जोड़ने वाली कड़ी के रूप में प्रस्तुत किया है।

(1) बिसाऊ का संक्षिप्त इतिहास : (1964)

डॉ. उदयवीर शर्मा ने 1 जुलाई, 1964 को 'बिसाऊ का संक्षिप्त इतिहास' नामक पुस्तक में बिसाऊ का इतिहास, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, कलात्मक, व्यापारिक, व्यावसायिक, भौगोलिक आदि का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया है। यह पुस्तक एक प्रकार से बिसाऊ दिग्दर्शन ग्रन्थ से ही सम्बन्धित है लेकिन इसमें बिसाऊ ठिकाने का अधिक विस्तार से वर्णन है। 'समाज हितैषी कार्यालय' बिसाऊ (राजस्थान) द्वारा इसका प्रकाशन किया गया है। आलोच्य कृति में शेखावत वंश परम्परा पर प्रकाश डाला है। तत्पश्चात् शार्दूलसिंह जी के सबसे छोटे पुत्र श्री केशरीसिंह (सं. 1809 में बिसाऊ किले की नींव डाली एवं नगर बसाया) के बाद भी बिसाऊ शासन प्रणाली पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। मुगल बादशाह जहाँगीर के दरबारी सरदारों में दूसरा स्थान रायसल जी शेखावत का था। खंडेला, पंचपान, सिंघाना, उदयपुर और सीकर (जिसे आजकल शेखावाटी कहते हैं) आदि स्थान इन्हीं के थे, वे पूर्ण पुरुष थे। इन्हीं रायसल जी के पश्चात् उनकी मुख्य तीन शाखाओं में दूसरी शाखा में शार्दूल सिंह जी हुए। ये रायसिंह जी से पाँचवीं पीढ़ी में थे और जयपुर के 12वें महाराजा उदयकरन जी के पौत्र शेखाजी के वंशज थे।[1] शार्दूलसिंह का जन्म सं. 1748 में उदयपुर शेखावाटी में हुआ। इसके पिता श्री जगराम जी एवं पितामह श्री जुझार सिंह जी थे। "18 वर्ष की अवस्था में ये झुंझुनूं आ गए जहाँ का नबाव रूहेला खाँ कायमखानी इनका सम्बन्धी था। नवाब की पत्नी इनकी भूवा सास लगती थी रूहे लाखाँ कायमखानी चौहान राजपूत था।"[2]

सं. 1778 में शार्दूलसिंह ने रघुनाथ सिंह भोजराज के वंशज से परसरामपुरा अपने अधिकार में कर लिया और सपरिवार वहीं रहने लगे। सं. 1782 में फतेहपुर के कायमखानी नवाब सरदार खाँ ने बारवा के केशरीसिंह जी भोजराजी को मरवा डाला। इसका प्रतिशोध लेने के लिए शार्दूलसिंह जी ने सीकर के राव शिवसिंह जी की सहायता लेकर कायमखानी सत्ता को सं. 1787 में उखाड़ फेंका तथा शार्दूलसिंह जी का झुंझुनूं पर वि.सं. 1787 में पूर्ण अधिकार हो गया जिसके अनेक प्रमाण हैं।[3] इस सम्बन्ध में एक दोहा प्रसिद्ध है –

"सतराह सौ सत्तासिया, अगहन मास उदार।
सादै लीनी झुंझुनूं, सुदी अठे शनिवार।।[4]

———————

1. वरदा पत्रिका (गाँगियासर) प्रथमांक – श्री निरंजन जोशी का लेख, पृ. 3
2. वरदा पत्रिका (गाँगियासर) प्रथमांक – श्री निरंजन जोशी का लेख, पृ. 3
3. कर्नल लोकेट के जनरल, पृ. 90, और विल्स रिपोर्ट, पृ. 82
4. खेतड़ी का इतिहास – पं. झाबरमलजी शर्मा, पृ. 35

50 वर्ष की अवस्था तक निरंतर युद्धरत रहते हुए एवं शासन भार को खींचते हुए उनका शरीर रुग्ण रहने लगा। आप अपना अन्तिम समय परसरामपुर में व्यतीत करते हुए श्रावण कृष्णा 10 सं. 1799 को स्वर्गवासी हो गये। आपकी वीरता एवं साहस के गुणगान आज भी गाए जा रहे हैं जिनके कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं। –

"शार्दूलो जगराम रो, सिंहल बुरी बलाय।
राम दुहाई फिर गई, लहुकती फिरै खुदाय।।"

"इन राजा सादूल, पकड़ बू दी बिचलाई।
इन राजा सार्दूल, लंक जिमि रिणि लुटाई।।"

इन राजा सादूल, लिया बैराठ सिंघाणा।
इन राजा सादूल, दिया नरहड़ सिंघाणा।।"

शार्दूलसिंह जी ने अपनी मृत्यु के पूर्व ही अपनी विजिता भूमि को अपने पाँचों पुत्रों में बाँट दी। इनके सबसे छोटे पुत्र के हिस्से में बिसाऊ ठिकाना आया। केशरीसिंह का जन्म सं. 1779 में हुआ। इनका विवाह साहिब सिंह जी की लड़की चँपावातीजी से हुआ। आपने एक विशाल किले का निर्माण कराकर 'विशाल की खणी' को बिसाऊ नाम से आबाद किया। आपके दो पुत्र एवं एक पुत्री (उम्मेदकंवर) हुई जिसका विवाह इन्द्रगढ़ के माधोसिंह जी हाड़ा से हुआ। आपके शव के साथ सं. 1825 में ठकुराणी चँपावती जी झुंझुनूं में सती हुई।

सूरजमल जी सं.1823 में राजकुमार तथा सं. 1825 में राज सिंह सिंहासनारूढ़ हुए। सूरजमल जी ने सं. 1834 में अड़ीचे में किला बनवाकर इसका नाम सूरजगढ़ रखा। आपने जयपुर के महाराजा की ओर से प्रतिद्वन्द्वी महाराजी सिंधिया से युद्ध करते हुए तूंगा स्थान पर 1844 में वीर गति प्राप्त की। इस युद्ध का वर्णन 'वंश भास्कर' में भी मिलता है।

महाराजा श्री श्याम सिंह स्वतन्त्र विचारों के वीर थे। आपको पराधीनता स्वीकार नहीं थी। आपके बाद हम्मीर सिंह जी ने राजगद्दी सं. 1890 में सम्भाली जिनका जन्म 1863 में हुआ। हम्मीर सिंह जी ने दानी एवं वीर होने के साथ बिसाऊ का चतुर्मुखी विकास किया। जवाहर सिंह जी आपके इकलौते पुत्र थे, जिनका जन्म 1885 में हुआ था। जिसका सं. 1919 में असामयिक स्वर्गवास हो गया। आपने सूरजगढ़ से श्री चन्द्रसिंह जी को गोद लिया। वे पुत्र वियोग सहन नहीं कर सके जिससे 3 वर्ष (आश्विन शुक्ला 15 सं. 1992) के बाद आप पुत्र से जा मिले।

श्री चन्द्रसिंह जी का जन्म सं. 1904 में हुआ एवं 1922 में बिसाऊ ठिकाने की गद्दी पर विराजमान हुए तथा सं. 1935 में स्वर्गवास हो गया। आपको भवन निर्माण कला से बड़ा

प्रेम था, जिसका ज्वलन्त उदाहरण 'श्रीचन्द्रमहल' आज भी तथ्यों को पुष्ट करता है। आपके इकलौते पुत्र श्री जगतसिंह का जन्म सं. 1932 में हुआ। अति अल्प आयु सं. 1935 में बिसाऊ ठिकाने की बागडोर अपने हाथ में ली तथा सं. 1950 में कुकर्मी मुसाहिब ने प्रजा के पूज्य पिता श्री जगतसिंह जी को शराब में विष देकर प्रजा के सुख के दिवस दुख में परिवर्तित कर दिए।

"श्री जगतसिंह जी के पश्चात् उनके इकलौते पुत्र श्री विष्णुसिंह जी जिनका जन्म सं. 1948 में हुआ। अपनी दो वर्ष की अल्पायु में अर्थात् सं. 1950 वि. में गद्दी पर विराजमान हुए। उनकी पूज्य माता जी श्री स्वर्गीया माजी चँपावतजी साहिबा ने कठोर हृदय करके उनका पालन–पोषण किया तथा अच्छी शिक्षाएँ दीं।"[5]

श्री विष्णु सिंह जी एक न्यायी एवं दूरदर्शी शासक थे। उन्होंने अपने इकलौते पुत्र श्री रघुवीर सिंह जी को सूरजगढ़ गोद देकर जेठ सुदी 15 सं. 1996 को सूरजगढ़ बिसाऊ को एक कर दिया। आपने यह नियम बनाया कि बड़े पुत्र को ही शासन मिलेगा बाकी पुत्रों को उनकी इच्छानुसार गाँव दे दिये जायेंगे। आपका 52 वर्ष की अवस्था मे राज करते हुए सं. 2002 में स्वर्गवास हो गया।

श्री रघुवीर सिंह जी का जन्म सं. 1970 में हुआ तथा सं. 1996 में राजगद्दी मिली। रघुवीर सिंह जी को जयपुर राज्य की ओर से 'मेजर' की उपाधि प्राप्त हुई। इन्होंने 1 जुलाई, 1954 को अपना राज्य राजस्थान सरकार को सहर्ष सौंप दिया और जन सेवा करते रहे।

इस आलोच्य कृति में बिसाऊ के ऐतिहासिक गौरव का वर्णन है। बिसाऊ के क्रम बद्ध इतिहास के साथ–साथ ही इसमें इस क्षेत्र के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, कलात्मक, धार्मिक आदि विशेषताओं के उत्थान का वर्णन भी किया गया है। यहाँ के शासकों ने बिसाऊ के सर्वांगिण विकास करने में पूर्ण योगदान दिया, जिसके फलस्वरूप स्थान–स्थान पर कुएँ, धर्मशालाएँ, गौशाला, स्कूल, औषधालय, हॉस्पीटल, पाठशालाएँ, संस्कृत विद्यालय, कन्या पाठशाला, पुस्तकालय एवं सदावर्त कायम है। इनके इतिहास में शेखावाटी का लोकरंग, सांस्कृतिक वैभव व इतिहास की शौर्य पूर्ण झलक भी दिखाई देती है।

---

5. श्री विष्णु सिंह जी का भाषण, दिनांक 2 जून, 1936 इ

शार्दूलसिंह जी के वंशज (बिसाऊ के शासक)

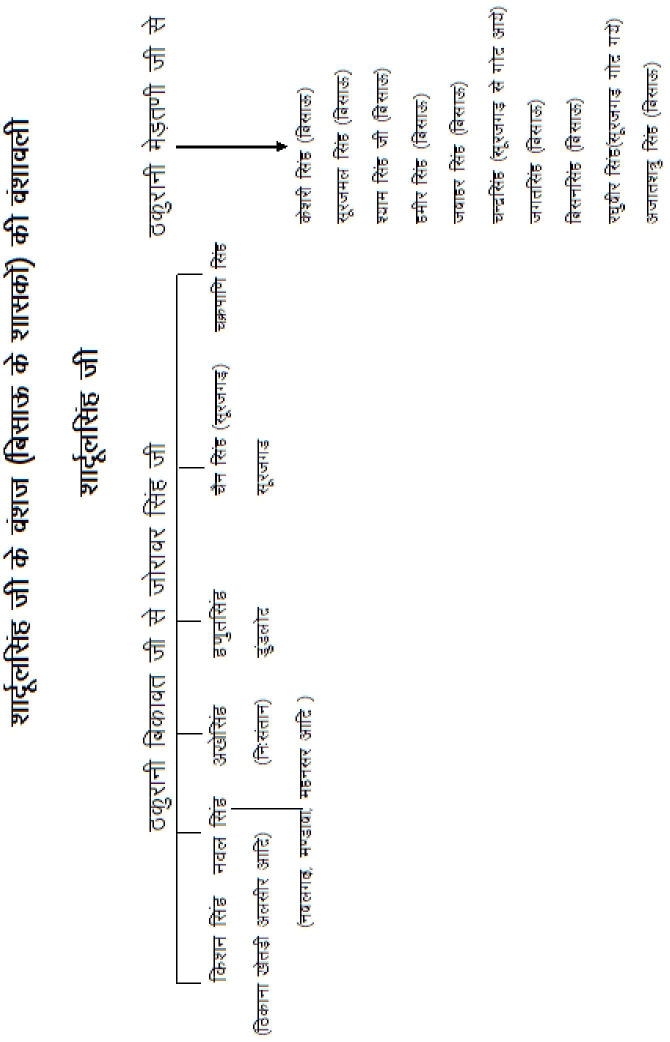

बिसाऊ कि भौगोलिकता के साथ–साथ ही डॉ. उदयवीर शर्मा ने बिसाऊ की तत्कालीन मुख्य–मुख्य संस्थाएँ एवं आधुनिक सुविधाओं का भी वर्णन बड़ी रोचकता से किया है। यह पुस्तक लघु स्वरूप में है फिर भी तत्कालीन प्रकाशन परिस्थितियों में इसका विशेष महत्त्व स्वीकार किया गया। यह 'बिसाऊ दिग्दर्शन' इनकी आधारभूत कृति मानी जा सकती है। इसके बाद ही धीरे–धीरे बिसाऊ का परिचय प्रस्तुत करने वाले बड़े ग्रन्थ तैयार हुए इस दृष्टि से इसका विशेष महत्त्व है।

डॉ. शर्मा के लिखे हुए इतिहास ग्रन्थों में बिसाऊ का संक्षिप्त इतिहास, बिसाऊ दर्शन, शेखावाटी का संक्षिप्त इतिहास, बिसाऊ दिग्दर्शन और वीरवर सलहदी सिंह शेखावत प्रमुख है। इन इतिहास ग्रथों के अतिरिक्त आपने कई इतिहास ग्रन्थों की भूमिका भी लिखि है, जो आपके इतिहासकार की बात को सिद्ध करती है। आपकी अपनी ऐतिहासिक दृष्टि है, इसलिए आपने अपनी पेनी नजर से इतिहास से संबधित अनेक घटनाओं की छान–बीन करके अनेक शोध पत्रों (पत्रिकाओं) की रचना भी की है। ऐतिहासिक घटना को कालक्रम के साथ प्रस्तुत करते हुए नयी पीढ़ी के लिए प्रेरणा प्रदान करना आपकी विशेषदेन है।

(2) शेखावाटी का इतिहास : (1980)

'शेखावाटीका इतिहास' **डॉ. उदयवीर शर्मा** एवं **आचार्य नन्द कुमार शास्त्री** के संयुक्त प्रयास से लिखित, यह एक ऐतिहासिक पुस्तक है। "वीर भूमि शेखावाटी के नामकरण, भौगोलिक स्थिति, राजवंशों का क्रमिक विकास, सामाजिक परम्पराओं तथा सांस्कृतिक मूल्यों पर पर्याप्त शोधात्मक सामग्री इसमें प्रस्तुत की गई है। यह कृति केवल जातियों अथवा शासकों का इतिहास मात्र ही नहीं है अपितु मरुभूमि की स्थिति, सीमाएँ, धरातल, पर्वत, मैदान, नदी, वनस्पति, खनिज आदि का पर्याप्त परिचय प्रस्तुत करने में समर्थ है। सांस्कृतिक अध्ययन के साथ–साथ शेखावाटी बोली का इतिहास भी प्रस्तुत किया गया है, जो ऐतिहासिक एवं भाषिक अध्ययन के लिए महत्त्वपूर्ण है।[6] इस विवेचन सामग्री को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है जो इस प्रकार है–

(1) सामान्य परिचय (शेखावाटी का नामकरण)

इस अध्याय में सामान्य जानकारी के रूप में लेखक ने शेखावाटी अंचल का नामकरण, शेखाजी एवं उनके वंश जो शासन, शेखावत वंश की उत्पत्ति, शेखावाटी का पूर्वनाम, मौर्य वंश विस्तार, चौहानों का आगमन, चौहान वंश से कायमखानी बनना, कायमखानी शासन आदि बातों का उल्लेख है।

---

6. शेखावाटी का इतिहास, संदर्भीय से उद्धृत – आचार्य उमेश शास्त्री

(2) प्राचीनकाल

इसमें प्राचीनकाल का इतिहास वीरता, वैभव, पाश्चात्य आक्रमण आदि का विवरण है। इस काव्य मे शेखावाटी की स्थिति को वैदिक काल सें जोड़कर बताया गया है। वैदिक काल में विस्तार, मरूप्रदेश से पहले समुद्रवत जल का विवरण, मरूस्थल बनने के कारण, आर्य वंश की चर्चा, ह्वेसाँग की यात्रा का भी विवरण प्रस्तुत किया गया है।

(3) पूर्व मध्यकाल (कायमखानी शासन)

इसमें पूर्व मध्यकालीन शासकों का वर्णन किया गया है। कायमखानी शासकों का झुंझुनूं एवं फतेहपुर पर शासन, इन शासकों की वंश परम्परा, कायमखानी पूर्वजों का विवरण, फतेहपुर की स्थापना, अकबर का कदन खॉ की पुत्री से विवाह, नरहड़ मुगलों के अधीन शार्दूल सिंह का नाहड़ का शासक बनना आदि घटनाओं का विस्तृत विवरण मिलता है।

(4) उत्तर मध्यकाल (शेखावत शासन)

"शेखावत शासन" नामक इस अध्याय में उत्तर मध्यकाल के कछवाह वंश परम्परा के शेखावत शाखा की वंशावली का वर्णन है। शेखाजी के पूर्वजों का विवरण, शेखाजी का शासनकाल, शेखावत या शेखावाटी शब्द का उच्चारण, शेखाजी के वंशों का शासनकाल, शेखावतों का विकेन्द्रीकरण, ठिकाना शब्द की उत्पत्ति आदि को इस अध्याय में प्रस्तुत किया है।

(5) आधुनिक काल (अंग्रेजी शासन, गणतन्त्र शासन)

इसमें अंग्रेजी शासनकाल, अंग्रेजी शासन का प्रभाव, शेखावाटी पर जयपुर शासक का आधिपत्य, शेखावाटी ब्रिगेड का प्रभाव, तांत्या टोपे का आगमन, शेखावाटी के स्वतन्त्रता सेनानी (रामनारायण चौधरी एवं सेठ रायबहादुर, जमनालाल बजाज), गणतन्त्र शासन, शेखावाटी बोली की विशेषता, सीमाएँ, पर्वत, जल स्त्रोत, वनस्पति, खनिज, जलवायु, तापमान, वर्षा सिंचाई के साधन, व्यवसाय, रहन–सहन, भौगोलिक परिचय आदि को इस आलोच्य कृति में विस्तृत विवरण के साथ प्रस्तुत किया गया है।

शेखावाटी बोली की कुछ विशेषताएं –

1. खड़ी बोली हिन्दी की आकारान्तता की तुलना में औकारांत भाषा है। यथा –कुत्तो, घोड़ो, मेरो, मीठो, किसो, खाणो पीणो आदि।

2. खड़ी बोली हिन्दी के संयुक्त स्वर 'ए', 'ओ' शेखावाटी में 'इ', 'ई', 'ओ', हो जाते हैं। यथा– ऐसा का इसो, पैसा–पीसो, कैसा–कैसो, दौड़–दोड़, फौरन–फोरन आदि।

3. खड़ी बोली हिन्दी की तुलना में शेखावाटी की अपनी कुछ विशेष ध्वनियाँ हैं, जो ध्वनि ग्राम रूप में प्रतिष्ठित है। यथा–म्ह, न्ह, ल्ह, ल आदि।

4. कुछ शब्द शेखावाटी के अपने हैं। यथा–गंडक, सारू, भोमर, भभूलियो, चूसो, कनखो, हुचको, बीड़, ढुकाव, लरडी, खाजरू, उरणियो, गूण चूँथी, डॉफी आदि।

5. शब्द युग्म के प्रयोग कई प्रकार से होते हैं। यथा–पीर–सासरो, शेलो–स्याणो, माला–मणियो, रोटी–टुकड़ो, नदी–नालो, साठ–गाँठ, काली–पीली, धोली–धरप, कालो–स्याह, मोल–तोल, गावा–लता आदि।

6. मधुरता के लिए कई शब्दों के साथ डी, ली, ण का प्रयोग होता है। यथा–चिड़कली, धीवड़ली, रातड़ली, प्रीतड़ली, बायली, सहेलड़ी, मावड़ी, रुक्मण, समधन आदि।

7. सम्मान सूचक 'जी' शब्द के विपरीत भाव देने वाला शब्द 'ती' का प्रयोग–खातवाती, मालणती, जातवती, धोषणती, कुंजड़ती बामणती आदि।

8. पुरुष वाचक में सम्मानसूचक शब्द के विपरीत भाव देने वाले शब्द हैं। इयो, लो, डो। यथा–रामियो, दामलो, रामूडो, खातीड़ो आदि।

9. 'डो' का प्रयोग कहीं–कहीं स्नेह दया या निकटता सूचक होता है। यथा–भाइडो, बापड़ो साथिड़ो आदि।

10. शेखावाटी में उच्चारण सम्बन्धी विशेषता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। शब्द की उदात्त और अनुदात्त ध्वनियों मे अन्तर करते ही अर्थ भेद हो जाता है। यथा–

उदात्त	अनुदात
कान (कर्ण)	का'न (कृष्ण)
नार (स्त्री)	ना'र (सिंह)
बोलो (बधिर)	बो'लो (बहुत)

11. 'ल' और 'ळ' का उच्चारण भेद भी महत्त्वपूर्ण है–

सूल (आसानी से)	सूळ (काँटा)
कालो (कपटी)	काळो (काला)
गाल (कपोल)	गाळ (गाली, दुर्वचन)

12. मध्यम पुरुष तथा उत्तम पुरुष बहुवचनीय सर्वनाम शब्द हिन्दी की तुलना में नितांत भिन्न है। यथा–

आप, तुम लोग	थे
हम	म्हे
हम–तुम	आपाँ

उपर्युक्त विशेषताओं से स्पष्ट होता है, कि शेखावाटी बोली अन्य निकटवर्ती बोलियों में अपनी अलग विशेषता रखती है। अतः शेखावाटी बोली का अपना एक प्रांत है। वह शेखावाटी अंचल है।

आचार्य उमेश शास्त्री ने कहा है कि इस ग्रन्थ में वीर भूमि शेखावाटी के नामकरण, भौगोलिक स्थिति, राजवंशों का क्रमिक विकास, सामाजिक परम्पराओं तथा सांस्कृतिक मूल्यों पर पर्याप्त शोधात्मक सामग्री प्रस्तुत की गई है। यह कृति केवल जातियों अथवा शासकों का इतिहास मात्र ही नहीं है अपितु मरुभूमि की स्थिति, सीमाएँ, धरातल, पर्वत, मैदान, नदी, वनस्पति, खनिज आदि का पर्याप्त परिचय प्रस्तुत करने में समर्थ है। सांस्कृतिक अध्ययन के साथ शेखावाटी बोली का इतिहास भी प्रस्तुत किया गया है।

(3) बिसाऊ दर्शन (1980)

बिसाऊ दर्शन पुस्तक सन् 1980 में प्रकाशित हुई। यह डॉ. शर्मा जी की इतिहास विषयक कृति है। इसमें भी बिसाऊ का ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि अनेक आयामों में संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत हुआ है। इसे 'बिसाऊ दिग्दर्शन' प्रारम्भिक स्वरूप कहा जा सकता है। इसको श्री जैन पुस्तकालय, बिसाऊ ने प्रकाशित करवाया था। तत्कालीन प्रकाशन परिस्थितियों में इसका प्रकाशित होना एक महत्त्व की बात थी।

(4) बिसाऊ दिग्दर्शन (1988)

शेखावाटी के नगरों एवं कस्बों में से सर्वप्रथम फतेहपुर का इतिहास श्री **गोपालदीन मणि** ने प्रस्तुत किया। इसके बाद तो 'सीकर का इतिहास' नवलगढ़ का इतिहास, शिमला

का इतिहास, चिड़ावा का इतिहास, मण्डावा का इतिहास, लक्ष्मणगढ़ का इतिहास, झुंझुनूं का इतिहास, खेतड़ी का इतिहास आदि कस्बों पर इतिहासकारों ने अपनी लेखनी चलाई। इसी क्रम में डॉ. उदयवीर शर्मा एवं श्री अमोलकचन्द जाँगिड़ ने बिसाऊ दिग्दर्शन की रचना करके यहाँ की साहित्यिक गतिविधियाँ, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, भौगोलिक गतिविधियाँ आदि पर प्रकाश डाला है। इसका प्रकाशन "तरुन साहित्य परिषद्, बिसाऊ (झुंझुनूं) द्वारा किया गया है।

श्री रावत सारस्वत ने लिखा है कि, "बिसाऊ के डॉ. उदयवीर शर्मा तथा श्री अमोलकचन्द जाँगिड़ जो स्वयं साहित्यकार विद्वान तथा शिक्षाविद् हैं, ने अपनी निष्ठा और लगन से बिसाऊ का सर्वांगिण इतिहास प्रस्तुत किया है। इस काव्य से आपके साहित्यकार के साथ इतिहासकार होन का भी पता चलता है।

इस पुस्तक में ऐतिहासिक एवं भौगोलिक परिचय के अतिरिक्त शिक्षा, साहित्य, कला में संस्कृति, व्यापार–व्यवसाय आदि विषयों की विस्तृत जानकारी प्रामाणिक रूप में दी गई है।[7] ऐतिहासिक घटना प्रसंगो को कालक्रम के साथ प्रस्तुत करते हुए मनुष्य को समझाना और रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाना, यह डॉ. शर्मा की विशेष देन कही जायेगी। 'बिसाऊ दिग्दर्शन' कर विषय सामग्री को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है। –

(1) ऐतिहासिक झलक

डॉ. उदयवीर शर्मा की अपनी इतिहास दृष्टि है। वे इतिहासकार और साहित्यकार, दोनो ही रूप में अपनी पहचान रखतें है। आपने प्रेरक व उज्ज्वल इतिहास सें प्रेरणा लेकर वर्तमान नव निर्माण के सृष्टा की दृष्टि प्रदान की है। इतिहास हमें नई दिशा प्रदान करता है। इतिहास हमें अच्छाईयों कों अपनानें व बुराईयों कों त्यागने की प्रेरणा देता है। इसलिए कवि आज भी अपने क्षेत्र से जुड़े हुए रहकर यहाँ के समग्र इतिहास लेखन कें लिए आज भी कृत संकल्पित नजर आतें है। इस अध्याय में इतिहास प्रसिद्ध बिसाऊ नगर के शासकों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है साथ ही शेखावाटी के प्रवर्तक राव शेखाजी से मेजर ठा. रघुवीर सिंह तक की इसमें चर्चा की गई है। श्री शेखाजी, श्रीरायमल, अमरसर, श्री सूजाजी, द्वितीय श्री रायमल, श्री भोजराज, श्री टोडरमल, श्री जूझार सिंह, श्री जगराम सिंह, श्री शार्दूलसिंह आदि ने क्रमबद्ध शेखावाटी अंचल पर आधिपत्य जमाए रखा।

इसके बाद श्री शार्दूलसिंह जी के पाँचवें पुत्र ठा. केशरी सिंह जी बिसाऊ नगर के शासक बने।

---

7. बिसाऊ दिग्दर्शन भूमिका के – लेखक रावत सारस्वत, पृ. 1

बिसाऊ के शासकों का क्रमशः विवेचन इस प्रकार है–

1.	ठा. केशरी सिंह जी	(वि.सं. 1799 से 1825 तक)
2.	ठा. सूरजमल सिंह जी	(वि.सं. 1825 से 1844 तक)
3.	ठा. श्याम सिंह जी	(वि.सं. 1844 से 1890 तक)
4.	ठा. हम्मीर सिंह जी	(वि.सं. 1890 से 1922 तक)
5.	ठा. चन्द्र सिंह जी	(वि.सं. 1922 से 1935 तक)
6.	ठा. जगत सिंह जी	(वि.सं. 1935 से 1950 तक)
7.	ठा. बिशन सिंह जी	(वि.सं. 1950 से 2002 तक)
8.	ठा. रघुवीर सिंह जी	(वि.सं. 1996 से 2011 तक)

(2) भौगोलिक परिचय

इसमें बिसाऊ क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों से अवगत कराया गया है। लेखक ने बिसाऊ क्षेत्र के धरातल, जलवायु, मौसम, उपज, वनस्पति, उद्योग–धन्धे, रहन–सहन, खान–पान, वेश–भूषा, **जनसंख्या**, मुख्य बाजार, प्रमुख मार्गों, भाषा, प्राचीनतम स्थान, उपनगरीय बस्तियाँ आदि को अपनी लेखनी द्वारा उजागर किया है।

बिसाऊ नगर झुंझुनूं जिले के उत्तर–पश्चिम में चूरू जिले के दक्षिण पूर्व में तथा सीकर जिले की उत्तर–दिशा में स्थित है अर्थात् 37.9 डिग्री उत्तरी अक्षांश एवं 75.5 डिग्री पूर्व देशांतर पर स्थित है। इसके पूर्व में बीहड़ (सघन वन) है तथा इसका धरातल रेतीला है। वर्षा की कमी के कारण यहाँ मुख्यतः खरीफ की फसल ही होती है तथा यहाँ का मुख्य व्यवसाय खेती एवं पशुपालन है।

(3) शिक्षा और साहित्य

इस अध्याय में बिसाऊ नगर के वर्णन को आगे बढ़ाते हुए 'शिक्षा एवं सांस्कृतिक' विषयों का परिचय प्रस्तुत किया गया है। जिसमें यहाँ की सामाजिक एवं साहित्यिक चेतना के अंकन से पता चलता है। इस नगर में शिक्षा अपने उच्च स्तर पर नजर आती है। अपनी शैक्षणिक गतिविधियों कें कारण ही इस नगर ने शिक्षा क्षेत्र में अपना विशिष्ट योगदान दिया है। शिक्षा एवं साहित्यिक गतिविधियाँ अपनी चरम सीमा को छूती हुई नजर आ रही है। इसमें राजकीय शैक्षणिक विद्यालयों की संख्या दस है तो गैर–राजकीय शैक्षणिक विद्यालय चार है, फिर इसके साथ ही यहाँ संस्कृत विद्यालय का खाता खुला है। यहाँ की पवित्र भूमि ने कितने ऐसे सपूत दिये है, जो अपनी योग्यता से राजकीय सेवा में रहते हुए देश की सेवा कर रहें है। पुस्तकालयों की संख्या तीन है तो साहित्यकारों की संख्या भरपूर है।

(4) कला और संस्कृति

इसमें नगर बिसाऊ की कला एवं संस्कृति के मर्म को दर्शाया गया है। बसंत रूपी कला में संगीत, नृत्य, अभिनय, नाटक आदि सबका समावेश किया है, जो मानव को प्रभावित करने वाली सारी भावनाओं को समेटे रखता है। लेखक बिसाऊ की कला एवं संस्कृति संदर्भ में कहते हैं कि संगीत, मंच की दीवारें, ताल की तरंगें, वास्तुकला, हवेलियों के भित्तिचित्र, हस्तकला का रंग, कारीगरी के कौशल आदि द्रष्टव्य हैं, तो गायन, वादक, नृत्य, मंदिरों, मस्जिदों, धर्मशालाएँ, अतिथि भवन, विवाह, भवन, कमरे, यतीमखाना, छतरी, चित्रकला, आभूषण, रंगाई–छपाई आदि व्यापक रूप से उपलब्ध हैं।

(5) जन जागरण एवं नगर विकास

इस अध्याय में जन–जागरण एवं नगर विकास की चर्चा की गई है। प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के बाद देश में आजादी के लिए संघर्ष एवं जन–जागरण की लहर आई। बिसाऊ नगर भी इससे अछूता नहीं रह सका। सन् 1920 में सर्वप्रथम पं. श्रीराम ने बिसाऊ नगरी में जन–जागरण का पाठ पढ़ाया और इन्होंने 1920 में हिन्दी पुस्तकालय का श्रीगणेश किया। इन पुस्तकालयों के माध्यम से पाठक वर्ग लाभ प्राप्त कर रहें है।

इसके अलावा सूरजमल मेड़तिया, महादेव चेजारा, सतुराम जाँगिड़ आदि ने भी महत्त्वपूर्ण कार्य किया। सन् 1942 के आन्दोलन का प्रभाव, 1945 में प्रजामण्डल की स्थापना, सं. 2005 में नगर विकास मण्डल की स्थापन, सं. 2002 में नगरपालिका की स्थापना के साथ लेखक ने यातायात के साधन बिजली, पानी, औषधालय आदि पर अपनी दृष्टि डाली है। बिसाऊ नगर के विकास में यहाँ की सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, व्यापारिक, शैक्षणिक, साहित्यिक कार्यों में समस्त जनसेवी संस्थाओं ने मुख्य रूप में सहयोग दिया।

(6) सेठ साहूकार और व्यापारिक प्रतिष्ठान

इसमें बिसाऊ नगर के सेठ, साहूकार और व्यापारिक प्रतिष्ठानों का परिचय दिया है। सेठ साहूकारों ने नगर के विकास में हमेशा से ही भरपूर सहयोग दिया है। इन्होंने इस नगर में धर्मशालाएँ, कुएँ, बावड़ी, कुण्ड, बगीची, प्याऊ, सड़क, विद्यालय, औषधालय, अतिथि भवन, जोहड़, तालाब, पानी, बिजली आदि अनेक विकासमय कार्य किये तथा परोपकारी एवं दानवीरों का भी सहयोग सराहने योग्य **है।**

(7) विविध –

इसमें विभिन्न प्रकार की ऐसी सामग्री एवं सूचनाएँ हैं जिनकी पिछले अध्यायों में चर्चा नहीं की गयी है तथा ग्रन्थ को पूर्ण करने के लिए इनका उल्लेख करना भी आवश्यक हो गया था। यही स्थिति युवा प्रतिभा के साथ है। प्रयत्न करने पर भी वांछित स्वरूप में उनका परिचय नहीं दिया जा सका है।[8] प्रथम व्यक्ति शीर्षक के अन्तर्गत अद्यावधि प्राप्त हुई सूचनाओं का उपयोग किया गया है। संस्थाओं और स्थानों की सूची में प्राचीन एवं वर्तमान सभी को प्रमुखता के आधार पर सम्मिलित करने का प्रयत्न किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य विभिन्न सूचनाएँ भी इसमें सम्मिलित की गई हैं।

लेखक ने समूचे बिसाऊ क्षेत्र की जीवन लीला प्रस्तुत की है जो लेखक की कर्त्तव्यनिष्ठा, लगन, परिश्रम, कौशल, सहनशीलता आदि विशेषताओं की ओर संकेत करता है। अपने कार्य में नगर की सम्पूर्ण प्रतिभाओं को स्थान दिया है। इसमें तटस्थ भावी लेखन का पता भी स्पष्ट रूप से चलता है। यह नगर का एक गौरवपूर्ण ग्रन्थ है। इसके साथ ही अंचल के समग्र सांस्कृतिक एवं सामाजिक इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। इसमें लेखक की सूक्ष्म दृष्टि, व्यापक एवं विस्तृत ज्ञान धारा, गंभीर लेखन क्षमता समायी हुई है। यह सर्वांग चित्रणमूलक एक रोचक रंजक एक मनमोहक ग्रन्थ है, जिसमें सूचनाओं का सागर लहरें लेता है। अनेक विद्वानों ने इसे **'सूचनाओं की डाइरेक्टरी'** कहा है जो एक गौरवपूर्ण अभिव्यक्ति है।

(ख) युगबोध

डॉ. उयवीर शर्मा के एकांकी संग्रह राजस्थानी संस्कृति, चारू, चरित्र, उदात, और उजली परम्परा को बखूबी दर्शाते है। इनकी ऐतिहासिक घटनाओं के कारण कथ्य और शिल्प को एक नवीन दृष्टिकोण से सजाया गया है।

इनकी एकांकियों के विषय सामाजिक इतिहास बोध को भी दर्शाते है। इनके काव्य रचनाओं में वीर–संस्कृति के भावों का चित्रण हुआ है। साथ ही सामाजिक चेतना की सरस धारा का प्रवाह होता है। इनमें रोचकता, सरसता और प्रभावशीलता का भी स्वरूप दिखाई देता है। इन्होंने अपनी एकांकियों के विषयों में दहेज की समस्या को बड़ी बखूबी से उभारा है।

---

8. वही, डॉ. उदयवीर शर्मा एवं श्री अमोलकचन्द जाँगिड़, पृ. 198

वर्तमान में यह समस्या दानव के समान अपने स्वरूप को विशाल करती जा रही है। इसे दूर करने के लिए कवि ने व्यंग्यात्मक प्रहार किये है। इससे टूटते परिवेश और गिरते मानवीय मूल्यों को उभारा गया है। इन्होंने एकांकियो के माध्यम से आधुनिक भाव, रस से परिपूर्ण नाटकीय संवादो की रचना की है।

डॉ. उदयवीर शर्मा की एकांकियों में रंग—दीठ की गहरी ताकत देखने को मिलती है। इन्होंने गुरू महिमा का बखान करते हुये गुरु की दया व उचित मार्गदर्शन की महिमा का गुणगान किया है। उन्होंने कृतघ्नी मनुष्य को धिक्कारते हुये कहा है कि वह कभी भी सत्य मार्ग का अनुसरण करके अच्छे व उचित कर्म नहीं कर सकता है।

नुगरा जस पायो कणां, बां रा नुगरा काम ।
क्रितघण कपटी कलुसमन, बां रा नाम—कुनाम।।

गुरु द्रोही कह बावड़यो, गुरू द्रोही बहकार।
क्रितधण नुगरो औगणौ, धिनधिन बारम्बार।।

गुरु जग में अणमोल धन, गुरु, गुण मिलै न मोल।
गुरु जै चालै लोभ पथ, पाछै मोल न तोल।।

जुग रै ढालै में ढलया के धंधो के ध्यान।
भाव दब्या माया बढ़ी, अमर गुरू—अर ग्यान।।

समरपण

गुरु के प्रति समर्पण भाव को कवि ने निम्न तरह से व्यक्त किया है—

गुरु रो चोलो धारकै, राखो पद रो मान ।
तनम न सूपो जगत तै, करो साधना ग्यान ।।

जिण मन सत री साधना, सेवा धरम सुवास।
त्याग समरपण नित रमै, उण मन गुरु निवास।।

जीवन री संजीवणी, गुरुवां री आसीस।
मेटै मन री भरमना, नाऊं चरणां सीस।।

अमर राग—रस सूं भरयो, जीवन भाव—रसाल।
बिनवूं अन्तर जोत नै, गुरु सारा श्री लाल।।

उन्होंने माया को बहुत नशाीली बताया है, क्योंकि इसके प्रभाव में आकर व्यक्ति न तो परमात्मा की भक्ति कर सकता है और न ही वह अपने जीवन को सार्थक तरीके से जी सकता है। इन्होंनें बताया है कि युग के साथ ही ग्यान–जगत का भाव बदलेगा।

जुग रै साथै बदलगा, ग्यान–जगत रा भाव ।
नवबोध मिल चाटगो, गुरु, सिस्यां रा चाव।।

गुरु सूं जो टेडो रहयो, खाई पंथ–पछाड़।
कंथ रुक्या ऊजड़पड़यो, मन सूं मन री राड़।।

गुरु जग में अणमोल धन, गुरु मिलै न मोल ।
गुरु जै चालै लोभ पथ, पाछै मोल न तोल।।

बदली गुरू कुल भावना, कुवै कड़गी भांग।
माया मन में नाचरी, धारया गुरु रो सांग।।

जुग रै ढालै में ढलया, के धंधो के ध्यान ।
भाव पदया माया बढ़ी अमर गुरू–अर ग्यान।।

गुरु सूं आकड़ राख कै लेणो चावै ग्यान ।
बै मोथा धूधू बण्या, पालै नित अग्यान।।

उन्होंने सांसारिकता, भोग विलास व समाज की हीन परम्पराओं के माध्यम से युगबोध का यर्थाथ चित्रण किया है। इनकी झलक इनके काव्य में कही न कहीं किसी माध्यम से एक संकेत और प्रतीक को दर्शाती है। इन्होंने माया से बचने के लिये सबसे प्रमुख साधन गुरु को माना है, क्योंकि गुरु ही एक ऐसा सच्चा हितैषी है, जो माया के बंधन से मुक्त करवाकर व्यक्ति को जीवन के मार्ग को सही दिशा प्रदान करता है। इसी ज्ञान के प्रकाश पुंज में व्यक्ति को सत्य के मार्ग का अनुसरण करते हुए परमात्मा के सानिध्य की प्राप्ति संभव हो सकती है।

इन्होंने प्रकृति चित्रण के माध्यम से डांफी, सूंटो में मानवीय व्यवहार के क्रूर व दया दृष्टि के दृष्टिकोण को बताया है। इनके काव्य में मानवीय स्वभाव का चित्रण इसी के माध्यम से बखूबी समझाया गया है। मानवीय व्यवहार में देवीय गुण जिसमें दया, क्षमा, ममता, स्नेह, प्रेम आदि का समावेश होता है, जो मनुष्य को आत्मतत्व से जोड़कर घनिष्ठता में परिवर्तित करता है। वहीं उसका क्रूर व्यवहार उसमें अत्याचारी, अधर्म, अनीति जैसे

अवगुणों से परिपूर्ण करके उसे गलत कृत्यों की ओर धकेलता है। इसके माध्यम से इन्होंने युगबोध का चित्रण किया है।

मानवीयता के नाते व्यक्ति को विनम्रता का व्यवहार अपनाते हुये अपने कर्म और लक्ष्यों की ओर अग्रसर होना चाहिये। अपने काव्य मे इन्होंने श्रद्धा सागर के माध्यम से धर्म और कर्म की श्रेष्ठता को भी बखूबी बताया है। इसके अन्तर्गत इन्होंने माना है कि अगर व्यक्ति अपने कर्म बिना किसी छल–कपट के नीतिगत आचरण को ध्यान मे रखकर अपनाता है तो वह अवश्य ही सफलता की सीढ़ी को प्राप्त करते हुये अपने जीवन को सही तरीके से अपनाकर सार्थक बना सकता है। अपनी संस्कृति, कला, गांव के माध्यम से युगबोध का यर्थाथ चित्रण किया है। इसके साथ ही वह सभी को अपनी काव्य रचनाओं के माध्यम से प्रकृति, संस्कृति, समाज, परम्परा से जोड़कर प्रेम, स्नेह के साथ जोड़ता है ताकि इनसे जुड़ी समस्याओं का वह स्वयं ही समाधान निकाल सके। इनकी काव्य रचनाओं में कई स्थानों पर प्रभावशीलता का भी बखूबी चित्रण हुआ है। यह आकर्षक, रोचक व मनोरंजनकारी होते हुये वर्तमान परिपेक्ष्य से सभी को जोड़ती है।

गुरु शिष्य के संबधों के माध्यम से इन्होंने कई ज्ञानवर्द्धक नीतीगत बातों का व्यवहारिक चित्रण किया है।

(ई) मानवतावादी दृष्टि –

मायड़ भाषा राजस्थानी के हिन्दी के वरिष्ठ विद्वान डॉ. उदयवीर शर्मा का साहित्य कर्म मानववादी दृष्टि को लेकर सराहनीय व प्रशंसनीय रहा है, क्योंकि इन्होंने इसी दृष्टिकोण को लेकर उच्च श्रेणी की कई रचनाओं का सृजन किया है। इनकी ये रचनाएं युगबोध को दर्शाने वाली है। इन्होंने अलग–अलग विविध प्रकार की विधाओं के माध्यम सें अपने भाव बोध को बड़ी सावधानी से विश्लेषित व चित्रित किया है। इन रचनाओं मे नई सोच, बिम्ब, प्रतीकों का प्रयोग करके समाज को नूतन दिशा प्रदान करके श्रेष्ठ रचनाएं एवं सोच प्रदान की है।

आपने प्रकृति के माध्यम से भी मनुष्य को यह सोचने के लिए विवश किया है। मनुष्य को भी प्रकृति से रूबरू करवाया है। इनकी महत्त्वपूर्ण रचना 'डांफी' के माध्यम सें इन्होंने बताया है कि राजस्थान में कड़ाके की सर्दी के कारण सभी जानवर, पेड–पौधों और सभी जीवों का जीवन दुःखी होता जा रहा है। इस डांफी की ठंडी हवा के साथ ही सम्पूर्ण वनस्पति मुरझाकर निर्जीव सी दिखाई देती है। डांफी संसार के जन जीवन में अपना प्रकोप

किस प्रकार दिखाती है, इसकी गंभीरता, गहनता को भावों के माध्यम से दिखाया है। इसमे बताया है जिस प्रकार डांफी की मार से सम्पूर्ण वनस्पति निर्जीव व जड़ सी दिखाई देती है, तथा सम्पूर्ण स्थान सुनसान सा प्रतीत होता है। इसके प्रभाव से सरसता से नीरसता का दृश्य चारों ओर दिखाई देता है।

इस प्रकार मनुष्य भी अगर अपने गुणों का परित्याग कर, अपनी स्वार्थ लिप्सा में लगा रहता है तो वह शायद कई व्यक्तियों के जीवन को नीरसता, खिन्नता में परिवर्तित कर सकता है। वह दूसरों के जीवन से खुशी, हर्ष, आनंद, उत्साह जैसे सुन्दर भावों को सदा के लिए दूर कर देता है । जिस प्रकार 'डाफी' का काम यही है कि दूसरे व्यक्ति को अपने भय आतंक से आतंकित करे और केवल उनको नुकसान पहुँचाकर अपना वर्चस्व का परचम फहराये। उसी प्रकार स्वार्थी मनुष्य भी सदैव गौरव व मान–प्रतिष्ठा के सोपान पर चढ़ना चाहता है। **डॉ. उदयवीर शर्मा** जी ने भी मानुषिक दृष्टिकोण को लेकर यह 'सूँटो' नामक काव्य रचा है।

सूंटो क्रोध का प्रतीक है इसके साथ ही इसमें रस, आलम्बन, उद्दीपन, अनुभाव, संचारी भाव आदि स्थान–स्थान पर चित्रित हुये है। इसके माध्यम से इसमें 'क्रान्तिकारी' भावों का चित्रण हुआ है। जनसाधारण की भौतिक समस्याओं को ध्यान में रखकर विसंगतियो, विद्रूपताओं का उल्लेख इन्होंने किया है। जिस प्रकार सूंटो धरती में उथल–पुथल मचाकर सब कुछ नष्ट कर देता है, वैसे ही यह जीवन की क्रान्ति को दर्शाते है। यहां शर्मा जी ने अपने काव्य में सूटों के माध्यम से पृथ्वीतल के विकराल रूप को दर्शाते हुये सामाजिक विसंगतियो, भेद–भाव, अर्थतंत्र, वर्ग संघर्ष आदि के रूप को प्रत्यक्ष रूप से प्रकट किया है। सभी मनुष्य समाज में समता के भाव को लाना चाहते है कवि ने मर्मस्पर्शी भाव बोध से परिपूर्ण आंचलिक ऋतु काव्य का वर्णन किया है। इस ऋतु काव्य में अपनी ऋतु परम्परा को दर्शाते हुये आगे बढ़ने का सुझाव दिया है। उसी प्रकार मनुष्य को समाज की संरचना के हिसाब से प्रयास कर विषमता रूपी व्यवस्था को समाप्त कर देना चाहिए।

'ठसक छोड़ दे सामन्ती री, पवन–कुली इवहवा पिछाण ।
जन–मन रै नेड़ै आ सूटां, मत पीवै दीनां रा प्राण ।।

समता रा बादल ल्या मन में, मंगल रौ बरसादे नीर।
मिटै गरीबी बचै दीनड़ा, उजलै लिखरै राष्ट्र शरीर ।।

इन्होंने पद्य में मानवतावादी आदर्श के लिए निस्वार्थ सेवा भाव रखते हुये पूर्ण पवित्र हृदय से, दृढ़ चरित्र को रखते हुये दूसरे के दुख दर्द लिए समर्पित भाव को रखना ही एक मनुष्य की शोभा है। दूसरो के दुःख से दुःखी होना तथा उसकी मन लगाकर सेवा करना ही समरसता के भाव को जाग्रत करती है। ऊँच–नीच का भेदभाव समाप्त कर सेवा–धर्म अपनाना ही समाज की उन्नति के भाव को प्रकट करता है। मनुष्य का मन सदैव दीन–हीन की सेवा के लिए की तत्पर रहना चाहिये, यही इसके मनुष्य होने का सच्चा नैतिक दायित्व भी है।

कोई भी व्यक्ति यदि पीड़ित है, तो उसकी पीड़ा को देखकर सेवा का भाव जागना भगवान की भक्ति का एक सच्चा और सर्वोत्तम स्वरूप माना गया है। मानव की सेवा का यर्थाथ रूप, भगवान की भक्ति के भाव को दर्शाता है। ये सारे गुण नैतिकता के अन्तर्गत समाहित है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने इस बात को अच्छी तरह उजागर किया है कि सच्ची भावना से सेवा धर्म निभाना ही मनुष्य की मनोदशा को प्रकट करता है।

ई भाव भौम पर खड़यो सेवाभावी मन ही, आत्मानन्द को अनुभव करै।
आपरै दिवडै में हेतरा हिलोरा भर, अर मिनखपणै नै सफल करै ।।

''आपां सगला समाज रा सपूत हां, ई वास्तै बिना स्वार्थ पवित्तर अर उनन्त भावना सूं समाज री सेवा करणो आपणो नैतिक दायित्व है।''

ऊपर लिखित बातों से सिर्फ यही सिद्ध होता है कि सेवा भावना के द्वारा सभी आयोजन सफल होते है। हमारे आयोजन वास्तव में तभी सफल होगें जब हम दीन दुखियों, पीड़ितो एवं उपेक्षितों की सच्चे मन से सेवा करेगें। हमारे मन में अंहकार का भाव न होकर समर्पण का भाव बिना दिखावे और बिना स्वार्थ के होना चाहिये।

जनकल्याण, समाज की सेवा करना ही मनुष्य का नैतिक दायित्व है। सेवा का क्षेत्र भी एक मनुष्य के लिए व्यापक है। सेवाधर्मी और कर्मी के मन की व्याप्कता इसी भाव से सदैव जुड़ी रहती है। समाज में फैली पीड़ा, कुण्ठा, अभाव की यातनाएं, महामारी, आदि में सेवा के द्वारा मानव अपना सेवा धर्म निभाकर इस अवसर को उपयोग में ले सकता है। बहुत सी संस्थाएं भी इस सेवाधर्म में लगी हुई है, क्योंकि इनका कर्म ही सेवा और नैतिक दायित्व है ।

सेवा सूं मेवा मिले, कहगा स्याणा लोग।
दुखियां री सेवा करो, छोड़, समूला भोग।।

सेवा सांचो धरम है, मिनख पणै री जोत।
सांची भगती ईश री, साचो करम उदोत।।

सेवा भावी मिनख रो, जस फैलै चौकू।।
अमर साधना धरम री, नित नित बढ़ै अखूर ।।

समाज सेवा तन–मन धन रै साचै संगपग सूं हुवैं। सेवा में तन–मन रै जुड़ाव री धणी प्रधानता हुवै अर जै धन और जुडज्या तो सोनै में सुहागै रो मेल ही मनो त्याग और बलिदान अर समरपण रै तिरवेणी संगम सूं सेवा भावना धणी गरणावै। परवान चढ़ै, सवेदंनशील भावनावां रो संगुम्फन ही सेवा नै सार्थक बणावै।

(उ) मानव मूल्यों का समर्थन –

आज के समय में मानवीय मूल्यों को ध्यान में रखकर नाटक एंकाकी या साहित्य किसी भी विधा पर अपनी लेखनी चलाना एक कवि के लिए बहुत कठिन कार्य है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने काव्य के अन्तर्गत जो भाव, विचार, व्यंग्य आदि का प्रयोग किया है वह उनकी अनुपम विशेषता है। उन्होंने सामाजिक क्षेत्र को लेकर भी कई एकांकियां लिखी है। उनके अनुसार ही उनके पात्रों ने गुण, धर्म, कर्म के सहारे यर्थाथ को ध्यान में रखकर सफलता पूर्वक अपने कदम आगे की ओर बढ़ाये है। राजस्थानी संस्कृति और इनका जीवन मूल्य ही इतिहास और संस्कृति को दर्शाता है। रंगमंच के सहारे ही वर्तमान परिस्थित को सभी के समक्ष प्रकट किया जा सकता है। इतिहास आगे से आगे बढ़ता रहता है तथा संस्कृति की चेतना बनकर समाज के निर्माण में अपनी भूमिका अदा करता है। इनके काव्य के माध्यम से इनकी रचनायें एक पथ प्रदर्शक का धर्म निभाने के लिये सदैव ही सहायक सिद्ध हुई है, जिनमें भौतिकता का भाव तो पाया जाता है। समरसता, सहजता, सरलता सहज भावी चित्रण की भी झलक दिखाई देती है। इन्होंने समाज में व्याप्त जो भी बुराईयां है या जो पुरानी परम्पराये है जो समाज के वातावरण को दूषित कर उसे पवित्र होने से रोकती है, उन्हें जड़ से दूर करने का भरसक भरपूर प्रयास भी किया है।

सामाजिकता से जुड़ी इनकी काव्य रचनाओं में जन समूह के मन के भावों का भी भरपूर चित्रण हुआ है, जिसमें दहेज की समस्या को बखूबी उभारा गया है। आज की पीढ़ी के लिये यह एक विकराल समस्या है, इसलिये इस पर विचार करके आपसी समझ व

तालमेल से इस समस्या को सुलझाया जा सकता है। इन्होंने दहेज के लोभी व्यक्तियों पर सटीक व्यंग्य भी अपने काव्य के माध्यम से किया है। कितनी ही लड़कियों को दहेज के कारण प्रताड़ित किया जाता है, तथा उनके साथ बुरा व्यवहार करके पग–पग पर अपमानित किया जाता है। अगर समाज से इस बुराई को जड़ से नहीं निकाला गया तो यह अपना स्वरूप और भी विस्तार पूर्वक फैला लेगी और हर एक के लिए सांसे लेने में भी घुटन का अहसास होगा।

इनकी रचनाओं में सुन्दर काव्यमय चित्रण हुआ है वहीं किसी विचार को लेकर, किसी दर्शन, किसी चितंन आलौकिकता, समाज दृष्टि, क्षणभंगुरता, का मूर्त–अमूर्त रूप भी अत्यन्त मनमोहक मिलता है। इन्होनें भावों के तंरग में लीन होकर तन्मयता के साथ अपने काव्य की रचना की है जिसे पढ़कर कोई भी व्यक्ति संवेदना के साथ अपने हृदय से वह उद्‌गार प्रकट कर सकता है। इनके काव्य में मानव मूल्यों को महत्त्व देते हुए गद्य व पद्य में लालित्य, रसमयता, भावात्मकता, सरसता, भावों की संवेदनशीलता, लौकिकता–अलौकिक भाव संरचना आदि का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है। इन्होने मनुष्य के भाव चेतना का बाह्य स्वरूप भी प्रकट किया है। साथ ही मनुष्य की क्रिया–प्रतिक्रिया, द्वन्द्व, जिज्ञासा, और सृजनात्मक अनुभूतियो का चित्रण भी अपने काव्य में समाहित किया है।

एक मनुष्य में जीवन को जीने के लिए जिन आवश्यक मूल्यों को निर्धारण अति आवश्यक होता है। उनमें मार्मिकता, मानवीयता, सहजता, भोलापन, जीवन का अनुभव, सहज निश्छलता, स्पष्टता, लोक व्यवहार की गहरी समझ, सेवाभावना, कर्मण्यता, स्वाभिमान आदर्शवादिता आदि समस्त गुणों का होना आवश्यक बताया है। इन्हीं गुणों के सहारे मनुष्य स्वस्थ समाज में स्वस्थ विचारों को आदान–प्रदान कर के अच्छे पवित्र वातावरण का निर्माण कर सकता है। इनकी प्रेरणा से ही आगे आने वाली भावी पीढ़ी में अच्छे मूल्यों व अच्छें संस्कारों का निर्माण हो सके।

सड़का जिण री सेज, आकासां रो ओढ़णो।
बण्या चालणी बेज, मानवता रै, मोलका ।।

धनवानां रो जोर, निरधण नै मेट्या तुल्यो।
इसो समाजी जोर, मेट्या सरसी मोलका ।।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने स्वंय यही कहा है कि समाज से जुड़कर लिखी गई रचना ही साहित्यकार की असली शक्ति है और इसी ताकत के बल पर समाज में उसकी लोकप्रियता

का बखान होता है। इसलिए कविता को पढ़कर ही कवि के अनुभव का पता भी लगाया जा सकता है कि कवि के अनुभव की जड़े कहाँ तक पहुँच पाई है और वह मानवीय संवेदना को किस सीमा तक स्पर्श कर पाती है।

कविता का भाव चाहे आंनद पर ही क्यों न टिका हो लेकिन कविता का अनुभव मानवीय संवेदना और वैचारिकता को रूपायित करता हुआ रचना कर्म की सार्थकता और अनुभव की सार्थकता को प्रकट करने में अपना सहयोग प्रदान करता है। कवि की संरचनागत चेतना ही उसकी अनुभवगत चेतना की भी नयी उर्जा है, और यह कवि को निरन्तर कर्म करने के लिए आगे बढ़ाती रहती है। अपने काव्य में कई स्थानों पर कवि ने मानवीय चेतना के विराट स्वरूप को उभारा है इस प्रकार डॉ. उदयवीर शर्मा की काव्य रचनायें प्रकृति मानवीय मूल्य सामाजिक सरोकार और जीवन की सार्थकता को अभिव्यक्ति प्रदान करती है। उनकी सहज सरल काव्य रचनाओं की भीतरी परते भी मानवीय चेतना के आलोक से परिपूर्ण नजर आती है।

आपने लेखन के माध्यम से अपनी जिम्मेदारी समझते हुए आज के परिपेक्ष्य में चुनौतियो को सामना करने के लिए सही उचित मार्गदर्शन अपने की प्रेरणा प्रदान की है। यहीं दृष्टि काव्य की संवेदना को सभी के समक्ष जिंदा बनाये हुये है। उन्होंने अपने काव्य में उच्च कोटि के महापुरुषों से जुड़ी जीवन दर्शन को दर्शाने वाली काव्य रचनायें भी प्रस्तुत की है जो मानव चितंन की दृष्टि से युग के अनुकूल है। आज के समय में जो आपसी रिश्तों के मध्य बिखराव, अवसाद, तनाव, हिसंक मनोवृति फैली हुई है, उसे प्रेम, स्नेह की शक्ति के द्वारा ही समरसता के भाव में बदला जा सकता है। उन्होंने इसी परिपेक्ष्य में वर्तमान व्यवस्था की सब प्रकार की विसंगतियों और समस्याओं का समाधान प्रेम तत्व को ही माना है। इसी प्रेम के मार्ग पर बढ़कर ही मानवता की सच्ची सेवा संभव है। श्रद्धानाथ जी महाराज की वाणी में उनके माध्यम से कहा है कि प्रेम का संदेश सभी प्रकार के जीवन मूल्यों को प्रेरित करने वाला था।

अतः डॉ. उदयवीर शर्मा के काव्य में मानवीय रिश्तों की पुनर्सर्जना भी हुई है। वे कविता के कथ्य को एक नई जमीन भी प्रदान करते है। वे केवल बाह्य रूप रंग को कही नहीं देखते अपितु उसकी संरचना में मानवीय चेतना के नये आयाम भी खोजते है। उनके प्रत्येक काव्य रचना मे नारी अस्मिता के लिए संघर्ष, शरणागत वत्सलता, प्रतिशोध की भावना, न्याय के लिए मर मिटना जैसे आदर्शों का भी चित्रण हुआ है। इन्होंने राजस्थानी संस्कृति को सजीव रखते हुये आनबान के लिए मर मिटना, देश–प्रेम, नारी रक्षा, स्वाभिमान

प्रतिज्ञा पालन आदि जीवन मूल्यों से जुड़ी रचनाओं का लेखन किया है। इनके कथ्य समाज–यर्थाथ का वास्तविक चित्र भी प्रस्तुत करते है।

(ऊ) परम्परावादी दृष्टि –

डॉ. उदयवीर शर्मा ने इस पारम्परिक संबोधन शैली के काव्य में विषयगत नवीनता को सामाजिक जीवन प्रसंगो से जोड़ते हुये एक ऐसा काव्य लिखा है जो इस बात का परिचय देता है कि कविता जहाँ चुनौतियों का मुकाबला करती है वही वह अपने को सामाजिक सरोकारों से जोड़कर अपने उत्तरदायित्व को भी पूर्ण करती है।

डॉ. शर्मा की सहज सरल काव्य चेतना का आधार प्रकृति रही है। कवि अपनी परम्परा और परिवेश से इस रूप में जुड़ा हुआ है। चाहे प्रकृति का विनाशक रूप हो, या चाहे उसका सौन्दर्य आकर्षण, कवि कभी भी प्रकृति को अपने सौन्दर्य के अस्तित्व बोध से उसे अलग नहीं समझता है। यहाँ कवि ने मानवीकरण की प्रवृति छायावाद के बाद प्रकृति के साथ चेतन सत्ता का सम्बन्ध जोड़कर कही दार्शनिक रूप में उभरी है तो कभी उन्होंने उसे अनुभूति के स्तर पर उसे लिया है। कहीं प्रकृति को उन्होंने समता विषमता के रूप में प्रकट किया तो कहीं विद्रोही रूप में उसे प्रकट किया है।

राजस्थानी की इसी काव्य परम्परा में जिस प्रकार चन्द्रसिंह की 'लू' और 'बादली' की रचना प्रकट हुई उसी परम्परा में नवीनता की दृष्टि से डॉ. शर्मा की **'डांफी' और 'सूंटो'** अत्यन्त विशिष्ट रचनाएं मानी गई है।

उसी परम्परा में 'मरूधर री महक' मरूस्थली के भीतर छिपी उस सुगंध को अमिट रूप से अपने अंदर छिपाये हुये है। जो इस धरती की सभ्यता और संस्कृति की निजता का गौरव मानी गई है। इस प्रकार की काव्य रचनायें ही हमें अपनी परम्परा से जोड़कर हमारे हृदय में संवेदना का भाव उत्पन्न करती है। राजस्थानी काव्य में संबोधन के माध्यम से एक परम्परा नीती काव्य को लेकर हुई है क्योंकि इस पारम्परिक शैली के माध्यम से काव्य की विषयगत नवीनता को सामयिक जीवन प्रसंगो से जोड़ते हुए वर्तमान में सामाजिक समस्याओं से जोड़कर आगे किस प्रकार समस्या से उबरना है उसकी प्रेरणा प्रदान की गई है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने ऐतिहासिक तथ्यों को लेकर भी परम्परा का निर्वहन किया है जैसे उन्होनें ऐतिहासिक कथानकों को मानवीय संवेदना और राजस्थान के सांस्कृतिक मानव मूल्यों के रूप में भी प्रस्तुति प्रदान की है। इन्होंने लोक जीवन से जुड़े तथ्यों व मौलिक

उपमाओं का प्रयोग करते हुये, उनमें नवीन तथ्यों को प्रमुखता प्रदान की है। काव्य की कथा तो उन्होंने परम्परिक ली है लेकिन उनमें श्रृगांर के दोनो पक्षों का बड़े ही सुन्दरता से चित्रण किया है।

अरै साढ़ रा पैला बादल, आव अठै तू ठैर।
इमरत री बरखा तू करदे, उठै जगत सूं झैर ।।

बादल जल री बालद ठायां, गोता खा चौफेर ।
पण बाल बादल जद बाजै, रूत में करदे म्हैर।।

सालीना तू आंवली नित, इबकै तोड़ी प्रीत ।
बड़का भी पाली सदा मिले, बडा धरां री रीत।।

माया छयां एक सी, सत नै लीन्यो दाब ।
झूठ जगत पीछै पड़यो दाता तू ही ढाब।।

भड़ जामण भागीरथी, सत राख्यो तन होम ।
दीपै साहित जगमगै , राजस्थानी भौम।।

मंगल थारी भावना, मंगल म्हारा भाव ।
सौ बरसां लग थे रमो, जण सूं राख जुडाव ।। 15।।

सोच विमल वाणी मधुर, लखटकियों त्यौहार।
सद्भावां री कोथली, थे हो गुणी उदार ।। 20।।

डॉ. उदयवीर शर्मा के वीरता, ओजस्विता से परिपूर्ण काव्य रचना लेखन अपने काव्य के अन्तर्गत किया है, जिसमें इन्होंने राजस्थानी संस्कृति व इतिहास से कई कथ्य लेकर राजस्थानी परम्परा को आगे बढ़ाने का प्रयास किया है। जिसमें पदमा, धडी, राणी, विद्युलता, कानसिंह री वीर मायड़ आदि में उनकी वीरता के गुणों आदि का गुणगान और बखान किया गया है। ताकि इसी परम्परा के दृष्टिकोण से इसे आगे बढ़ाया जा सकता है। जैसा की हम जानते है कि भारत की भौतिक भावना सदैव आध्यात्मिक भावना से नियंत्रित, अनुशासित और मर्यादित रही है, क्योंकि भक्तिकाल को लेकर आज तक समाज को अनुशासित रखने के लिए स्वर्ग–नरक, पाप–पुण्य, धर्म–कर्म, भाग्य–विश्वास, जगत–मिथ्या, ईश्वर का सच्चा स्वरूप तथा उसकी आस्था को स्थापित कर दृढ़ भावों से भौतिकता के दौर में एक पारम्परिक परिपाटी चली आ रही है।

कवि ने यह माना है कि इन सभी को त्यागकर केवल संतोष का आभूषण ही पहनना चाहिए क्योंकि समस्त धन की लालसा इसी से दब जाती है। यह संतोष संतो को सुख प्रदान करने वाला रहा है।

कवि ने इसी परम्परा में यह कहा है कि माया के प्रभाव के कारण मानव मूल्यों का भी ह्रास होता जा रहा है । क्योंकि इसी कारण आपसी संबध टूटते जा रहे है, व वैमनस्य का भाव सभी के मध्य उत्पन्न हो रहा है। इस भाव को समाप्त कर सभी के मध्य प्रेम का व्यवहार उत्पन्न करना ही कवि का यहाँ महत्त्वपूर्ण उद्देश्य रहा है।

भेदभाव भरपूर, टूटण नै नित टांणरया ।
मिनख–मिनख सूं दूर, मन सूं कटरया, मोलका।।

प्राचीन काल से ही साहित्य का स्वरूप सौन्दर्यशाली लुभावना रहा है। जिनमें छः ऋतुओं का रसमय बखान गुणगान हुआ है।

प्रारम्भ से ही मनुष्य का पालन प्रकृति के द्वारा संभव हो पाया है। प्रारम्भ से ही जब शिशु अपने नेत्र खोलता है, तो उसे प्रकृति के दर्शन होते है। वह सूर्य की महिमा का गान करता है। इसी प्रकृति के कारण ही उसे छः ऋतुओं का आनन्द भोगने के लिए मिलता है।

बसंत ऋतु को सबसे मादक व मदमस्त माना गया है, जो जीवन में नवीन रस का संचार करती है। जिससे प्रत्येक वृक्ष पर सौन्दर्य पुष्प, पत्तियों, फल, मकरन्द के माध्यम से उतर आता है। चलने वाली पवन में भी मादकता का भाव होता है। बसंत की इसी रमणीयता का गहन गंभीर मन मोहने वाला सुन्दर वर्णन काव्य ग्रन्थों में हुआ है। वसंत विलास, फाग, ढोला मारू रा दूहां आदि ग्रन्थों में इसका सुन्दर चित्रण हुआ है। इसी परम्परा में एक नाम इसका फाग है। इस महीने में फागणिये की हवा चलती है तो मन में असीम आनंद को उत्पन्न करती है।

मनड़ो नाचै चंग पै, आयो फागण मास ।
मोंद नगाड़ा गुजरंया, धन यो जीवण रास।।

इन काव्यों मे मीठे मधुर मास फागुन का रंगीला सजीला वर्णन किया गया है। इसलिए ही इन्हे 'फागु काव्य' कहा गया है। इस काव्य परम्परा के दर्शन तेरहवीं–चौदहवीं सदी में ही किये जा सकतें है। इस के माध्यम से श्रृगांर का सुन्दर वर्णन किया गया है

इसको पढ़कर मन आनंद से थिरकना चाहता है, चित्त की चंचलता, भावों के माध्यम से प्रकट हुई है।

बसंत तणा गुण गहगह्या महमह्या सवि धनसार।
त्रिभुवनि जय जयकार पिका ख करइ अपार ।। 4।।

पद्मिनी परिमल बहकई लहकई मलय समीर ।
मयणु निहां परिपंथयी पंथीय धार अधीर ।। 5।।

इसी परम्परा में **डॉ. उदयवीर शर्मा** ने नारायण फागु, चर्तुभुज कृत भ्रमरगीत, हरि विलास कामीजन विश्राम तरंग आदि फागु काव्यों के अलावा कई का वर्णन किया गया है। विनयचन्द्र सूरिकृत नेमिनाथ चतुष्पदिका रचना भी चौदहवीं सदी के प्रारम्भ में रची हुई है

लाल गुलाल फुलेल, केसर घसि कामणी ।
भरीये कचोली हाथ, खेलई बह भामणी।।

फाग खेलो घर कत, नेह क्यों तोड़िये ।
विण अपराधई नारि, इसी क्यूं छोड़िये।।

फागुण मासै हे सखी, म्लहु खोले नरनार।
मो पिड मौने छंडि कै जाय चढ़यो गिरनार।।

भक्ति से परिपूर्ण रचनाओं में बारहमासा का चरित्र–चित्रण भी मिलता है, इनका विषय भक्ति है। जिस प्रकार जीव इष्ट तत्व से मिलने के लिए छटपटाता है। इसमें कवि ने प्रभु को प्रियतम माना है, और आत्मा फूलों की सेज बिछाकर चन्दन का लेप करके प्राणपति के लिए प्रतीक्षा कर रही है।

फागुन मास बसंता, धरि–धरि खेत कामनि कंत ।
धरि धरि मंगल चारा सो धण जिनकै संगी भरतारा।।

विरधनि विलशी डोलै, अपनो पति बिन कासो बोले।
निसदिन रहे उदासा, हरि बिन दुरलभ बारह मासा।।

फागण रंग रच्यो सब बन्धू, चौवा चन्दन अन्तर जुगन्धू।
ठाडै भरत धोलै अबीर, किस पर छिड़के बिना रधुवीर।।

अर्थात् प्राचीन जितने भी ग्रन्थ है उन सभी में फागण का चित्रण हुआ है। चगं री तरंग, धूधरां री घमक, ढोलां री ढमाढम नगारा री गूंज, नाचणियां री थरकण, गावणियां री मधरी गायकी आदि का चितराम वर्णन फागण में हुआ है।

इसी परम्परा का निर्वहन यहाँ इस प्रकार हुआ

फागण आयो है सखि, रस सूं भीगी देह।
ढोलो आँगण आवणी, कंचन बरसै मेह।।

प्राचीन परम्परा मे पद्य विधा के अन्तर्गत संस्मरण का विकास सही रूप से नहीं हो सका थोड़ी बहुत याद के तौर पर कुछ बातें याद की गई लेकिन गद्य विधा के अन्तर्गत संस्मरण का विकास हो सका है। प्राचीनकाल से ही अनपढ़ अशिक्षित मजदूर, किसान, आदि साहित्य के समीप नहीं थे। लेकिन अपने–अपने पुराने किस्सों को आपस में सुनाकर वे बड़े प्रेम के साथ अपने कर्मों को करते रहते थे। इसी प्रकार स्त्रियाँ भी तीज, त्यौहार उत्सव, पर्व, मेले के दौरान मिलकर अपने जीवन के रस आनंद से परिपूर्ण किस्सों को सुनाकर आनंदित होती थी। ये मौखिक आनंदानुभूति होती थी। लेकिन आधुनिक समय मे मनुष्य की यादों के साथ कई संस्मरण भी जुड़े हुये है जीवन के मधुर प्रसंग ही सौरभ से सुगधित है ऐसे संस्मरण का क्षेत्र व्यापक और रसानुभूतिजन्य है।

ये एक पल के लिए व्यक्ति में सरसता आनंदता, आत्मीयता, निकटता को बढ़ाती है। मानवीय संवेदना, मधुर मीठी बाते आदर्श जीवन से जुड़ाव लगाव आदि बाते इनके संस्मरण के माध्यम से ही प्रकट होती है।

इसी परम्परा की श्रेणी को बढ़ाते हुये राजस्थान में शोभायमान कवियों नें कई संस्मरण लिखे गये है। जिनमें डॉ. मनोहर शर्मा, डॉ. अमोलकचन्द जांगिड, दामोदर प्रसाद शर्मा, सीताराम महर्षि, किशोर कल्पना कान्त, गोविन्द अग्रवाल आदि समाहित है। जीवन से जुड़े हुये सभी भावों को समेटते हुये कई संस्मरण लिखे गये है इनकी मिठास की अलग ही शोभा है।

षष्ठ–अध्याय

रचनात्मक कार्य की उपलब्धि एवं योगदान 197–225

(अ) सांस्कृतिक मूल्य चेतना

(आ) जीवन दृष्टि की व्यापकता

(इ) पारम्परिक चितंन शैली

(ई) युगबोध का स्वर

(उ) समरसता की महत्ता

(ऊ) मानवतावादी सोच

(ए) इतिहास और संवेदना से प्रेरणा

(ऐ) पर्यावरण पर सोच

षष्ठ–अध्याय

रचनात्मक कार्य की उपलब्धि एवं योगदान

(अ) सांस्कृतिक मूल्य चेतना –

डॉ. उदयवीर शर्मा एक मशाल के समान सभी को प्रेरणा देने वाले ज्योति पुजं के स्वरूप है। जिनके ज्ञान आलोक के सानिध्य में व्यक्ति को असीम आन्नद की अनुभूति होती है। इन्होंने प्रत्येक विषय को स्पर्श करते हुये सभी के हृदय को जीत लिया है, चाहे सामाजिक क्षेत्र हो चाहे राजनीतिक चाहे परम्परा हो या प्रकृति वहीं संस्कृति के मूल्यों को भी इन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से सजीव किया है।

राजस्थानी के लघुकथा संग्रह में इन्होंने धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक दृष्टिकोण के साथ–साथ सांस्कृति मूल्यों में वर्तमान समाज के आम आदमी के मन के भावों का समावेश किया है। इसके अन्तर्गत यर्थाथ चित्रण और प्रगतिशीलता के भी दर्शन होते है इनके विषयों के शीर्षक प्रभावशाली आकर्षक है। साथ ही रोचकता के साथ–साथ इनका प्रभाव भी अनूठा है।

इनकी काव्य रचनाओं में भावप्रधान, उपदेशात्मक, बोधमूलक, व्यगयांत्मक और नीतिकथा जो शिक्षाप्रद है। इनका प्रभावशाली चित्रण हुआ है। इनके काव्य की यही विशेषता है, कि थोड़ी सी बात को बड़े ही सीधे–सादे ढ़ंग से प्रस्तुत कर गहराई के भाव प्रकट करते है।

इन्होंने संस्कृति में प्रतीक अदवो, आखर, ऊंट, करसो, कुची, काचोफल, कमेंडी, गिरज, चिड़ी, कागला, झाड़ी, टीबड़ो, ढाडो, तारा, तावड़ा, दीवा–बाती, दरपण, धरती, पून, पंछी, बीज, भंवरो, भंभूलियों, रोटी, सूरज आदि प्रतीकों का प्रयोग किया है, क्योंकि इन प्रतीको के माध्यम से ही कवि ने समाज के राज का वर्णन किया है।

इसमें 'ठूठं' नामक कथावस्तु के माध्यम से असार संसार की भावना का उल्लेख कि सयाना और ज्ञानी व्यक्ति भी अपनी जीवन यात्रा को चालू रख पाता है। **'पौथी री पीड़ा'** में इन्होंने आम आदमी की पीड़ा को प्रकट किया है। '**निरन्तरता रो मखोल**' में कपटपूर्ण मित्रता पर भी व्यंग्य किया है। '**डोल**' में झूठे समतावाद पर भी व्यंग्य है। '**भंभूलियो**' आधुनिक आवारा, निर्भय भटकते लोगों पर व्यंग्य है। '**जाल रा दरद**' में गति, मति और गुणहीन व्यक्तित्व की दशा का भी चित्रण किया गया है। '**मन रै रस रो टोपो**' जिसमें

विकारी मन का वर्णन है, इसमें यह बताया गया है कि मन बहुत स्वार्थी होता है, जिसके कारण वह एकाग्र न होकर विचलित होता है। इस कारण ही संसार में कोई भी व्यक्ति शांति से नहीं रह सकता है।

इनके काव्य में शेखावाटी बोली की रंगत झलकती है। इसके साथ ही कथा की अभिव्यक्ति सरसता, रोचकता, और संवाद आदि की सार्थकता को भी प्रकट किया गया है। इन्होंने अपने उपन्यास के माध्यम से भी सभी सामाजिक उपन्यास का कथ्य राजस्थानी जन जीवन से जुड़ा हुआ बताया है। जनजीवन की संवेदनशीलता व विविधता इसमें दिखाई देती है। कही शोषण को दर्शाया गया है तो कही बेमेल विवाह की पीड़ा को भी भोगना बताया है। भूख, प्यास, कुण्ठा, प्रताड़ना, उपेक्षा, दहेज की पीड़ा, अज्ञान, अशिक्षा, कुरीतियां आदि को भोगता हुआ व्यक्ति अपने जीवन को जीता है। शिवचन्द भरतिया के उपन्यास '**कनक सुन्दर**' में अशिक्षा व आडम्बर में जकड़े जीवन को भी उभारा गया है। इसके माध्यम से सामाजिक विकृति को भी दर्शाया गया है। इसमें पीड़ा का दंश, पराधीनता, मारवाड़ी समाज की दुर्दशा, शिक्षा का महत्त्व, फिजूल खर्ची, व्यर्थ का दिखावा आदि का भी चित्रण है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने अधिकांश संस्थाओं में महत्त्वपूर्ण पदों पर रहते हुये अपनी निस्वार्थ सेवाएं अर्पित की है। आप अपने निवास स्थान बिसाऊ में हिन्दू–मुस्लिम एकता के प्रतीक माने जाते है। इसलिये दोनों सम्प्रदायों में इनका समान आदर भाव है।

भारतीय साहित्य, संस्कृति, कला एवं इतिहास के प्रति इनका हृदय से जुड़ाव है जिसके फलस्वरूप इनका अधिकांश समय सद्भाव के विकास में व्यतीत हुआ है। इनके हृदय में भी देश भक्ति की पावन धारा सतत प्रवाहमान होती है। इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में बालकों को प्रेरणा हेतु भी आर्थिक सहयोग प्रेरणा, प्रशंसा–पत्र, प्रमाण–पत्र आदि प्रदान किये है।

टीबड़ा –

टीबो बोल्यो, 'भाया बाजर, मरूधर रो जायो तू आप।
तेरै सूं मेरो तन ओपै, तू पीलै मेरो रस धाप।।

ज्यूं सीमा पै खड़यो सिपाही, पी जीवन री चारी घूंट।
धरा रूखालै, करतब पालै, जस फैलावै चारूं कूंट।।

करसो –

धोबा भर–भर धन बांटै, इ धरती माता प्रगटयो हेत ।

पेट कालरा फोड़ां 'इबकै' करसो बोल्यो कर मन चेत ।।

ढाडां –

पडी बैसक्यां बूढी ठाडी, जुरी–ठुरी भूखी सत हीण ।
उण रै झटको मनां लगाये, बाजणदे जीवनरी बीण।।

स्यालै री खेती

सिरसूं फूलै गेहूं झूलै, जौ सरखवै, खेत सुरगं।
पावं जमाया, सीस उठायां, दावो झेलै सगला संग।।

जौ जमाया, रंग लिया सुरंगो, जाणै हो सुबरण रा बीज।
कुदरत–सोनी जड़्या सजीला, जाणै साचै ढालया बीज।।

श्रृंगार –

रास रमै रातड़ली साथै, पूरो चंदो हिरदो खोल।
आमी बरसै, सो जग न्हावै, मन में मुलकै अन्तर–बोल।।

हरी भरी धणमोली चूनड़, धरा ओढ़ रम री रस–राग।
रोम–रोम प्रेमाकुर फूट्या, जड़ जंगम रा जाग्या भाग।।

गरीबी –

खून पसीनो कर दिन तोड़ै, ल्यागो, खणो नित रो काम।
उण ढूढां में क्यों सिर फोडै? दया दिखा क्यूं तो मन थाम।।

टाबर जद रोटी ने कलपै, देख दसा उझलै मां–बाप ।
रुदन करै उण धर रो कण–कण, कुण देखै यो मूक विलाप।।

क्रान्ति–

अहंकार ज्यूं इतरै सूटौ, चंचलता में मन सूं होड।
अपजस ज्यूं फैलै चोफेरो, इनकलाबियो है बेजोड़।।

कोप, जियां खाखंलै सूँटियो, जीबन री ज्यू भरै उफाण।
मोत रूप कुदरत रो धाड़ी, सूटै रा कुण करै बखाण ।।

भंभूलियो–

गिरणी खातो नभ चाल्यो, दो पारयां चढ़ पून बिवाण।
जाणै तपसी तप सागीड़ो, चाल पड़यो मुगती रै ठाण।।

(आ) जीवन दृष्टि की व्यापकता –

बहुमुखी प्रतिभा के धनी, आलोचक वरदा के यशस्वी कुशल संपादक डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने जीवन को साहित्य में समर्पित किया है इन्होंने जीवन और जगत के सामजंस्य के साथ–साथ सामाजिक व्यवहार पर तथा उसके सभी पक्षों पर भी अपनी सशक्त लेखनी चलाई है तथा उसे जीवन्त कर अपनी गहन गम्भीर चेतना का भी परिचय दिया है।

इन्होंने अपनी तीन मुख्य रचनाओं **डाफीं, सूंटों, और मरूधर की महक** से राजस्थान की छवि के रमणीय रूप को प्रस्तुत किया है।

भारतीय कर्मयोग व त्यागमयी भोग संस्कृति के जीवन दर्शन को दर्शाती आपकी मुख्य काव्य रचना राजस्थानी चौपदी मुक्तक काव्य रचना है। इसमें इन्होंने जीवन दृष्टि के प्रति अपने व्यापक दृष्टिकोणों को उजागर किया है। इनकी भावों की सरिता प्रत्येक चौपदी में सहज रूप से प्रवाहित होती है तथा पाठक का ह्रदय भावों से सराबोर कर देती है। इनके काव्य में भावों की संप्रेषणीयता ही इसकी प्रमुख विशेषता मानी गई है। इसमें सभी भाव इतने सूक्ष्म व मर्मस्पर्शी है। इसमें कर्मण्यवादी जीवन की कर्मशीलता, जीवन की गुणवत्ता, जनकल्याणकारी भावना, नीति, उपदेश आदि विभिन्न पक्षों पर अत्यन्त तीव्र पर सहज सरल भावों की अभिव्यक्ति हुई है।

जीवन कितना सुन्दर है तथा जगत की सौन्दर्यता, क्षणभंगुरता व असारता को प्रदर्शित करने वाली चौपदियों का सुन्दर वर्णन इनके काव्य के अन्तर्गत हुआ है

इन्होंने जीवन के व्यापक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये अध्यात्म व नैतिकता से आवंटित होते रहे है। इनके पद उपदेश न लगकर सहजता व सरलता से ह्रदय को स्पर्श कर जाते है।

कण–कण अपणी सुध–बुध भूल्यों, नयो जोश ले नई अकड़।
धन जोबन है चार दिनां रा, ओटा ही मुरझावै प्राण।।

सावण आयो, रस बरसातो, बादल रै मन नयो उफाण।
जबन जोर नदी इतराई, नालो भी अकड़यो कर मान।।

इन्होंने सार्थक प्रतीकों, बिम्बों का अपने काव्य में प्रयोग कर अपनी पारखी व पैनी दृष्टि से अत्यंत ही संवेदनशीलता के साथ माया के जाल, व्यक्ति की अमर होने की अदम्य

इच्छा पर कटाक्ष, आत्मा, परमात्मा, जीव माया, दुख–सुख, तेरा–मेरा जैसे पीड़ादायक भेद, अपने अंहकार का खोखला और गर्वित दिखावा, स्वार्थ, जीवन दर्शन की नीतिगत शिक्षा पर लेखक ने अत्यंत सुन्दर अभिव्यक्ति प्रदान कर अपने काव्य को ऊचाँई के चरम सोपान तक पहुँचाने का प्रयास किया है।

जिनगानी री बाड़ी फूली, तोड़ फूल जग चरण चोढ़।
सुगरता करतो चाल बटाऊ, छेलो यो तन देणो छोड़।।

तेरी सार कमाई री जल, सदा ओपसी जग रै घाट।
मुरझायां तेरा तन फुलड़ा, सोरया सुरै न बिखस्यां खोड़।।

इन्होंने इसी प्रकार सामाजिक जीवन का चित्रण अपने काव्य में किया है, कि किस प्रकार एक व्यक्ति अपनी स्वार्थ की भावना को नहीं त्याग पाता है, और स्वार्थ पूरा करने के लिए मानवता में धर्म को भी भूल जाता है।

सुख रा संगी मिलै मोकळा, दुख रो साथी मिलै न एक।
झुकतै पलड़ै, रा सब सीरी, बिगड़ी लखै न कोई तेक।।

व्यक्ति में युवावस्था के आगमन होते ही जोश के साथ–साथ अंहकार के भी भाव से भर जाता है। वह अपने से बड़ो या गुणीजनों को भी तुच्छ समझने लगता है। लेकिन वह अपने यौवन के मद में यह भूल जाता है कि धन, यौवन और सुन्दरता कुछ समय मात्र की ही चकाचौंध होती है। अंत समय में इन्हें नष्ट होना पड़ता है। जीवन के इस गूढ़ सार तत्व को प्रकृति व प्रतीकों के माध्यम से शर्मा जी ने अत्यंत सहज व सरल तरीके से प्रकट किया है –

कण–कण अपनी सुध–बुध भूल्यों,नयो जोस ले नई अकड़।
धन जोबन है च्यार दिनां रा, ओटा ही मुरझावै प्राण।।

संसार नश्वर है। अंत में सभी वस्तुओं व प्रदार्थों का नष्ट होना एक शाश्वत सत्य है। व्यक्ति अपने वैभव, धन, यौवन सभी का अंहकार कर सकता है, परन्तु सत्य यही है, कि मनुष्य विधना के हाथ की कठपुतली मात्र है। डोर विधाता के हाथ में है। अर्थात्,

ज्यू कठपुतली नाचै–कूदै डोर दिलावणियो है ओर।

अतः अपने जीवन को सार्थक करने व जन्म को सफल बनाने के लिए संसार रूपी सागर को पार करने के लिए व्यक्ति को त्यागपूर्ण सत्य से अपनी जीवन ज्योति जगमग करने की सीख दी गई है।

पुन्न नदी री रसधारा में, ले खलखोटो उजलै पोत।
सत रै मंदर में तन दिवलो, जला जगादे आलम–जोत।।

तप री अगनी में तप प्यारा, कंचर काया बणै निखर।
जिण री चिमक जोत जगती री, धिर ईणी सुधरै कुल गोत।।

मनुष्य का निरन्तर कर्म मार्ग की ओर चलते रहना, सत्य के स्वरूप को स्वीकरना ही कर्म साधना है जिसको लेखक ने भिन्न–भिन्न प्रकार से समझाया है। अपनी कर्म साधना की विभिन्न विधियों में लेखक ने इस काव्य में एक चिन्तक, उपदेशक, मार्ग दर्शक व प्रेरक के रूप में हमारे सामने आये है। डॉ. शर्मा एक कर्म चेतना के प्रबल समर्थक है। इन्होंने भारतीय जीवन की त्यागमयी भोग प्रवृति व कर्म साधना को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप को हमारे सामने प्रकट किया है।

जिनगाणी, रस रो मैलो , पल–पल रस पीवो भरपूर।
रस रो नावां जवानी बाजै, रस सूक्यां अरथी नीदूर।।

पीतो–पीतो चाल बटाऊ, रस पीणौ जिदंगी रो सार।
रीतै धड़िये ने कुण सदरै, फाटयो बस्तर बाजेपूर।।

इनका कर्मयोग सहज व सरल व बेजोड़ है। ऐसा अन्य किसी भी काव्य या किसी भी स्थान पर कुछ भी देखने में नहीं मिलता है। इन्होंने अपने काव्य में त्यागमयी, भोगवृति को इतने सहज रूप से प्रकट कर व्यक्ति को निरन्तर कर्म करते रहने की प्रेरणा दी है।

चालै जिणारौ भाग चालसी, सहजा जिणरौ भाग रूकै।
नदी आपणै पथ बणावै, जोडो सिडण्यो ठौड रूकै।।

चलणौ ही जीवण री संज्ञा, रूकणौ, मरणौ एक समान।
चाल बटाऊ सत रै पथ पै, 'क्यू' जगती नै देख झकै।।

इन्होंने व्यक्ति को सत्य के पथ पर चलने की भी प्रेरणा दी है, जिसके कारण व्यक्ति कर्म में लीन रहकर अपने जीवन व जन्म को सार्थक बना सकता है।

रूकणौ ही आलस री जड़ है, आलस है प्रगति री महें।
चालणियै सूं पंथ उजलौ, बैठणियै रा खोज कठै।।

चलणौ है मंगल रौ दाता, चलणौ है धरती रो सोज।
चलणौ है मिनखै रो मुरतब, चालयां रै राजा रो राज।।

इस प्रकार इनकी एक–एक चौपदी भारतीय संस्कृति की त्यागमयी भोग प्रवृति के आदर्श को विभिन्न रूपों, बिम्बों व उदाहरणों से दर्शाती है, जो परोक्ष, रूप से कर्मण्यवाद को जीवन में उतार कर समरसता की सौरम से जीवन व समाज को सुरभित करती है।

जंगल रै मंगल नै भेट्यो, काट–काट बन करयो सपाट।
परयावरण बिगाड़यो जग रो, मिनख गयो सगलै नै चाट।।

पण मिनख कद निचलो बेठ्यो, बै'रै सिर पर भूत सवार।
सारो सांग बिगड़सी प्यारा, जद पड़सी विपदा री टोल।।

जल को भी जीवन के लिए अति आवश्यक मानते हुये कवि ने उसकी महिमा का गुणगान किया है।

पाणी बिना कणां कुण रै णौ, सै ंरो सदा नीर में सीर।
नीर गया नर नै कुण सदरै, नर रै बिना जगत बे–पीर।।

अतः इस प्रकार उदयवीर जी शर्मा ने अपने काव्य में जीवन को बड़ी गम्भीरता व सरसता के साथ चित्रण किया है। उसके व्यापक क्षेत्रों का सुन्दर भावों के साथ चित्रण किया है, क्योंकि हर क्षेत्र में जीवन मूल्यों का होना और जीवन जीना भी एक कला है।

(इ) पारम्परिक चिंतन शैली –

हमारी भारतीय संस्कृति में परम्परा को महत्त्व दिया जाता है, क्योंकि यहां की मरुभूमि में उसकी विशेषताओं में सुख, शान्ति और आनंद दायक कार्यों के साथ राजस्थान की गौरव, गरिमा का भी हार्दिक उल्लेख है। वहीं सृष्टि का निर्माण विधाता ने बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है। सृष्टि में गुण व दोषों का समावेश है, इसलिए विस्मयकारी, विरोधाभासी वृतियों का संगम है। मानव के सामाजिक जीवन के ऊषाकाल में ही हमारें मनीषियों ने मन की इन परस्पर विरोधी प्रवृतियों को पहचानकर अपने अनुभव, चितंन, मनन

से करणीय–अकरणीय आचरण की पथ–प्रदर्शन सार्वकालिक सार्वजनिक और सार्वमागंलिक आचार संहिता प्रस्तुत की है।

इसी शृंखला में परम्परा की चिंतन शैली में नीति साहित्य को भी महत्त्व प्रदान किया गया है। नीति साहित्य की यह पावन परम्परा संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश से होती हुई राजस्थानी में भी प्रवाहित रही है। इसमें वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक आदि क्षेत्रों के व्यवहारिक सूत्र गुंफित हुए है।

नीतिकारों ने अपने अपनत्व का अमृत उड़ेलते हुए अपने प्रिय पात्र को स्नेह से सजे सम्बोधन से सम्बोधित कर ऐसी सुन्दर नवीन शैली की नींव डाली है, जो सृजन के क्षेत्र में मानवीय है। इसी परम्परा में राजिया, आदिया, इन्द्रवा, ईलिया, कालिया, गोरिया, गोंवदिया, चकरिया, छोटिया, जोधिया, दयारमा, दापुका, नाथिया, नोजला, प्रेमजी, फूसिया, बावला, भानिया, भेरिया इत्यादि को सम्बोधित करके परम्परा का निर्वाह किया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति से कुछ समय पूर्व तक तो इस सम्बोधन काव्य परम्परा को आचरण विषयक परम्परित विषय ही विभूषित करते रहे, परन्तु इसके पश्चात यकायक उभरी भौतिकता एवं तज्यन्यता स्वार्थ परायण उच्छृंखल आचरणता तथा परिवेश की विकृतियों ने कवियों के स्वरों में इस परम्परा का निर्वहन किया है।

परम्परित विषयों के अतिरिक्त कवि ने इसको प्रकृति, संस्कृति, पर्यावरण प्रदूषण आदि नवीन विषयों का समावेश कर इसे भौतिक, युगापेक्षी स्वरूप दिया है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपनी इस रचना के हर शतक के प्रारम्भ में मंगलाचरण प्रस्तुत कर फिर विषय प्रतिपादित किया है। इस तरह हमें इसमें परम्परा एवं नवीनता का सर्वत्र शैलीगत–समन्वय भी दृष्टिगोचर होता है।

डॉ. शर्मा का प्रथम शतक का मूल स्वर **जय जवान, जय किसान** है।

इसमें कृषक जीवन की गाथा लालबहादुर शास्त्री का यह विजय घोष इस शतक की संरचना का प्रेरणा स्त्रोत है।

वीर जवान हमारे राष्ट्र का सुरक्षा–प्रहरी है वह अपना सर्वस्व समर्पण कर हमारी रक्षा करता है।

सूर हरै संताप, खुद रौ जीवन खोय कै ।
ओटै पर–दुख आप, मरतो–मरतो, मोलका ।। 01।।

इसी परम्परा में वीर–वसुंधरा राजस्थान के शूरवीरों ने अपनी रक्त–मसि से वीरता का सजीला इतिहास लिखा। वह संसार भर में अद्वितीय है। इससे राजस्थानी साहित्य वीर–रस का पर्याय ही बन गया।

धरती जल आकास, भिड़–भिड़ जोधा भड़क रया ।
मिटै न जुध री प्यास, मौत मचल री, मोलका।। 16।।

यहां की भारतभूमि के वीरों ने कालरूप धारण करके शत्रु का संहार कर विजयश्री का वरण किया।

रंग रै भारत वीर, धर राखी, राखी धजा।
धन–धन तेरो धीर, मसलयो अरि दल मोलका।।

सूरा देस समभाल, मायं खुल्या धाण मोरचा।
जुलमी गूथै जाल, माया ताणी मोलका   ।।

इस कृषि प्रधान देश में किसान का महत्त्व भी कम नहीं है वह कर्म–धर्म का दूत है यह खेतों का वीर कर्मठता की शान है। वह अन्नदाता और समृद्धि प्रदाता है। वीर जवान शत्रुओं को खदेड़ता है, तो वीर किसान भूख भगाता है सचमुच दोनों ही देश के भाग्य विधाता है।

करसै रा सुभ काम, जीवण–जोत जगावणां ।
थरपै, कीरत–थाम, मन री मोजां, मोलका ।। 132।।

देस–दुनी री रीड, मीनंत री मूरत सजल।
नामी, नेही–नीड, करसो, लूंठों मोलका ।।

सांचो भारत–रूप, गावँ खेत ढाण्यां बसै ।
लोक–हियै रो भूप, करसो समरथ, मोलका।। 170।।

जन–गंगा री राग, खेत–खळां में गूंज री।
सै रो भाग सुभाग, जुड़यो खळां सू मोलका।। 171।।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपनी पारम्परिक रीति संस्कृति का ध्यान रखते हुये राजस्थान की ऋतुओं को रंगों के माध्यम से सजाया है।

अनूठी रंगत है भारतवर्ष के हृदय प्रदेश इस राजस्थान की अनूठी प्रकृति की यहाँ एक ओर लहरदार रेत का संमदर है, तो दूसरी ओर उतंग आबू है। इस मरूधरा की अलकापुरी धरती और आसमान के बीच 'तीसरा लोक'। इस कारण यहां की मिट्टी की सौंधी महक भी सबसे निराली मानी जाती है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने तीनो ऋतुओं का वर्णन बड़े निराले ढंग से किया है।

ग्रीष्म –

लूआं बरसै लाय, टीबां सूं झल नीसरै।
छीयां छिपगी जाय, मरणै सूं डर मोलका ।। 4।।

आंधी और भंभूल, मरू मांटी में मचलिया।
लूआं तीखी सूळ, मारै तीनूं मोलका ।। 21।।

वर्षा –

चौमासै रो चाव, च्यारूं कानी चिमकरयो ।
खेत–गुवाड़ी–गांव, मस्ती छाणै मोलको ।। 30।।

धटाटोप धरड़ाट, आरयौ अंबर आफरो ।
पल में पाटू–पाट–मरूथल हुयसी मोलका ।। 49।।

शीत–

ठंड़ी चालै भाल, कांपै पळ–पळ कालजो।
जाणै 'आगो काल, मावठ रै मिस मोलका।। 101।।

भावां रो संसार, अजब अनोखो अण तुल्यों।
स्यालै रा सिंणगार, आग लगावै , मोलका ।। 108।।

इसी परम्परा में इन्होंने सांस्कृतिक सम्पदा व स्वरूप का सुन्दर चित्रण अपने शब्दों के माध्यम से किया है। इन्होंने टीबें, शमी, त्योंहार व महापुरुषों के जीवन की सुन्दर विवेचना की है। इन्होंने कहा है कि पौराणिक सुमेरू तो एक है, परन्तु इस मरुधरा पर पीताभ रजकण निर्मित टीबे रूप सुमेरू पग–पग पर सुशोभित होते है।

के टीबो के ढेर, सोनै रो, यो सोवणो ।

मन सूं' दियो बखेर, मरूथरपणियो मोलका।। 01।

सुबरण बरणो रूप, मिनखां रो मन मोवणो।
अद्‌भुत धणो अनूप, मरूधर माडंण मोलका ।। 02।।

इन्होंने सरस्वती के तटों को सुशोभित करने वाली ऋषि आश्रमों में वैदिक ऋचाओं की गूजं को भी अपने काव्य में समाहित कर सुन्दर भावों की सृष्टि की है। साथ ही इन्होंने उनके यज्ञों की पावन समिधा शमी (खेजड़ी) को माना है। जो आज भी मरूधरा की शोभा बनकर खड़ी हुई है।

मरूधर रो तूं मान, करसै री तूं कामना।
कुदरत रो तूं गान, खेतां रो जस, मोलका ।। 51।।

रंग रौनक, संस्कृति, सभ्यता प्रेम, आनंद, हर्ष इन सभी का पर्याय है। राजस्थान क्योंकि यहाँ इन्द्रधनुषीय छवि उफनती उमंगो के भिन्न–भिन्न त्योंहारों में अभिव्यक्त होती है।

तीज–

तीज्यां रो त्यूहारं, प्यार भरी रस पोटली।
तीजणियां हो त्यार, मद छक पीवै मोलका ।। 86।।

राखी–

उजलो–निरमल प्रेम, राखी डौरै सू बंध्यो।
पून–पवित्तर नेम, देव–धरा रो मोलका।। 89।।

होली–

चढै चाव रो, चंग, दुनिया दीखै दीपती।
होली रो हुडदंग, मोद–समन्दर, मोलका।। 94।।

दीवाली–

ज्ञान–करम में लीन, दीवाली रा दीवला।
करै जगत तम–हीन, सतरा साधक, मोलका।। 92।।

इसी श्रृंखला में कवि ने महापुरुषों के चरित्र को हमारे सामने काव्य के माध्यम से उकेरा है, जो सभी के हृदय पर एक अमिट छाप छोड़ता है। जिनमें दधीची, राम, हरिश्चन्द्र, अर्जुन, गाँधी नेहरू इनके जीवन के कर्म व लक्ष्यों व इनके उच्च आदर्शों को हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

इन्होंने अपने **चतुर्थ शतक** में पश्चिमी संस्कृति को हमारें लिए घातक बताते हुए कहा कि पश्चिम से आयातित भौतिकता प्रधान, 'अपसंस्कृति' ने हमारे देश को दबोच कर हमारे भौतिक सामाजिक–सांस्कृतिक क्षेत्रों को प्रदूषित कर दिया है। अपनी भौतिक समपन्नता के लिए मनुष्य बड़ा ही स्वार्थी हो गया है। उसने पर्यावरण में पेड़ो को काटकर जीवन को बड़े संकट में डाल दिया है। पुरुष की इस पैशाचिक पिपासा के कारण हमारा सामाजिक सांस्कृतिक ताना–बाना तार–तार हो गया है। हमारे तथाकथित सभ्य, समाज की समाज द्रोही गतिविधियों से वर्तमान सामाजिक परिवेश भी बदरंग बन गया है। हमारी परम्परा की जो मान्यताएं है, वह विकलांग हो गई है, और आस्थाएं बौनी हो गई है।

हर तरफ केवल एक दिखावटी मुखौटा शेष रह गया है। हर तरफ अर्थ लिप्साओं का उन्माद है। वहीं राजनीतिक षडयंत्रों का चक्रव्यूह भी रचा जाता है। सभी अपने–अपने स्वार्थ व हित पूर्ति हेतु अपनी– अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए इस अंधी दौड़ में भागने लगते है। इसी कारण चारों तरफ लूट पाट, बलात्कार, कालाबाजारी, अनैतिकता आदि इन कृत्यों की धमाचौकड़ी मची हुई है।

राजनीतिक अनैतिकता–

राजनीति रा सांड, गावां–नगरां विचर रया।
करै कुकरनी कांड, राज, रोलगट, मोलका ।। 4।।

नेता धोला नाग, मन कालो तन मोवणौ।
रूळगी जीवन–राग, या आजादी, मोलका ।। 61।।

वोटां रौ व्यौपार, चाल्यो चोखो चाव सूं।
श्रेद खुल्यौ जद भार, माथै मंडियौ, मोलका।। 10।।

पूंजी–प्रेम

पीसै रो परसाद, अणसरिया कारज सरै।
थोथा सगला 'वाद', माया मोटी, मोलका ।। 37।।

पीसौ जीवण–प्राण, चमड़ी सूं दमड़ी भली।
जग चौधर ई पाण, धोंटो धूमै, मोंलका ।। 53।।

अभाव और भूखमरी –

आभै अडया अभाव, भरया पेट फिर–फिर श्रै।
आजादी रौ चाव, माडो पड़यो, मोलका ।। 24।।

अठै बिलख री भूख, धापै गिट–गिट गंडकड़ा।
लाज लूहीजै कूख, काज आधरौ, मोलका ।। 25।।

नारी प्रताड़ना –

मिनखा जूण रो बीज, नारी रै औदर फलै।
दुरगत झेलै खीज, अबला बाजै, मोलका ।। 66।।

कवि ने वर्तमान युग में पल–पल बदलते हुये मानव मन की वृतियों को वाणी देते हुये कहा है कि

मन रै हाथ लगाम, तन–रथ पर बुध–सारथी।
दोड़ै घोड़ा काम, विषयां रै पथ, मोलका ।। 50।।

संसारी – सनमन्ध, पीसै आगै पातला ।
ओ कूणो पण अंध, मतना झांको, मोलका ।। 75।।

टीप–टाप री टेम, गुण भाज्यौ निज गावड़ै ।
छल सूं पूछै छेम, मन–पट खुलै न, मोलका ।। 33।।

इनके अगले शतक में इन्होंने मनुष्य को मनसा–वाचा–कर्मणा सें शुद्ध आचरण अपनाने की ओर इशारा किया है। मनुष्य को अपनी कुत्सित मनोवृतियों पर अंकुश लगाने की प्रेरणा देते हुये कहा है, कि हमें अंहकार के भाव को त्यागते हुये लोक कल्यांण की भावना संजोनी चाहिए। **'बहुजन हिताय'** को ध्यान में रखते हुये सभी के हित व परोपकार के भाव को हृदय में समाहित कर उदारता को प्रकट करना चाहिए।

मत ना सोवो मीत, जाग्यां जीवन जगमगै।
जागणियां री जीत, मानो निश्चे मोलका ।। 3।।

गयान भीख अर राम, ''मैं तजियां आवै सरज'' ।
करड़ा कलझै काम, मैं सिर नाच्यां मोलका ।। 11।।

सदाचार रो साथ, साचों जीवन–सारथी।
माया थाम्यौ हाथ, मुड़–मुड़ योगो मोलका ।। 06।।

अतः उदयवीर शर्मा ने अपनी परम्परा को ध्यान में रखते हुये अपनी स्वयं की अनुभूतियों को इसमें समाहित कर हमें एक नवीन प्रेरणा प्रदान की है। हमें अपने लक्ष्य के चरम सोपान तक पहुचांकर हमारे विचारों को भी दृढ़ संकल्प तक पहुंचाता है।

(ई) युगबोध का स्वर –

डॉ. उदयवीर शर्मा के राजस्थानी काव्य धारा के अन्तर्गत युगबोध का स्वर उभर कर हमारे सामने आया है। इन्होंने राष्ट्रीय भाव से प्रेरित होकर सामयिक चेतना और राष्ट्रभक्ति की प्रशंसा अपने काव्य में की है। बढ़ती जनसंख्या, कटते वन, घटते पशु पक्षी, निर्धनता, अभावग्रस्त जीवन और संत्रस्त जीवन को उद्‌घाटित किया है। अपने काव्य में इसका सजीव चित्रण करके इन्होंने भ्रष्ट राजनीतिक विचारधारा, आसोन्मुख जीवन मूल्यों पर सटीक व्यग्यं भी किया है। इसी प्रकार कवि राष्ट्रीय समस्याओं और उनके समाधान के प्रति भी पूरी तरह सचेत है तथा इन्होने राष्ट्र व समाज को भी भविष्य के प्रति सावधान रहने के लिए कहा है। पूर्व प्रधानमंत्री स्व. श्री लालबहादुर शास्त्री द्वारा दिये गये नारे **जय जवान जय किसान** से प्रेरित हो कवि ने काव्य के आरम्भ में जवान और किसान दोनों को समान महत्त्व बताते हुये गुणगान किया है । जवान जो कि राष्ट्र की सुरक्षा में अपनी अहम् भूमिका का निर्वहन करता है वहीं किसान सभी के पालन पोषण और राष्ट्र के विकास में सहायक है।

राजस्थानी में वीर काव्य ओजता और जोश के साथ उमड़ पड़ता है इसमें डिंगल साहित्य के माध्यम से बलिदान और युद्धवर्णन की गाथा भरी पड़ी है जिसका अनुपम चित्रण यहाँ की भूमि में दिखाई देता है।

हुसंर हुसंर कै बार, घुमड़, घुमड़ कै घेरणो ।
लपक लपक दे मार, वीर मांचरयो, मोलका ।।

सूसांवै सरणाट, सरण बट्‌ट गोळया चलै।
गोळा रो गरणाट, वीर उपाड़ै मोलका ।।

तूंतावै ज्यूं तांत, सरण बट्‌ट हो गोळियां।
अरि री काढ़ै आंत, मौत बिचरगी मोलका ।।

भारत में वीरों ने अपनी आन–बान मर्यादा के लिए अपने प्राणों तक का उत्सर्ग कर दिया। इसलिये इसे स्वर्ग की उपमा भी दी गई है क्योंकि इनके पवित्र, निश्छल देश प्रेम त्याग में भी सभी को एक प्रेरणा प्रदान की गई है।

भारत भट की खाण, जग जाणै जोधा जबर।
पुरखां तणी पिछाण, इबलग गूले मोलका ।।

सीस पड़यो जद बोल, जय जननी, जय भारती।
जोस चढ़यो अणतोल, मुड़ मुड़ मारया मोलका।।

परहित आवै काम, स्वास्थ तज पालै बिरद।
सिर दे राखै नाम, बीरां रा गुण, मोलका।।

कीरत रा कमटाण, सत रा साधक सूरमा।
पल में देवै प्राण, देस धरम हित मोलका।।

कहीं–कहीं पर अपने काव्य में कवि ने किसान के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए उसे वीरों से भी श्रेष्ठ माना है। श्रेष्ठ मानते हुये कहा है, कि वह बड़े परिश्रम से तन और मन लगाकर फसल रूपी फल प्राप्त करता है बिना रुके अपने कर्म को त्याग, लगन, तप से निरन्तर करते रहता है, और संसार को अन्न–धन समृद्धि देता है।

करसै रा सुभ काम, जीवन जोत जगावणा।
थरपै कीरत थाम, मन री मोजां मोलका।।

तपै सेल संताप, मस्ती बाटै मुलकतो।
अणथक रीझै धाप, मौजी करसो मोलका।।

मन में बसियो खेत, खेतां में मनडो रमै।
एक भाव रो हेत, साधै करसो, मोलका।।

किसान और जवान में एकरूपता दर्शाते हुये डॉ. उदयवीर शर्मा कहते है, कि जवान जोश से सीमा पर शत्रु से लड़ता है, उसी प्रकार किसान भी खेत में 'भूख' से युद्ध करता है।

अरी भगावै वीर, भूख भगावे कृसक भट।
दोन्यूं मिल तकदीर, लिखे देस की, मोलका।।

जातिपांति के भेद—भाव के कारण हमारे भारत का भविष्य अंधकार में जा रहा है, क्योंकि यह सोच व्यक्ति को ऊँचे पहुँचने के बजाय नीचे की ओर धकेल रही है।

दिल में लाग्या दाग, जात—पात, धन धरम रा।
कुण करसी बेदाग, भारत—माता मोलका ।।

वहीं आज समाज में अर्थ को ही विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है चारो ओर व्यक्ति की भावनाएं अदृश्य होती जा रही है, केवल स्वार्थ ही बच गया है।

पीसै रो परसाद, अणसरिया कारज सरै।
थोथा सगला वाद, माया मोटी मोलका।।

वहीं देश के स्वार्थी नेताओं पर भी व्यग्यं करते हुये उनकी मानसिकता को बताया है कि वह किस प्रकार अपना खजाना भरने के लिए एक गरीब को किस तरह लाचार व बेबस बनने पर मजबूर कर देते है।

नेता धोला नाग, मन कालो तन मोवणो।
रूलगी जीवन—राग, या आजादी मोलका।।

आज का मनुष्य ह्रदय की भावनाओं से दूर होता जा रहा है। वह धीरे—धीरे आपसी प्रेम, स्नेह को त्यागकर स्वार्थ, ईर्ष्या द्वेष, को अपने ह्रदय में तेजी से स्थान देता जा रहा है, जिससे वे सभी अपनों से समीप होने के बजाय दूर होते जा रहे है।

मिली भींत सू भींत, छत मिल्योड़ी छात सूं।
मन रै मन री भींत, आड़ी आंरी, मोलका।।

वहीं बढ़ती जनसंख्या के कारण और वृक्षों की अंधाधुंध कटाई के कारण भारत के सामने कई समस्याएं आती ंजा रही है।

आवै कद ओंसाण, देख देस री दीवली।
खान पान अर ठाण, मिलना मुसकल, मोलका।।

कटै धड़ाधड़ पेड़ मिनख—लोभ डूगरं चढ़यो।
कुदरत सूं कर छेड़, कुण सुख पासी मोलका।।

हमारा शरीर नश्वर है। समय का चक्र धीरे–धीरे आगे ही बढ़ता जा रहा है, जो हमें व हमारी आयु को पल–पल क्षीण करता जा रहा है, जिसे रोकना कठिन है।

रैण दिवस ज्यूं बूंदे तन–घट भरियो उमर जल ।
मूदे सकै तो मूंदे, रिस–रिस रितै, मोलका।।

यह संसार क्षणभंगुर है। धर्म को ही सत्य व सर्वोपरि माना गया है, क्योकि इसी मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति सफल हो सकता है।

धरम सत्य रो सार, दौलत सुख भी देखियों।
सारहीण संसार, थिर कोई ना मोलका।।

सत्य धरम रो मूल, सत जगमग संसार में।
सत निकलयां सै धूल, सत–पथ चालो मोलका।।

संसार की नश्वरता को ध्यान में रखते हुये कवि ने सभी त्यागमयी प्रवृति को अपनाकर जन सेवा करना ही सच्ची साधना मानी है, क्योंकि इसी से परोपकार, पुण्य, धर्म साधना सभी पूरी हो सकती है।

तत्व भाव है त्याग श्रम री राखो साधना।
पांखड नै परित्याग, जन–सेवा कर, मोलका।।

ऋण को कवि ने संसार में भंयकर रोग के समान माना है क्योंकि इससे मनुष्य का जीवित होना भी मृत्यु के समान दूभर हो जाता है। वह इसे चुकाने की चिन्ता में दिन–प्रतिदिन दुर्बल होता जाता है वह इसे चुकाने के कारण तनाव के कारण मृत्यु की ओर अग्रसर होता जाता है।

मांगत बुरी बलाय, तन पर बचे न चामड़ी ।
जीवतड़ा धुण खाय, राखो दूरां, मोलका।।

मागंत पाजी रोग, बधणो जिस दिन बेल ज्यूं।
लागयां पीछै लोग, मरै न जीवै, मोलका।।

वहीं यौवन को क्षणभंगुर मानते हुये कहा है कि फूल खिलते है, तथा कुछ समय बाद झड़ जाते है। वहीं यौवन भी कुछ समय का ही आकर्षण है, इसलिए मनुष्य को उस पर गर्व करके ईश्वर को नहीं भूलना चाहिए।

फूलां नै तो देख, मन में अकड़ै के मिनख।
झलके सुन्दर भेख, मुलकै दो दिन, मोलका।।

मेहनत करने वाले मजदूर और रौब दर्शाने वाले मालिक पूंजीपतियों पर भी व्यग्यं किया गया है कि वह किस प्रकार उनका शोषण करता है, और उसे उसकी मेहनत भी नहीं देता है।

मुख मुरझयों दम धूर, भीतर मिलगो भूख सूं ।
मरग्या म्है मजदूर, मोटा फूलै, मोलका।।

अपने नीति काव्य के अन्तर्गत इन्होंने प्रेम, को दूध, धी और पवन के समान शुद्ध होना बताया है। जिस प्रकार ये शुद्ध होकर स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होते है, उसी प्रकार प्रेम के द्वारा हम बिगड़े टूटे रिश्तों को घनिष्ठ बनाने में सहायक हो सकते है।

प्रेम, दूध, धुत, पूण, सुद्ध, रह्या मन मोलका ।
बिगड़यां बिगड़ै जूण, मोल घटै नित मोलका।।

क्रोध पर व्यक्ति को सदैव अंकुश रखना चाहिए क्योंकि कभी–कभी क्रोध आवेश के कारण वह अर्थ का अनर्थ कर बैठता है तथा बाद में उसे पछताना पड़ता है। क्योकि क्रोध विवेके को नष्ट कर व्यक्ति को पतन की ओर ले जाता है।

कांपै धूजै बोल, क्रोध चढ़ै जद कालजै ।
तन नी र वै अडोल, क्रोध बावलो, मोलका।।

होनहार बलवान होती है, इसलिये व्यक्ति को दु:ख में रोना नही चाहिए क्योंकि उस समय केवल धैर्य रखकर अच्छे समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए।

होणी हो सो होय, ई रै आगै के रो जोर।
रोय–रोय क्यूं रोय, आंथै, आगै मोलका ।।

(उ) समरसता की महत्ता –

बहुमुखी प्रतिभा के धनी, विख्यात साहित्यकार वरिष्ठ लेखक डॉ. उदयवीर शर्मा आधी शताब्दी से भी अधिक समय से साहित्य सेवा को समर्पित है जीवन और जगत के साथ सामाजिक व्यवहार के सभी पक्षों पर आपने अपनी सशक्त लेखनी चला कर उन्हें जीवन्त कर दिया है। इन्होंने तीन प्रकृति काव्य, सम्बोधन और प्रशस्ति काव्य के साथ कई

अनुदित काव्य ग्रन्थों की रचना की है, जो आपके विशद् ज्ञान, शब्द संयोजन संचालन और काव्यात्मक गतिशीलता के साक्षी है। इन्होंने कई लघुकथायें, संस्मरण, ललित निबंध, एकांकी आदि लिखे जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है।

भारतीय कर्मयोग व त्यागमयी भोग संस्कृति के जीवन दर्शन को दर्शाने वाले इनके काव्य है। इनके काव्य में भावों की संप्रेषणीयता है। कर्मण्यवादी जीवन की कर्मशीलता जीवन की गुणवत्ता, जनकल्याणकारी भावना, नीति उपदेश, पर्यावरण आदि विभिन्न पक्षों पर अत्यंत तीव्र परन्तु सहज सरल भावों की अभिव्यक्ति बहुत सराहनीय है।

इन्होंने जीवन और संसार की क्षणभंगुरता का दर्शन करवाने वाली चौपाईयों की रचना की है जो सहज और सरल ह्रदय में उतर जाती है। इसी प्रकार कई सार्थक प्रतीकों और पैनी दृष्टि से अत्यंत ही संवेदनशीलता के साथ माया जाल, व्यक्ति की अमर होने की अदम्य इच्छा पर कटाक्ष, आत्मा–परमात्मा, जीव, माया, दुःख–सुख, अपने अंह का खोखला और गर्वित दिखावा, स्वार्थ, जीवन दर्शन आदि विषयों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।

तेरी सार कमाई रो जल, सदा ओपसी जगरै घाट।
मुरझायां तेरा तन फुलड़ा, सोरया सुरै न निख्रयां खोड़।।

जिनगानी री बाड़ी फूली, तोड़ फूल जग चरणा चोर।
सुरगत करतो चाल बटाऊ, छैलो यो तन देणो छोड़।।

इसी प्रकार सांसारिक और सामाजिक जीव व व्यवहार व्यक्तियों की स्वार्थ–परकता को दर्शाता है।

जगत हाट पै लूट मची जद, धक्कम पेली धामा कूट।
पाप पुन्य अर दुखड़ा–सुखड़ा जस–अपजस सो लेगा लूट ।।

जैसे ही यौवनावस्था आती है, व्यक्ति अपने अहंकार के कारण अपनी अकड़ में किसी को कुछ नहीं समझता है। वह अपने अहं के भाव में भूल जाता है कि यह शरीर कुछ समय मात्र का है जिसे अंत में नष्ट होना निश्चित है। जीवन के इस गूढ़ सारतत्व को प्रकृति के माध्यम व प्रतीकों द्वारा अत्यंत सहजता से प्रकट किया है।

दरपण में मुख देख जवानी, रीझै पल–पल घणी–घणी।
मळ–मळ न्हावै सजै संवारै, नित की घूमै बणीठणी ।।

शर्मा जी ने माना है कि मनुष्य का सदैव कर्म में लिप्त रहना, सत्य को स्वीकार करना ही कर्म साधना है। साथ ही इन्होंने प्राकृतिक सौन्दर्य, सांसारिक सौन्दर्य, और समसामयिक विषयों के प्रति भी पूर्णतः जागरूक विषय कोई भी रहा हो पर भारतीय जीवन की त्यागमयी भोग प्रवृति व कर्म साधना के प्रत्यक्ष व परोक्ष चेतन व अचेतन रूप हमारे सामने सभी जगह विद्यमान है।

अपने लोभी, स्वार्थी प्रवृति के वशीभूत होकर मनुष्य धरती, वन, जल, पवन वृक्ष इन सब का दोहन और शोषण करके भविष्य को संकट में डाल रहा है। अतः कवि ने इस सर्वनाश को रोकने के लिये समरसता व संतुलन का संदेश दिया है।

समरसता आणंद री दाता, समरसता जगती रो रूप ।
समरसता में आओ मुलकै, समरसता सूं धरा अनूप ।।

समरसता राखो जीवण में, ध्यान–ग्यान रो साचो सार ।
कुदरत री काया में देखों, समरसता रौ दिव्य सरूप ।।

जब व्यक्ति अपने सभी भोगों को भोगकर ईश्वर की आराधना सच्चे मन से जब करने लग जाता है तो उसे उन सांसारिक या भौतिक आकर्षणों से ज्यादा सभी के प्रति समरसता में ही सच्चे आनंद की अनुभूति होती है।

निरख–निरख कुदरत री काया, परख–परख जगत रो मोल।
मुलक–मुलक नित सेवा करतो, तोल–तोल मनड़ै नै तोल।।

इस चौपाई में सम्पूर्ण जीवन दर्शन का सुन्दर रूप समाया हुआ है लोक व्यवहार में जितनी भी प्रयुक्त होने वाली लोकोक्तियाँ, नीतिपरक सूक्तियाँ, उपदेश, शिक्षा आदि इतने गहरे भावों से प्रेरित होती है कि सीधी अपने मर्म को छूने वाली होती है। इस समरसता के भाव को सभी मनुष्यों को अपने अर्न्तमन में गहराई से उतारना चाहिये, ताकि व्यक्ति का जीवन समाज में समरसता, सरसता, संतोष व संतुष्टि प्राप्त करते हुये सद्कर्म करके सद्गति को प्राप्त हो। प्रकृति परिवेश की 'डांफी', 'सूँटो' इन दो लालित्यपूर्ण रचनाओं की विचार भूमि इन काव्यों की अपनी ऐसी खासियत है जो कवि के प्रगतिवादी रूझान को स्पष्ट करती है। यहाँ डॉ. उदयवीर शर्मा ने 'समानता' के माध्यम से 'समरसता' की बात कही है। यहाँ कवि जीवन को जीता भी है, तो बेहतर जीवन की ठोस सम्भावना के लिये मानवीय धरातल का समर्थन भी करता है।

कवि की विषमता में एक तिलमिलाहट उभर कर हमारे सामने आती है। वे किसी के समक्ष, प्रदर्शन की भावना को प्रकट नहीं करना चाहते है। उनकी समझ व उनका अनुभव ही सभी को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए तत्पर है। उन्होंने अपने अनुभवों को अपनी लेखनी के माध्यम से उतारा है।

(ऊ) मानवतावादी सोच –

डॉ. उदयवीर शर्मा का व्यक्तित्व और चरित्र उनके पूरे जीवन भर की कड़ी साधना को दर्शाता है। आपकी जीवन यात्रा आपके जीवन के मूल्य और आदर्शों को दर्शाती है। आपकी जीवन यात्रा और वृद्धावस्था के दौरान आपके जीवन के मूल्य और आदर्शों को देखकर लगता है कि आप सभी के लिये श्रद्धा के सर्वश्रेष्ठ पात्र है। आपने सम्पूर्ण व्यक्तियों के साथ व्यवहार कुशलता व सरल श्रेष्ठ संस्कारों द्वारा निरन्तर साधना का परचम फहराया है। आपने अपने कई प्रमुख विषयों को लेकर साहित्य की रचना की। आप बिना किसी स्वार्थ के परोपकारी हृदय के साथ अपने कर्म में लीन रहे आपका व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन आदर्शमय एवं अनुकरणीय है। आपका सौम्य व निश्छल स्वभाव और विनम्र एवं शिष्ट व्यवहार आपके हृदय की विशाल ता का परिचायक है। इनके प्रगति में प्रेरक जीवन के कई उद्देश्य रहे हैं। इनके जीवन के यह महत्त्वपूर्ण सूत्र है।

स्वावलम्बी बनकर अपने जीवन को जीते हुए जीवन यात्रा में आगे बढ़ना। जीवन निर्माण में उपयोगी उच्च शिक्षा को प्राप्त करते हुये आगे बढ़ना। इसके साथ ही शिक्षा और साहित्य के माध्यम से समाज व देश की सेवा करना। डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने समर्पित भाव से साधना की और अपने संकल्पों की प्राप्ति में सम्पूर्ण सफलता प्राप्त की। आत्मश्लाघा से ये सर्वथा दूर रहे हैं, तथा ये सच्चे कर्मयोगी है। इनको अपनी ग्रामीण संस्कृति से स्फूर्ति, उर्जा और प्रेरणा मिलती रही है, जहां आज भी विषमता, भेदभाव अत्याचार, अनाचार आपा–धापी और चारों ओर अपराध कर्म है। इनके विचार इन सब बुराईयों को जड़ से मिटाने के लिए है। सामाजिक दायित्व के साथ–साथ ये मनुष्यत्व के समर्थक है। आपका आशावादी दृष्टिकोण इस बात को मानकर चलता है, कि मनुष्य अपराजेय है, परिस्थितियों और चुनौतिया तो इसकी परीक्षा की घड़ी है, तो काव्य–र्सजन मानवीय मूल्यों का स्फुरण है। आपको ग्रामीण परिवेश से प्रेम है।

इन्होंने अपनी काव्य रचनाओं में अपनी विचारधारा को आज के युग–यर्थाथ के परिपेक्ष्य में विस्तार से प्रकट किया है। इनके सोरठे अपने समय के व्यापक परिवेश से जुड़े हुये है। इन्होंने अपने सोरठों में जीवन मूल्यों के विघटन, सांस्कृतिक, अराजकता एवं

आपा–धापी से जुड़ी स्थितयों नैतिक पतन और व्यक्ति के व्यक्तित्व की साख का यर्थाथ चित्रण किया है। इनके काव्य में यर्थाथ चित्रण के साथ–साथ एक खास बात यह भी है कि कवि में मानवीय मूल्यों की गिरावट के प्रति तीखा आक्रोश भी दिखाई देता है।

इन्होंने इसी तरह सामाजिक कुरीतियों पर भी व्यंग्य प्रहार करते हुये मार्मिक पक्तियाँ लिखी है। 'डाकी बण्यो दहेज', 'मोसी बिल्ली' 'चिड़कल्या' आपके सहज स्वभाव को देखकर ही समाज में श्रेष्ठ संस्कारों का निर्माण हो रहा है। इन्होंने पाखण्ड और दिखावे का विरोध किया है। आचरण की पवित्रता पर इन्होंने बल दिया है। इन्होंने एक मनुष्य के नाते इसी विचार पर बल दिया है, कि व्यक्ति को सदैव लोककल्याण की भावना के साथ अपने कर्म में लीन रहना चाहिए। इनके अनुसार सत्कर्मशील व्यक्ति ही समाज को सब कुछ दे सकता है। इसी मानवतावादी सोच से सरोकार शर्मा जी ने अपने काव्य में इस विषय पर चर्चा की है। इन्होंने अपने जीवन रचनाओं को **सर्वजन हिताय – सर्वजन सुखाय** की मंगलमयी भावना को आत्मसात, करते हुये अर्थवान बनाने की सम्पूर्ण कोशिश की और इन्होने इसमें सफलता भी प्राप्त की है।

इन्होनें भोगवादी दृष्टिकोण का सदैव ही विरोध किया है। मनुष्यता के नाते सभी को मिलजुलकर रहना, आपसी प्रेम सदभाव का व्यवहार करना, दया, ममता स्नेह जैसे भावों का समावेश रखना इनके पवित्र निर्मल ह्रदय का ही प्रतीक है। इन्होंने सभी को एक परिवार के सदस्यों की भांति मिल जुलकर रहने की प्रेरणा दी है, जो कि आपसी वैमनस्य, भेदभाव को भूलकर एकता के सूत्र में पिरोने का काम करती है। इसी मानवतावादी सोच के सहारे ही इन्होंने अपने काव्य कला को प्रारम्भ किया और अगर सभी इसी से प्रेरणा लेते है, तो सभी की सोच में परिवर्तन होगा और यह देश हित में एक सार्थक प्रयास होगा।

(ए) इतिहास और संवेदना से प्रेरणा –

राजस्थानी भाषा साहित्य संस्कृति के ऐतिहासिक पारम्परिक परिवेशों और मूल्यों के उजास पर राजस्थानी साहित्य को महत्त्व प्रदान किया गया है। इतिहास के स्वर्णिम पन्नों में संवेदना से परिपूर्ण रचनायें इसमें समाहित की गई है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपनी काव्य रचनाओं में इतिहास का भी समावेश किया है इनकी कृतियों में "गौड. बुलावै घाटवै," 'प्रणवती राणी,' 'बलजी–भूरजी', 'तोगा री तलवार', 'गोरा रो त्याग,' 'हार देय पिव–पावियों', एकांकियों के कथानक व घटनाओं में इतिहास व संस्कृति का सम्मिश्रण किया गया है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपनी काव्य रचनाओं में राजपूतकालीन इतिहास के वे ही खण्ड लिये है जिनमें आज के युग में कोई न कोई संदेश अवश्य उभरकर सामने आता है। यहाँ इन

काव्यों के माध्यम से राजस्थान के जीवन, भाषा, संस्कृति को बहुत समृद्ध और अप्रतिम बताया गया है। इन एकांकियों के माध्यम से आप ज्वलत समस्याओं के समाधान, समाजिक समस्याओं के समाधान की प्रेरणा देते है।

इन एकांकियों की कड़ी में इनकी प्रथम एकांकी **'गौड़ बुलावै घाटवै'** में महाराज शेखाजी के चरित्रगत घटना को बताया गया है। इसमें उनके आदर्श, नारी की मान–मर्यादा की रक्षा करने में प्राणों को न्यौछावर करने व क्षत्रिय धर्म निभाने और पराक्रम–वैभव की गाथा का भी बखान किया है। इसमें उनकी वीरता, शरणागत की रक्षा, क्षत्रिय धर्म के निर्वाह की प्रेरणा के उदाहरण भी दिये गये है। वर्तमान समय में नारी की मान–मर्यादा व रक्षा व उसकी अस्मिता के मूल्य धीरे–धीरे गिरते ही जा रहे है, उनका विवेचन इन काव्यों में किया गया है।

इनकी एकांकी '**प्रणवंती राणी**' में जब झूंझुनू के शासक शार्दूलसिंह की बेटी गुमान कंवर का विवाह बूंदीं के छतरसिंह से हुआ, तो वे अपने साले जोरावरसिंह के घोड़े की मांग पर हठ कर बैठते है। जब वे समझाने पर भी नहीं माने तो इस पर गुमान कंवर भी बूंदी नहीं जाने की हठ करती है। वहीं पूरी जिदंगी तक सीमा पर रहने का प्रण कर बैठती है। जब महाराज स्वर्ग सिधार जाते है और इसकी सूचना जब गुमान कंवर को दी जाती है, तो वह अपने प्राणों को वहीं त्याग देती है। इस प्रकार दोनो अपने प्रण पर टिके रहें।

गुमान कंवर री जै, सतवंती बाई री जै, बाईसा री जै।
हाड़ी राणी री जै, प्रणवंती राणी री जै।।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने राजस्थानी भाषा व शेखावाटी अंचल की भाषा में सदाचार और स्वाभाविक वार्तालाप के माध्यम से इन्द्रगढ़ और शेखावाटी के राजघराने की मान–मर्यादा और संस्कृति को सुन्दर ढंग से चित्रित किया है।

इन्होंने अपनी **तीसरी एकांकी** –'शेखावाटी के सुतंत्र और जुझारू वीर 'बलजी–भूरजी' का चित्रण किया है, जो दोनो क्रान्तिकारी होने के साथ–साथ चेतनाधर्मी भी थें। इन्होंने 1857 के संग्राम में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इनकी राष्ट्रभक्ति व देश प्रेम का भी पूर्ण रूप से परिचय मिलता है।

बलजी गया र भूरजी, साथै गयो गणेश।
बलिदान्यां री पांत में, धन यां री ठुकरेश।।

संवत उन्नी ब्यासिंया , कातिक उतरै दूज ।
गया बली हित देश रै कण–कण अरप्यो झूज ।।

वही '**तोगां री तलवार**' में मध्यकालीन (राजपूत कालीन) इतिहास की रोमाचंकारी घटना का चित्रण किया गया है। युद्ध स्थल पर सिर कटने के बाद भी रूण्ड–मुण्ड दोनो तेज गति से अलग–अलग शत्रुओं को धराशायी करते है। जब तक उनके शरीर में रक्त की बूंद होती है तब तक वह लड़ते रहते है। रण में खेत होने के पश्चात उनकी पतिव्रता नारी भी सती हो जाती है। इतिहास में ऐसी संवेदना से परिपूर्ण कई कहानियां भरी हुई है जिनमें मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है।

आगरा में इन स्मृति स्थलों स्मारको की वर्तमान स्थिति तथा पुरातात्विक सांस्कृतिक कलात्मक अध्ययन प्रस्तावित है। वही वीर तोगा की छतरी, जोधपुर के राजा गजसिंह की छतरी '**राठौड़ा री छतरी**' के नाम से बनी हुई है।

'**गोरां रो त्याग**' एकांकी में अपने पुत्र के त्याग और बलिदान का कथानक है। जो एक ऐतिहासिक घटना है, जिसमें अपने पुत्र का बलिदान करके स्वामिभक्ति का परिचय देती है। जिस तरह मेवाड़ में पन्नाधाय ने मेवाड़ के उदयसिंह के प्राण रक्षा हेतु उसकी जगह अपने पुत्र को सुला दिया था और स्वामिभक्ति का परिचय दिया। ऐसी अन्य घटनाएं भी मध्यकालीन इतिहास में भरी हुई है, जिसमें राजस्थान की संस्कृति और जन–जीवन के त्याग के प्रेरणा देने वाले कई उदाहरण है।

'**दहेज रो बंटवारों**' एकांकी में दहेज की मांग, शिक्षा को आर्थिक दृष्टिकोण से देखकर उसका मोल–भाव करना, दहेज जैसी समस्या को इज्जत और प्रतिष्ठा से जोड़ना आदि की मनोस्थितयों का और समाज की विद्रूपताओं का भी व्यंग्यांत्मक चित्रण किया है।

अतः डॉ. उदयवीर शर्मा ने '**गौड़ बुलावे घाटवै**' रंगमंचीय एकांकी में कथानक घटनायें, पात्र एवं चरित्र चित्रण, कथोपकथन, देश काल, सभी मानवीय मूल्यों की अस्मिता और रक्षण राजस्थानी साहित्य भाषा–संस्कृति का परम्पराओं का सजीव चित्रण किया है। इसमें धर्म और युग दोनो का प्रभाव, समान रूप से दिखाई देता है। भाषा, इतिहास, संस्कृति परम्परा का प्रभावी चित्रण इसमें व्यक्त होता है। मन के अंदर एक नये संचार को उदघाटित करते है।

संवेदना से लबालब भरे सरोकारों की बानगी है, यह एकांकी संग्रह जो रंगमंचीय वेदनाओं, अन्तर्द्वन्द्वों से घिरी हुई है। यहां शर्मा जी के भाव विचार एकांकी सर्जन के माध्यम से चेतना के स्तर पर मानव स्थितयों की सांस्कृतिक परिवेश में पहचान रखते है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने इन सभी स्थतियों को मंथित कर अपनी रंगमंचीय एकांकियों में प्रेरणा दिशाबोध और नये संदेश देकर अपने साहित्कार के बोध एवं उत्तरदायित्व का निर्वहन किया है। इनकी एकांकियों में जीवन, संस्कृति व इतिहास साहित्य के मूल्यों की ध्वनि भी सुनाई दे रही है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने कई विधाओं में साहित्य लिखा है, लेकिन उनके लेखन की मूल विधा कविता है। इसे उनकी केन्द्रिय विधा भी कह सकते है। उदयवीर शर्मा गावं की संवेदना के कवि है। इसलिए उनकी कविताओं में गाँव और प्रकृति के विविध बिम्ब भी पाये जाते है। उन्होनें स्वयं कहा है "मेरी काव्य रचनाओं की संवेदना प्रकृति है" उन्होनें पुनः कहा है कि सांहित्य समाज से जुड़ा है और समाज का प्रमुख अंग है मनुष्य। मनुष्य संवेदनाओं से ही मनुष्य है, संवेदना रहित मनुष्य सामाजिक नही उनकी सभी रचनायें मनुष्य पर केन्द्रित है, समाज से उत्प्रेरित है। इससे जाहिर होता है कि गाँव में रहकर उनकी संवेदनाओं का विस्तार मनुष्य तक जुड़ा हुआ है। जिसे उनकी कविताओं का मूल तत्व भी कहा जाता है। उन्होनें मानवीय संवेदनाओं व मूल्यों को महत्त्वपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान की है।

(ऐ) पर्यावरण पर सोच –

डॉ. उदयवीर शर्मा ने साहित्य की विविध विधाओं में पूरी दक्षता के साथ लेखन कार्य किया है। जहाँ आपका गद्य परिमार्जित है, तो वहीं काव्य भी लालित्य से भरपूर, प्रभावशाली है। इनके राजस्थानी प्रकृति काव्य 'डांफी' और 'सूटों काफी चर्चित प्रशंसित काव्य रहें है।

इनके दूसरे शतक में पर्यावरण संबंधी एक सौ चौदह सोरठे है। यह ऋतु काव्य है। सम्बोधन काव्य के साथ–साथ गरमी, स्यालो, बरखा ऋतु पर चित्रात्मक सोरठे रचे है।

होगो एकाकार, अंधड़ आयो जोर सूं ।
बालू रो संसार, मरू रो जीवण, मोलका।।

रिमझिम–रिमझिम रोज, सावण बरसै सोवणो।
मन मुलक्यो ले मोज, मद री रागां मोलका।।

ठंडी चालै भाळ, कापै पल–पल कालजो।
जौणे आगो काल, मावठ रै मिस, मोलका।।

पर्यावरण के अर्थ में कई आयाम जुड़े हुए है। प्राकृतिक असंतुलन, **ग्लोबल वार्मिंग**, बाढ़, सूखा, अकाल ज्वालामुखी, विस्फोट, **सुनामी लहर**, प्लेग बीमारियां आदि नाना समस्याएँ नित्य प्रति उत्पन्न होती जा रही है, जिसका मुख्य कारण मनुष्य द्वारा प्रकृति से छेड़छाड़ ही है। वहीं इसका प्रभाव दूसरी ओर मूल्य, सिद्धांत, नैतिकता, आदर्श सभी के स्तर धीरे–धीरे गिरते जा रहे हैं। इसका कुप्रभाव दिनोंदिन पर्यावरण पर भी दिखाई दे रहा है। यह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक प्रदूषण राष्ट्र के लिए भी बहुत बड़ी चिंता का विषय है।

यहाँ पर्यावरण को स्वच्छ बनाये रखने के लिए कवि ने वृक्षों के महत्त्व को प्रतिपादित किया है। वृक्षों से ही मनुष्य जीवन संभव है। यदि इनको लगातार काटते रहे, तो मानव का जीवन भी एक दिन संकट में पड़ जायेगा।

जाल, झाड़खी फोग, चढै चौकड़ी चाप सूं।
गैड़ बंधै गरणाय, मस्ती छावै, मोलका।।

पर्यावरण प्रदूषण भी आज एक भारी समस्या है, क्योंकि इससे दिन प्रतिदिन मनुष्य के लिए शुद्ध हवा में साँस लेना दूभर हो गया है। मनुष्य कई बीमारियों का शिकार होता जा रहा है और शायद इसी कारण उसकी उम्र धीरे–धीरे घटती जा रही है।

जल थल नभ, अर पून, परदूषण सूं बिगाड़िया।
कर कुदरत रो खून, मुसकल बचणो, मोलका।।

वही बढ़ती जनसंख्या के कारण सभी सुख सुविधाओं के संसाधनों को सही ढंग से नहीं भोग पा रहे है और वृक्षों की अंधाधुंध कटाई भारत के समक्ष आज बड़ी समस्या उभर कर हमारे सामने आती जा रही है।

या भारत री भीड़, प्रगती रो पथ रोक–री ।
नित–नित बढ़णी पीड़, मीठो बिस यो मोलका।।

भरी खचा–खच भीड़, भटकै उफणै भाग–रौ।
छोटा लागै नीड़, दुखड़ा बढ़गा, मोलका।।

जनसंख्या वृद्धि के कारण नगरीय जीवन बेहाल हो गया है, क्योंकि सभी भागमभाग के जीवन मे आत्मीय भावों को भी भूल चूके है।

भीड़ देख या भीड़, मिनखां रों नाळो अजब।
कठै न दीखै छीड़ घणी बटाबट, मोलका।।

अतः पर्यावरण के बिगड़ते संतुलन और बढ़ते हुये प्रदूषण ने मनुष्य के सामने नयी चुनौतियां उत्पन्न कर दी है। जो वर्तमान में सभी के लिए संकट उत्पन्न कर रही है, जिससे पूरी दुनिया को जूझना पड़ रहा है। इसके कारण ही दुनिया में ऐसा परिवेश बदल रहा है कि जिससे भविष्य की तस्वीर भयावह व अत्यंत चितांजनक है।

डॉ. शर्मा ने समसामयिक विषयों के प्रति जागरूकता का संदेश देते हुये कहा है, कि उपभोक्ता अपसंस्कृति के प्रदूषण से प्रदूषित व कलुषित मानव की भोगवादी तृष्णा के चलते चंद चाँदी के टुकड़ो के प्रलोभन में मनुष्य जंगलो का सफाया कर रहा है। घटते जंगलो व कटते वृक्षों, प्रदूषित वायु व दूषित जल से पीड़ित धरती की पीड़ा को भी व्यक्त किया है।

वन साथै वन–जीव, मिनख–भूख में घुसड़गा ।
अब हाली जग–नींव, मनड़ो डाटो मोलका ।।

जंगल रै जीवण ने लूटयो, मारयो खायौ दियो उजाड़।
वनदेवी जद कोप करैगी, खड़ी होयसी रौं री खाट।।

पून बिगड़गी, आभो दूषित, धरती रो नित बिगडै डौल।
नदी नालियां जो'डा पोखर', सै में हो' री रोलगिदोल ।।

परदुसण री आग, जंगली जींवा नै गिटै।
मिनख पणै पर दाग, मत लागण द्यो मोलका।।

राखो–राखो पाणी राखो, पाणी में परमेसर बास।
चेत–चेत नर चेत बावला, मता विनासै जग रो नीर।।

अतः इस प्रकार डॉ. उदयवीर शर्मा ने पर्यावरण के सभी उपयोगी और महत्त्वशाली तत्वों 'धरती जल, वन वृक्ष आदि के प्रति संवेदनशील होकर धरती की पीड़ा को इस प्रकार प्रतिपादित किया है।

धरती धूजै थोथी हो'री, मिनख भूख नी मिट पाई।
काढ़ कालजौ सगलो खागा, खोदी पापां री खाई ।।

अतः अपने स्वार्थ व प्रलोभन के वशीभूत होकर मानव धरती, वन, जल, पवन वृक्ष इन सबका दोहन और शोषण करके सर्वनाश की ओर बढ़ रहा है। अतः इस सर्वनाश को रोकने लिए कवि **'सर्वजन हिताय व सर्वजन सुखाय'** की शिक्षा देता है।

उपसंहार

226–236

उपसंहार

शेखावाटी प्रदेश इतिहास ख्यात, बात के लिए विश्व में विख्यात है। सर्वत्र इसकी एक विशिष्ट एवं पृथक् पहचान है। बल, पराक्रम, शौर्य, त्याग और बलिदान में यह भू–भाग अपने सपूतों के बल पर भारत में नहीं अपितु विदेशों में भी सुविख्यात है। आरम्भिक काल से लेकर अब तक इसने सर्वाधिक वीर एवं रण बाँकुरे दिये हैं। विदेशी शासकों ने इसके वीरत्व का बहुत बखान किया है, तथा इस परिक्षेत्र के आत्मबल को समय–समय पर सदा स्वीकार किया है। अंग्रेजों से पूर्व मुगल दरबार में भी यहाँ के वीर शासकों का अत्यधिक सम्मान था। यह सदा एक चैतन्य धरा रही है। वीरता के साथ साथ सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीति आदि अनेक स्थितियों में यह सुसमृद्ध रही है। यहाँ के भित्ति चित्र विदेशियों को अपनी ओर आकर्षित करते रहे हैं तो यहाँ की मूर्ति कला और काष्ठ कला भी विश्व विख्यात है। संगीत में इसने अच्छे कलाकार दिये हैं। गजल गायकी में पाकिस्तान का सुप्रसिद्ध गजल गायक मेंहदी हसन भी इसी धरती का सपूत है। शिक्षा के क्षेत्र में यह परिक्षेत्र सुसमृद्ध है, तो औद्योगिक दृष्टि से भी यह बहुत आगे है। चाहे यहाँ इसके रेतीले भू–भाग में उद्योग नहीं चलते हों परन्तु इसके सपूतों ने संपूर्ण भारत में अपने कौशल, परिश्रम और चातुर्य का परिचय दिया है। विदेशों में भी शेखावाटी के व्यापारी उद्योगपति अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वस्तुतः प्राचीनकाल से ही यह सम्भाग अनेक दृष्टियों से परिचिह्नित होता रहा है। यहाँ की भौगोलिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों ने इसको समृद्ध बनाने में सदा सहयोग दिया है। भूख, शत्रु तथा अधर्म से जुझारू भाव से लड़ना यहाँ के सपूतों ने खूब सीखा है तथा इसके अद्वितीय उदाहरण इन तथ्यों के साक्षी है। इन्होंने इतिहास बनाया है। प्राचीनकाल में इसका गौरव सदा जगमगाता रहा है। कर्म और धर्म की यहाँ सदा आत्मिक भाव से अनुपालना होती रही हैं। वीरों की तलवार, भक्तों की रस धार तथा कर्मनिष्ठों की कतार यहाँ सदैव गतिशील रही है। सुसमृद्ध गौरव से सज्जित मण्डित शेखावाटी की सौरभ सबको उत्साहित, प्रफुल्लित एवं गतिशील रखती रही है।

आधुनिक युग में भी इसका गौरव गूँजता रहा है। आजादी की लड़ाई में इस सम्भाग ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। श्री जमनालाल बजाज इसी धरा के सपूत थे। सीताराम सेकसरिया यहीं के गौरव रत्न थे। शेखावाटी का चप्पा–चप्पा आजादी की लड़ाई में जूझा है। आजाद भारत का प्रथम परम वीर चक्र इस धरती का ही गौरव बना तो विवेकानन्द को विश्व विख्यात विवेकानन्द बनाने में इस सम्भाग का ही पूर्ण सहयोग एवं आत्मिक उत्थान

भाव मिला है। यह आध्यात्मिक गौरव खेतड़ी संस्थान (शेखावाटी शासक) से संबद्ध है। दान की दुंदुभी, उत्सर्गों की रणभेरी, धर्म की शंख ध्वनि की त्रिवेणी शेखावाटी सम्भाग में ही समन्वित भाव से प्रवाहमान रही है। शेखावाटी का गौरव अक्षुण्ण है।

साहित्यिक दृष्टि से विचार करें तो यही स्वीकार किया जा सकता है कि यहाँ का साहित्य भी अति समृद्ध रहा हैं। यहाँ का प्राचीन साहित्य शताधिक कवियों की रसपूर्ण लेखनी से मंडित रहा है। भक्ति, श्रृंगार, वीर, नीति आदि सभी आयामों में रस गंगा प्रवाहमान रही है। सैकड़ों काव्य ग्रन्थ इसके प्रमाण हैं। अग्रदास, नाभादास, सुन्दरदास, महाकवि जान, कृपाराम खिड़िया, रागनाथ कविया, देवीदास, कवयित्री ताज आदि के नाम शेखावाटी साहित्य में ही नहीं अपितु भारतीय साहित्य आकाश में दैदीप्यमान नक्षत्र के रूप में जगमगा रहे हैं। इनका साहित्यिक गौरव शेखावाटी के लिए महत्त्वपूर्ण धरोहर है। अकेले सुन्दरदास तथा महाकवि जान के शताधिक काव्य ग्रन्थ यहाँ के साहित्य की समृद्धि के द्योतक हैं। राजिया के सोरठे (कृपाराम खिड़िया) राजस्थानी साहित्य की अमूल्य निधि हैं, तो करुना बहतरी (रामनाथ कविया) एक विशिष्ट उपलब्धि है। यहाँ का लोक साहित्य एवं लोक कलाएँ भी अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। यहाँ का लोकानुरंज का साहित्य भी महत्त्वपूर्ण हैं। शेखावाटी के ख्याल जगत में अपना साहित्यिक, सांस्कृतिक और सामाजिक महत्त्व रखते हैं। तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार हिन्दी साहित्य के अनुरूप ही यहाँ भी शक्ति की रसधारा सर्वाधिक प्रवाहमान रही है तो श्रृंगार की सौरभ भी खूब प्रस्फुटित हुई है। वीर रसात्मक साहित्य तो यहाँ की वीर प्रकृति और संस्कृति के अनुरूप ही त्याग बलिदान और बल पराक्रम से भरा हुआ है। यहाँ के नीतिकारों ने गंभीर और बहुमूल्य ग्रन्थ रत्न दिए हैं, जिनकी लोकप्रियता असंदिग्ध है। संपूर्ण प्राचीन साहित्य राजस्थानी साहित्य की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण एवं अतुलनीय है।

शेखावाटी का आधुनिक साहित्य भी समृद्ध है। पद्य साहित्य में सभी विचारधाराओं का साहित्य उपलब्ध है। नई कविता लेखन में भी यह सम्भाग पीछे नहीं है। महाकवि वैद्य श्री महावीर प्रसाद जोशी ने रामायण, कृष्ण काव्य, भागवत का संपूर्ण अनुवाद आदि अनेक महत्त्वपूर्ण काव्य ग्रन्थों से इसका भण्डार भरा है तो हास्य सम्राट महाकवि श्री विश्वनाथ विमलेश ने राष्ट्रीय स्तर पर राजस्थानी कविता का प्रतिनिधित्व किया है। श्री अम्बू शर्मा की रामायण महाकाव्यीय स्तर का ग्रन्थ रत्न है। प्रकृति चित्रण में यह सम्भाग अत्यधिक समृद्ध है। डॉ. मनोहर शर्मा का 'गजमोती' सुमेर सिंह शेखावत के 'मेघमाल', मरुमंगल और डॉ. उदयवीर शर्मा के 'डॉफी' और 'सूँटो' काव्य ग्रन्थ विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। सांस्कृतिक,

सामाजिक ऐतिहासिक आदि सभी दृष्टियों से काव्य ग्रन्थ लिखे गए हैं। नई कविता में गंभीर चिन्तन मनन परक रचनाएँ प्रस्तुत हुई हैं, जिनमें डॉ. गोरधन सिंह शेखावत तथा श्री गोपाल जैन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। यहाँ के गीतकारों ने भी अच्छी ख्याति पाई है जिनमें भागीरथ भाग्य का नाम विशेष प्रभावकारी है। यहाँ प्रशस्ति काव्य लिखे गए हैं तो सम्बोधन काव्य भी लिखे गए हैं। राष्ट्रीय भावों से ओत–प्रोत कविताएँ खूब लिखी गई हैं, तो नीति परक रचनाएँ भी कवि की कलम से निस्रत हुई हैं। यहाँ का संपूर्ण पद्य साहित्य कथा और शिल्प गुण, कल्पना भाव और भाषा सभी दृष्टियों से अपना विशेष स्थान रखता है, और राजस्थानी साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण अंग बना हुआ है।

यहाँ के गद्य साहित्य में उपन्यास, कहानी, लघुकथा नाटक, एकांकी, निबन्ध, जीवनी, समालोचना आदि सभी अपनी समृद्ध स्थिति में हैं। उपन्यासकारों में भी माधव शर्मा (एम. ए.) श्री बी. एल. माली 'अशान्त', सीताराम महर्षि और गायत्री जोशी के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके उपन्यासों में से समाज को वाणी मिली है। उपन्यासों की अपेक्षा यहाँ शी कहानियाँ अधिक लिखी गई हैं जिनमें समाज, संस्कृति, इतिहास आदि से सम्बन्धित घटनाएँ चित्रित हुई हैं। नई चेतना की झलक भी दृष्टिगत होती है। इनमें सामाजिक चेतना के स्वर गूँज रहे हैं। श्री बैजनाथ पंवार, डॉ. मनोहर शर्मा, श्री दामोदर प्रसाद शर्मा, श्री अशान्त, श्री मनोहर सिंह राठौड़ श्री अमोलकचन्द जाँगिड़, रामस्वरूप परेश, दुर्गादत्त दुर्गेश आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनकी कहानियों में साहित्यिक क्षमता दृष्टिगत होती है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने लघुकथाए भी यहाँ लिखी हैं। जो राजस्थानी साहित्य में डॉ. उदयवीर शर्मा का 'किरत्याँ रो झूमको' के रूप में प्रकाशित हुई है। यह शेखावाटी सम्भाग के लिए एक साहित्यिक गौरवपूर्ण उपलब्धि है, इस विधा में शेखावाटी अग्रणी स्थिति में हैं। इनके अतिरिक्त गोविन्द अग्रवाल, सुबोध अग्रवाल आदि नाम भी उल्लेखनीय हैं। इनकी कहानियों में सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना के स्वर गूँज रहे हैं। यहाँ नाटक भी उपलब्ध हैं, जिनमें भरत व्यास, भगवती प्रसाद दारुका, श्री अशांत, डॉ. गोरधन सिंह शेखावत (तीसमारखाँ बस्तीराम) आदि नाटक विशेष प्रसिद्ध हैं। राजस्थानी में पहला व्यंग्य प्रधान नाटक डॉ. गोरधन सिंह शेखावत का माना जाता है। एकांकियों में समाज, इतिहास, हास्य, व्यंग्य के भाव मुखर हुए हैं। नैणसी रो साको (डॉ. मनोहर शर्मा) इब तो चेतो (श्री नागराज शर्मा) टमरकटू (श्री रामनिरंजन ढिमाऊ) आदि एकांकी नाटकों की पुस्तकें विशेष हैं। निबन्ध साहित्य भी यहाँ प्रगति पर रहा है। लेखकों ने अपने दृष्टिकोणों से निबन्ध लिखे है। और उनका प्रकाशन भी करवाया है। रोहिडे रा फूल (डॉ. मनोहर शर्मा) माणक मोती (सुमेर सिंह

शेखावत) गळचट (अमोलकचन्द जाँगिड़) आदि निबन्ध संग्रह विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। जीवनी, आत्मकथा, डायरी, साहित्य भी यहाँ उपलब्ध होता है, परन्तु मात्रा में कम है। इन रचनाओं में स्वाभाविकता और यथार्थपरक प्रस्तुति दर्शनीय है। गद्य काव्य भी यहाँ लिखा गया है जिनमें गेंदाराम वर्मा, गोविन्द अग्रवाल और बैजनाथ पंवार के गद्य काव्य विशिष्ट हैं। भेंट वार्ता और अनुवाद साहित्य भी गद्य की विधाएँ हैं। इनमें अनुवाद का विशेष महत्त्व है। बनडारो सोदागर, लोढ़ी मोडी मथरी (श्री किशोर कल्पना कान्त) वंसरी (रावत सारस्वत), शेखावाटी के विशिष्ट अनुवाद ग्रन्थ हैं। समालोचना साहित्य में भी अच्छी प्रगति यहाँ दृष्टिगत होती है। हिन्दी और राजस्थानी में समीक्षा ग्रन्थ उपलब्ध हैं। फुटकर लेखों की संख्या तो अत्यधिक हैं। डॉ. कन्हैयालाल सहल के समीक्षा ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण हैं। राजस्थानी में सर्वप्रथम 'अम्बू शर्मा' कृत संपूर्ण रामायण की समीक्षा' शीर्षक से पुस्तक देखने में आई है। इसके समीक्षक डॉ. उदयवीर शर्मा है। श्री लाल मिश्र, डॉ. मनोहर शर्मा, रावत सारस्वत, सुमेर सिंह शेखावत, डॉ. गोरधन सिंह शेखावत, दामोदर प्रसाद शर्मा, डॉ. प्रताप सिंह राठौड़, डॉ. शेर सिंह, अमोलकचन्द जाँगिड़ आदि नाम समीक्षा साहित्य में विशेष उल्लेखनीय हैं यह विधा समृद्ध है।

सार संक्षेप में अवलोकन करें तो यह कहा जा सकता है कि शेखावाटी का संपूर्ण साहित्य (प्राचीन और अर्वाचीन) एक सुदीर्घ, सबल और अक्षुण्ण परम्परा को अपने आप में धारण किए हुए सहज जीवन से जुड़ा महत्त्वपूर्ण साहित्य है। इसमें गद्य और पद्य के गौरवपूर्ण ग्रन्थ उपलब्ध हैं, तथा एक गौरवपूर्ण गरिमा के दर्शन होते हैं। शेखावाटी में लेखन कार्य अबाध गति से निरन्तर गतिशील रहा है। समय–समय पर यहाँ के विद्वान साहित्यकारों को मिलने वाले राष्ट्र एवं राज्य स्तरीय पुरस्कार तथा सम्मान इसके पुष्ट प्रमाण हैं। राजस्थानी साहित्य में दी जाने वाली सर्वोच्च उपाधि 'मनीषी' (राजस्थानी भाषा साहित्य एवं संस्कृति अकादमी बीकानेर द्वारा प्रस्तुत) उनमें भी शेखावाटी सम्भाग के सुदीर्घ साहित्य सेवी विद्वान साहित्यकारों में डॉ. मनोहर शर्मा एवं ठा. सुजन सिंह शेखावत का नाम विशेष हैं। यह शेखावाटी की गौरवपूर्ण लेखन कार्य परम्परा का ही सम्मान है।

आधुनिक शेखावाटी की इस गौरवपूर्ण लेखन कार्य परम्परा में डॉ. उदयवीर शर्मा का उल्लेखनीय योगदान है। आपकी गतिशील लेखनी ने अद्यावधि अनेक काव्य ग्रन्थ, लघु कथा, समीक्षा ग्रन्थ इतिहास ग्रन्थ, निबन्ध, लेख आदि राजस्थानी साहित्य को दिए हैं। प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध का प्रमुख विषय '**डॉ. उदयवीर शर्मा का रचनात्मक साहित्य : एक मूल्यांकन**' करना ही तो है। एतदर्थ आगे की पंक्तियों में इस ग्रन्थ के पिछले अध्यायों में किए

गए व्यापक विश्लेषण के आधार पर सार संक्षेप में निष्कर्षतः वांछित विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

डॉ. उदयवीर शर्मा एक सुदीर्घ साहित्यसेवी, कुशल समीक्षक एवं संवेदनशील कवि हैं। आप पिछले कई वर्षों से निरन्तर लिख रहे हैं। राजस्थान राज्य शिक्षा सेवा में रहते हुए भी आपने खूब लिखा और सन् 1990 में प्रिंसिपल पद से सेवानिवृत होने के पश्चात् अब पूर्णतः साहित्य सेवा के लिए समर्पित हैं। आपकी सतत् साहित्य साधना उल्लेखनीय है। राजस्थानी साहित्य में अपना बहुमूल्य स्थान रखती हैं। आपके मौलिक और महत्त्वपूर्ण काव्य ग्रन्थों में 'डॉफी' और 'सूँटो' दोनों ही समादृत हुए हैं। दोनों प्रकृति काव्य हैं। एक में 'शीतलहर' का मानवीय संवेदना के साथ चिन्तन है तो सूँटो में प्रगतिशील विचारधारा के साथ समाजवादी भाव अभिव्यक्त हुए हैं। 'सूँटो' (तूफान) को अनेक दृष्टिकोणों से चित्रित करते हुए कवि डॉ. शर्मा ने अपनी सहज संवेदनशीलता का कुशलता के साथ परिचय दिया है। 'सूँटो' काव्य पुरस्कृत भी हुआ है। राजस्थानी प्रकृति चित्रण के काव्यकारों में डॉ. शर्मा जी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। डॉ. शर्मा जी ने प्रशस्ति काव्यों की परम्परा में छः प्रशस्ति काव्य भी लिखे हैं जिनमें से चार (श्रीलाल शतक, मनोहर शतक, गंगाधर शतक) अभी अप्रकाशित हैं। संस्कृत साहित्य की शतक (म्हारो गाँव और गुरु महिमा शतक) साहित्य में आगे बढ़ाया है। ये कोरे प्रशस्तिपरक नहीं हैं। इनमें कवि की श्रद्धा, सम्मान, समर्पण, संवेदनशीलता, सहृदयता के भाव मुखर हुए हैं। प्रशस्ति काव्य लेखकों में डॉ. शर्मा का स्थान अग्रणी है। कवि ने राजस्थानी सम्बोधन काव्य परम्परा में 'राजिये रा सोरठा' (कवि कृपाराम खिड़िया) की भाँति 'मोलकै रा सोरठा' लिखे हैं, जिनकी संख्या 886 है जो अब तक ज्ञान एवं प्रकाशित सम्बोधन काव्य ग्रन्थों में सबसें अधिक है। ये संपूर्ण सोरठे पुस्तक रूप में इसी शीर्षक (मौलकेरा सोरठा) से प्रकाशित हो चुके हैं। ये कुल सात शतकों में विभाजित हैं और पृथक् पृथक् विषयों पर लिखे हुए हैं। इनमें कथ्य, शिल्प, भाव, भाषा सभी आकर्षक एवं मनमोहक हैं। कवि ने ये सभी सोरठे अपने अभिन्न मित्र श्री अमोलकचन्द जाँगिड़ बिसाऊ (प्यार का नाम 'मोलको') को सम्बोधित करके कहे हैं। इनका भाव लोक गहराईयों की पकड़ करता हुआ सा दृष्टिगत होता है। इनको साहित्य समाज में अच्छा सम्मान मिला है। आधुनिक राजस्थानी साहित्य में सम्बोधन काव्य की दृष्टि से यह इतना बड़ा प्रथम काव्य ग्रन्थ है। डॉ. शर्मा अब तक लगभग तीन हजार दोहे—सोरठे लिख चुके हैं। डॉ. शर्मा जी कवि के साथ साथ ख्याति प्राप्त गद्य लेखक भी हैं। आपका गद्य ग्रन्थ 'किरत्याँ रो झूमको' एक लघु कथा संग्रह है। राजस्थानी साहित्य में इनका अनूठा स्थान है। इससे पूर्व डॉ. मनोहर शर्मा का लघु कथा संग्रह 'सोनल भींग' सर्वप्रथम प्रकाशित हुआ जिसमें 70

लघु कथाएँ हैं और आलोच्य कथा संग्रह में 90 लघु कथाएँ संग्रहित हैं। राजस्थानी लघु कथा साहित्य में यह दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रकाशन है। इस संग्रह को खूब सम्मान मिला है। इसकी भरपूर समीक्षाएँ भी हुईं जिनसे इसका महत्त्व ही प्रतिपादित हुआ है। इस संग्रह की लघु कथाओं में गद्य काव्य का सा आनन्द आता है। इनमें भावों का गुम्फन, व्यंग्य की करामात, प्रतीकात्मकता की प्रवीणता प्रशंसनीय हैं। सभी लघु कथाएँ प्रभावी एवं सार्थक हैं। डॉ. शर्मा जी ने लघु कथाकारों में अपना उच्च स्थान बनाया है। आप एक कुशल गद्य लेखक हैं। आपने एकांकी और ललित निबन्ध भी लिखे हैं।

डॉ. उदयवीर शर्मा अनुभवसिद्ध कुशल समीक्षक हैं। इनके शताधिक समीक्षापरक लेख प्रकाशित हो चुके हैं। विद्वानों में आपकी एक समीक्षक के रूप में अपनी पहचान है। इनके समीक्षा साहित्य में 'शेखावाटीके साहित्य का इतिहास (प्रथम खंड)' ग्रन्थ अपना विशेष महत्त्व रखता है। शेखावाटी के प्राचीन साहित्य पर यह एक महत्त्वपूर्ण एवं शोधपरक ग्रन्थ है। इसमें अनेक सूचनाएँ प्रथम बार ही साहित्य जगत के सामने आई हैं, जिनमें कृपाराम खिड़िया की संपूर्ण रचनाओं के नाम उल्लेखनीय हैं। महाकवि जान, संत कवि सुन्दरदास, अग्रदास नाभादास आदि के साहित्य का विवेचन भी प्रथम बार इस ग्रन्थ में हुआ है। कृपाराम खिड़िया की साहित्य साधना पर लिखा समीक्षा ग्रन्थ भी अपना विशिष्ट स्थान रखता है। यह केन्द्रीय साहित्य अकादमी नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुआ है जो एक गौरव की बात है। अम्बू शर्मा कृत संपूर्ण रामायण की समीक्षा बड़े विस्तार के साथ हुई है जिसमें समीक्षा के सभी मानदण्डों को अपनाया गया है। यह समीक्षा सत्तर पृष्ठों में छपकर प्रकाशित हुई है। राजस्थानी समीक्षा साहित्य में ऐसा यह प्रथम समीक्षा ग्रन्थ है। अम्बू शर्मा कृत किष्किन्धा काण्ड की समीक्षा भी पृथक् से छपी है जिससे राजस्थानी समीक्षा साहित्य का श्रीगणेश हुआ माना जा सकता है। इसमें भी सभी मानदण्डों का ध्यान रखा गया है। 'शेखावाटीका साहित्यिक योगदान' ग्रन्थ भी समीक्षापरक है। इसके लेखन में डॉ. गोरधन सिंह शेखावत भी साथ रहे हैं। इस विवेचन से विदित होता है कि डॉ. शर्माजी की समीक्षा साहित्य में भी विशेष गति–मति है। आपका संपूर्ण समीक्षा साहित्य शेखावाटी का ही नहीं अपितु राजस्थानी साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने इतिहास ग्रन्थ भी लिखे हैं जिनमें '**शेखावाटी का इतिहास**' और '**बिसाऊ दिग्दर्शन**' विशेष उल्लेखनीय हैं। इन ग्रन्थों में इतिहास के अंगो का गम्भीरता से विवेचन हुआ है। इनमें क्षेत्र के गौरव को वाणी मिली है। बिसाऊ दिग्दर्शन में श्री अमोलकचन्द जाँगिड़ भी सह लेखक हैं। बिसाऊ नगर से सम्बन्धित लगभग सभी सूचनाएँ

इसमें संग्रहित हुई हैं। इसे बिसाऊ की डाइरेक्टरी ही कहा गया है। इसमें डॉ. शर्मा जी की गहरी सूझ–बूझ, लेखन क्षमता और शोध प्रवृति प्रकट हुई है। आपके लिए सभी इतिहास ग्रन्थ उपयोगी एवं अपना संदर्भ रखने में समर्थ हैं। आप एक सफल एवं समर्थ इतिहास लेखक भी हैं।

संग्रह सम्पादन कार्य में भी डॉ. शर्मा की विशेष अभिरुचि रही है। आप राजस्थान साहित्य समिति बिसाऊ (झुंझुनूं) से प्रकाशित होने वाली त्रैमासिक शोध पत्रिका 'वरदा' के सम्पादक मण्डल में हैं। यह शोध पत्रिका अपनी जीवन यात्रा के लगभग साठ वर्ष पूर्ण कर चुकी है। डॉ. शर्माजी द्वारा सम्पादित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों में तीन जनकाव्य तथा राजस्थानी व्रत कथाएँ हैं तो राधा मंगल (काव्य) भी विशेष उल्लेखनीय है। डॉ. मनोहर शर्मा अभिनन्दन ग्रन्थ के सम्पादन में भी आपका विशेष सक्रिय सहयोग रहा है तो 'मनोहर महिमा' का भी आपने सम्पादन किया है। 'त्रिधारा और गळचट' पुस्तकें आप द्वारा सम्पादित हुई हैं तो आपने एक ऐतिहासिक हस्तलिखित काव्य ग्रन्थ 'बिसाऊ रासौ' (कवि मीठूलाल भाट झुंझुनूं) का कुशल एवं महत्त्वपूर्ण सम्पादन किया है। यह काव्य ग्रन्थ शेखावाटी के प्राचीन गौरव से जुड़ा हुआ है। इसमें प्रत्यक्षदर्शी कवि ने बिसाऊ पर हुए आक्रमण का रोचक वर्णन किया है। शेखावाटी साहित्य संदर्भ कोष आप द्वारा सम्पादित एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें शेखावाटी के रचनाकारों द्वारा लिखित सैकड़ों ग्रन्थों का विवरण संग्रहित हुआ है। यह शेखावाटी में अपने ढंग का अनूठा और अद्वितीय कोष ग्रन्थ है। यह एक प्रथम आदर्श मार्गदर्शक ग्रन्थ है। वह शेखावाटी की साहित्यिक धरोहर की उपयोगी तालिका है। डॉ. गोरधन सिंह शेखावत और डॉ. कृष्ण बिहारी सहल भी इसके सम्पादक मण्डल में हैं। इस संपूर्ण विवरण से डॉ. शर्मा की सम्पादन क्षमता, कौशल और व्यापक दृष्टिकोण का पता चलता है। डॉ. शर्मा ने अद्यावधि कई ग्रन्थों का सम्पादन किया है, तथा अनेक ग्रन्थ सम्पादन सूची में प्रतीक्षित हैं। इससे आपकी सक्रियता, गतिशीलता और प्रवीणता परिपुष्ट होती है।

डॉ. उदयवीर शर्मा की साहित्य साधना का एक महत्त्वपूर्ण अंग है – निबन्ध लेखन। अब तक आपके लगभग चार सौ विचारात्मक और विवेचन परक तथा समीक्षा मूलक लेख, निबन्ध विविध पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आपने विस्तृत विवेचनात्मक लेख प्रकाशित करवाए हैं तो अनेक अभिभाषण दिए हैं। आपने अनेक साहित्यिक गोष्ठियों में विशद एवं समीक्षा परक पत्रवाचन भी किया है तो रेडियो वार्ता के रूप में आपके विशेष लेख आकाशवाणी से प्रसारित भी हुए हैं। राजस्थानी लोक साहित्य पर महत्त्वपूर्ण लेख

आपने पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित करवाए हैं तो हस्तलिखित ग्रन्थों पर शोध परक लेख भी साहित्य जगत को दिए हैं। आपके विशिष्ट कवियों के साहित्य पर लिखे विश्लेषणात्मक लेख अत्यधिक प्रशंसित हुए हैं। आपके लेखों में लोक साहित्य, संस्कृति, समाज, इतिहास विशिष्ट साहित्य आदि समाहित हैं। आपने हिन्दी और राजस्थानी दोनों भाषाओं में अपनी लेखनी चलाई है। आप ने अपने कार्य द्वारा ख्याति अर्जित की है। आपके लेखों की सूची विस्तृत है। साहित्य के अनेक अंगो पर आपकी लेखनी गतिशील रही है। आप एक सुविख्यात समर्थ और सुविज्ञ साहित्य लेखक हैं।

ग्रन्थों की प्रस्तावना भूमिका लेखन में भी डॉ. उदयवीर शर्मा की विशेष भूमिका रही है। यह आपकी साहित्यिक ख्याति की परिचायिका है। आपने अब तक छोटे बड़े दस ग्रन्थों की प्रस्तावना लिखी है जिनमें अहल्या, केसर, शबरी, आयमों के इन्द्रधनुष, कुसुमाकर, भावुकता और बबूल के फूल काव्य ग्रन्थ हैं। इनके लेख समर्थ काव्य के उदाहरण है। इनका अपना एक स्थान है। ठा. सुरजन सिंह शेखावत द्वारा लिखित 'नवलगढ़ का इतिहास तथा शेखावाटी का प्राचीन इतिहास ग्रन्थ की भूमिका लिखकर डॉ. शर्मा जी ने अपनी विशेष क्षमता का परिचय दिया है। चाहे काव्य ग्रन्थ हो चाहे इतिहास ग्रन्थ डॉ. शर्मा जी की पैनी दृष्टि ने उनकी विशेषताओं को सफलतापूर्वक उजागर किया है। विद्वतापूर्ण लिखी गई ये प्रस्तावनाएँ विद्वानों में अति प्रशंसित और समादृत हुई हैं तो साथ की लेखक के कौशल को भी उजागर करने वाली सिद्ध हुई हैं। विशद विवेचना दृष्टि, तटस्थ दृष्टिकोण तथा समर्थ लेखन गतिशीलता से मंडित ये सभी प्रस्तावनाएँ डॉ. शर्मा जी की सुविज्ञ भावना को प्रकट करती हैं। इस विधा के भी आप समर्थ लेखक हैं।

आपका अनुवाद कार्य भी प्रशंसनीय है। आपने मेघदूत और उमर खैयाम की रूबाइयों का राजस्थानी में अनुवाद किया है। दोनों अनुवाद ग्रन्थों का अवलोकन करने पर कहा जा सकता है कि ये मूल ग्रन्थों के भावों को अपने में संजोए हुए हैं। मूल कवि की संवेदनशीलता इन अनुवाद ग्रन्थों में भी दृष्टिगत होती है। इन ग्रन्थों के अतिरिक्त आपने अनेक कहानियों और लेखों का भी राजस्थानी में अनुवाद किया है। अनुवाद कार्य अपने आप में एक कठिन कार्य है परन्तु डॉ. शर्मा इस कार्यों में भी सफल रहे हैं। आप एक सफल अनुवादक कहे जा सकते हैं।

आपने राजस्थानी सोरठा सतसई में अनेक विषयों पर सोरठे कहे गए हैं। इनमें जीवन का सत्य मुखर हुआ है तो **'राजस्थानी चौपदी'** में भी जीवन की वास्तविकता को उजागर किया गया है। इसमें कवि ने आध्यात्मिक चिन्तन व्यवहार जगत की अनुभुतियों

तथा सांसारिक संवेदनशीलता को प्रस्तुत किया है, वाणी दी है। इसमें अधिकांश चौपदियाँ मार्मिक तथा प्रभावशाली बन पड़ी हैं। इनमें कवि का हृदय बोलता है, तो अनुभव गूँज रहा है। '**मरुधर री महक**' में प्राकृतिक उपादानों का मार्मिक चित्रण है। कवि प्रकृति की गतिशीलता, संवेदनशीलता और रमणीयता के सफल चितेरे कवि है। राजस्थानी प्रकृति चित्रण में कवि की लेखनी सदा गंभीर, सरस और रंजकता की द्योतक रही है। '**सतियाँरी सौरभ**' एक कथा काव्य है। इसमें राजस्थानी सतियों की सौरभ प्रस्फुटित हुई है तो '**मूमल**' में सच्चे सात्विक प्रेम के सुप्रसिद्ध राजस्थानी कथानक को पद्य बद्ध प्रस्तुत किया गया है। यह प्रेम मूलक काव्य है। इसमें मार्मिकता अपना विशिष्ट आकर्षण रखती है। **'सरधा सागर**' एक भक्ति एवं श्रद्धा में समर्पित काव्य ग्रन्थ है। इसमें शेखावाटी के संत सहज योगी श्रद्धानाथ जी महाराज की जीवन लीला चित्रित हुई है। यह आकार प्रकार में एक महत्त्वपूर्ण काव्य रचना है। '**म्हारो गाँव**' शतक में कवि के गाँव बिसाऊ का संवेदनशीलता और सहृदयता के साथ चित्रण हुआ है। भावुक कवि इसमें सदा भावुक ही बना रहा है। उसकी भावना को साकार स्वरूप देने में यह शतक सफल हुआ है। '**गुरु महिमा**' एक भाव परक शतक है। इसमें गुरु के शाश्वत सत्य तत्त्व का निरूपण हुआ है। गुरु तत्व की अमरता, गतिशीलता तथा युगबोध के अनुरूप उपयोगिता पर कवि ने अपना पद्य–बद्ध दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। आज के युग के गुरु पद पर व्यंग्य भी इस शतक में देखा जा सकता है। कवि डॉ. शर्मा का मन इस शतक की रचना में अध्यात्म, भक्ति, भौतिक, यथार्थ आदि दृष्टियों से अभिभूत रहा है। इसे एक समसामयिक रचना कहा जा सकता है। शतक की रचना करने में कवि सिद्ध हस्त हैं। **'भावाँ री बानगी'** कवि की फुटकर रचनाओं का संग्रह है। इसमें समय समय पर लिखी गई भावपरक रचनाएँ संग्रहित हैं जिनमें समाज, संस्कृति, इतिहास, उत्सव ग्राम, शहर आदि से सम्बन्धित अनेक भाव चित्र उपस्थित हुए हैं।

डॉ. उदयवीर शर्मा प्रकृति के कुशल चितेरे, समर्पित साहित्यकार, समाज के दृष्टा, परम्परा के पालक, श्रद्धा प्रेम और भक्ति के गायक, साहित्य साधकों के प्रशंसक, जीवन सत्य के समर्थक एवं लेखक, व्यवहार जगत के उद्‌घोषक सुविज्ञ समीक्षक, कुशल कवि, इतिहास के ज्ञाता, कुशल सम्पादक, गतिशील निबन्धकार, प्रख्यात साहित्य साधक, सहज अनुवादक, संस्कृति के पोषक, लोक रंगत के व्याख्याता, जन्मभूमि के ऋणी, गुरु भक्ति में समर्पित रचनाकार तथा राजस्थानी गौरव के गायक हैं। आपका व्यक्तित्व सादगी से परिपूर्ण, निर्मलता का साधक तथा अन्तर्मुखी भावों का पुंज हैं तो आपका कृतित्व साधना की मूर्ति, व्यापकता का परिचायक और उदार भावों का द्योतक है। आपकी साहित्य साधना का विश्लेषण कर कोई भी लेखक अपने आपको धन्य मान सकता है। अपने आप में गौरवशाली

होने का सौभाग्य प्राप्त कर सकता है। और साहित्य के भण्डार को भरने का श्रेय प्राप्त कर सकता है।

डॉ. उदयवीर शर्मा का रचनात्मक साहित्य : एक मूल्यांकन

शोध संक्षिप्तिकरण

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में डॉ. उदयवीर शर्मा के रचनात्मक साहित्य : एक मूल्यांकन विषय पर विश्द विवेचन किया गया है। कवि उदयवीर शर्मा का आदर्श पूर्ण जीवन हमारे प्रेरणादायी रहा है। आप '**सादा जीवन उच्च विचार**' जैसी सोच के अनुकरणीय साक्षी है। आपने अध्ययन–अध्यापन से अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए, सरस्वती के भण्डार की अभिवृद्धि करने में आप सतत् प्रयत्नशील रहें है।

आपने अपने साहित्य के अन्तर्गत सामाजिक समस्याओं, समाज में व्याप्त कुण्ठा, संघर्ष, मानसिक पीड़ा, भ्रष्टाचार, अनैतिकता, जातिगत भेदभाव, सामाजिक विषमता, गरीबी, शोषण, पूंजीवाद, साम्प्रदायिकता आदि अनेक समस्याओं पर व्यंग्यात्मक प्रहार करते हुए अपने लेखन के माध्यम से उकेरने का सफल प्रयास किया है। इन सामाजिक समस्याओं को मिटाकर समाज में एक स्वस्थ सोच का निर्माण करने का भरपूर प्रयास आपके द्वारा किया गया है।

कवि उदयवीर जी संस्कृत, हिन्दी, व राजस्थानी के प्रकाण्ड विद्वान है। आपने अपने काव्यों की रचना के माध्यम से मायड़ भाषा को ही प्रोत्साहन दिया, क्योंकि मायड़ भाषा मे वही अपनत्व और ममत्व भाव प्रकट होता है जो एक माँ के द्वारा न्यौछावर किया जाता है। इसलिए कवि ने राजस्थानी भाषा को हिन्दी का ही रूप मानते हुए राजस्थानी में काव्य रचना अधिक की है।

डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपनी लेखनी के माध्यम से राजस्थान की परम्पराओं व संस्कृति को ध्यान में रखते हुए वर्तमान पीढ़ी को भी उससें जुड़े रहने हेतु काव्य में राजस्थानी लघुकथाएं, प्रशस्ति काव्य आदि का भी अपने साहित्य में समावेश किया है। इनके काव्यों में लोक साहित्य आधुनिक साहित्य, एकांकियां, लघुनिबन्ध, कहानियां, संस्मरण, रेखाचित्र, भक्ति काव्य, नीति काव्य आदि का विशिष्ट रूप दिखाई देता है।

कवि ने प्रकृति को परम्परा और परिवेश से जोड़ कर उसके आकर्षण व अस्तित्व बोध को चेतन सत्ता से संबधित बताया है। यहाँ कवि का प्रकृति के प्रति दार्शनिक व कुदरती रूप उभरकर सामने आता है।

कवि ने पारम्परिक सम्बोधन शैली के काव्य में विषयगत नवीनता को सामयिक जीवन प्रसंगों से जोड़ते हुए ऐसे काव्य की रचना की है, जहाँ चुनौतियों का मुकाबला करती है, वहीं सामाजिकता से जोड़कर अपने उतरदायित्व को बखूबी निभाती है।

मुक्तक काव्य में कवि का चिन्तन व जीवन दर्शन प्रकट होता है। उन्होंने भारतीय संस्कृति, कर्मयोग, जीवन की क्षण भंगुरता, नैतिकता, प्रदूषण, कर्मसाधना आदि स्थितियों में अपना चिन्तन परक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

भक्ति काव्य में कवि ने सिद्ध पुरुष एवं विलक्षण अवधूत अमृतनाथ जी महाराज के शिष्य सहजयोगी संत श्रद्धानाथ जी कें जीवन चरित्र को उद्घाटित किया है। कवि ने अपने भक्ति काव्य से अपनी अलग पहचान बनाई है।

पद्यात्मक कथा काव्य में राजस्थान के प्रसिद्ध प्रेमाख्यान 'मूमल' और ऐतिहासिक कथानकों का मानवीय संवेदना और राजस्थान कें सांस्कृतिक मान मूल्यों कें रूप में चित्रण किया है। कवि ने **'सत री सौरभ'** के माध्यम से राजस्थान की आन बान और मान मर्यादा के लिए सर्वस्व अर्पण का आदर्श है।

भावानुवाद पद्य में कवि ने कालिदास के दूत काव्य मेघदूत व उमर खैयाम की रूबाईयों का राजस्थानी में पद्यानुवाद करके अपनी भावाभिव्यक्ति व भावक्षमता का प्रमाण प्रस्तुत किया है।आपने अनुवाद कार्य सें राजस्थानी भाषा की समृद्धि एवं विकास मे योगदान दिया है। इसी का श्रेष्ठ उदाहरण **'मेघदूत'** और **रूबाईयां** प्रमुख है। संस्कृत के श्रेष्ठ कवि कालिदास की अनुपम रचना मेघदूत संस्कृत भाषा में है, जबकि उमर खैयाम की रूबाइयां अरबी–फारसी भाषा में है। इनका राजस्थानी में अनुवाद करके आपने विशेष ख्याति अर्जित की है।

शतक साहित्य में मरुधर शतक और म्हारों गाँव के द्वारा आत्मीयता और राष्ट्रीयता के भावों को प्रकट किया है। मरुधर महिमा में धोरों की धरती का महिमा मंडन किया गया है। विविधा के माध्यम सें वर्तमान विसंगतियों के अन्तर्द्वन्द्व को व्यक्त किया है।

कवि शर्मा जी ने न केवल पद्य बल्कि गद्य में भी अपना विशिष्ट योगदान दिया है। इनकी गद्य रचनाओ में किरत्यां रों झूमकों भाग 1 व भाग 2 में लघु कथाओं के माध्यम से सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण से युग यथार्थ और आम आदमी की मनः स्थितियों का चित्रण किया है।

कवि ने अपनी एकांकियों के माध्यम से इतिहास के चर्चित एवं प्रसिद्ध कथानकों कों लेकर आदर्शो का प्रभावी चित्रण किया है। इनमें नारी अस्मिता के लिए संघर्ष, शरणागत वत्सलता, देश प्रेम, नारी रक्षा स्वाभिमान, प्रतिज्ञा पालन आदि जीवन मूल्यों से जुड़ी हुई है।

कवि ने ललित निबन्धों के माध्यम से समाज, संस्कृति एवं शिक्षा की सामयिक स्थितियों से जुड़ी समस्याओं का यथार्थ और व्यंग्य के रूप में चित्रण किया है। ये रोचक एवं सरस व्यंग्यात्मकता का पुट लिए हुए है।

कवि ने संस्मरण विधा की **'यादां री कोथळी रा माणक मोती'** कृति में विभिन्न साहित्यकारों विद्वानों इतिहासकारों राजस्थान के प्रतिष्ठित रचनाकारों कें अन्तरंग जीवन से जुड़े हुए सरस प्रसंगों का ऐसा चित्रण किया है कि उनकी तस्वीर हमारें सामने उपस्थित हो जाती है।

कवि शर्मा जी के सभी **रेखाचित्र** लोकजीवन से जुड़े हुए है। इनमें मार्मिकता, मानवीयता, सहजता, भोलापन, जीवन का अनुभव सहज निश्छलता, स्पष्टता, लोक व्यवहार की गहरी समज, सेवा भावना, आदर्शवादिता, कर्मठता, स्वाभिमान, लोक संस्कृति का जीवन्त रूप जैसे अनेक गुणों से ओत–प्रोत व रोचकता दिखाई देती है।

इनकी रचना **'भावां रो झूमको'** में गद्य गीत का भावमय चित्रण दिखाई देता है। इन गद्य गीतों में लालित्य, रसमयता, भावात्मकता, संवेदनशीलता, लौकिक–अलौकिक भाव संरचना आदि का काव्यमय चित्रण है।

कवि शर्मा जी ने अनेक पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया है। इसके साथ ही इन्होंने अनेक काव्य में भूमिका लेखन का कार्य भी अपनी अलग पहचान रखता है। इनके द्वारा लिखी गई समीक्षाएं भी अपना विशिष्ट स्थान रखती है। आपने इतिहास लेखन से ही काव्य सर्जन का कार्य आरम्भ किया, और इस कार्य से आपने अपनी पहचान को विशिष्टता प्रदान की । आपने अनेक लोक काव्यों का संग्रह, सम्पादन और प्रकाशन भी किया है।

कवि शर्मा जी बहुआयामी साहित्यकार है। आपने गद्य व पद्य दोनों ही प्रकार के काव्यों की रचना की है। आपकी पद्य रचनाओं में प्रकृति काव्य, चरित काव्य, प्रशस्ति काव्य, कथा काव्य प्रमुख है। सूँटो, डाँफी व मरुधरा री महक काव्यों में प्रकृति के आलम्बन रूप का सांगोपांग चित्रण है। सूँटो व डाँफी दोनों की भयंकरता विचलित करने वाली होती है, वहीं दोनों समाज में चली आ रही स्थिति में परिवर्तन के पक्ष में है। इनके काव्यों में

लाक्षणिक एवं व्यंग्य प्रयोग भी यत्र–तत्र–सर्वत्र दृष्टिगोचर होते है। प्रचलित लोकोक्ति मुहावरों के प्रयोग से रस वृद्धि झलकती है।

अलंकार काव्य की शोभा बढ़ाने में सहायक होते है। कवि शर्मा के काव्यों में अनुप्रास, यमक, रूपक, मानवीकरण आदि अलंकारों के साथ ही राजस्थानी के प्रमुख अलंकार 'वैण सगाई' का सफल प्रयोग का निर्वहन हुआ है।

चरित काव्यों में रचनाकार की श्रद्धा प्रस्फुटित होती है। अपने पूज्य गुरुओं तथा गुरु तुल्य पूज्यों के प्रति हृदय की भाव रश्मियां तरंगित हुई है। जिनके चरणों में आपने शिक्षा–दीक्षा प्राप्त की है, उनके प्रति श्रद्धा सुमन समर्पित करने की प्रेरणा ही इन चरित काव्यों में साकार हुई है।

कवि नें न केवल पद्य बल्कि गद्य विधा के माध्यम से भी आपकी विचारधारा प्रस्फुटित हुई है। आपकी जीवन धारा भी इनसे सम्पृक्त है। कथ्य, शिल्प एवं जीवन–दर्शन की समग्रता आपके काव्य में फलीभूत है। काव्य में सूत्रात्मक शैलीगत विशेषता दिखाई देती है। इतिहास लेखन में आपने शेखावाटी का इतिहास, शेखावाटी का साहित्य, बिसाऊ दिग्दर्शन आदि में शर्माजी की शोध क्षमता का साकार रूप दिखाई देता है। ये शोध कृतियां अपने आप में विलक्षण है।

संपादित कृतियों में 'कृपाराम खिड़िया' एक शोध परक कृति है। कृपाराम की 'राजिया रा दूहा' अमर कृति है। कृपाराम की प्रामाणिक जीवनी, उनकी कृतियों का शोध परक विवेचन करते हुए कृपाराम की प्रामाणिक रचनाओं का क्रमबद्ध एवं योजनाबद्ध प्रकाशन करके कवि शर्मा जी ने प्रशंसनीय कार्य किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि डॉ. उदयवीर शर्मा का प्रसादमय, सरस एवं प्रभावोत्पादक साहित्य उनकी साहित्य–साधना का प्रस्फुटन है, जिसमें युगीन परिवेश तथा समसामयिक परिपेक्ष्य भी गुंजित है। सूँटो व डॉफी दोनों के उपमान वर्तमान परिस्थितियों में सटीक है। शर्मा जी की लेखनी निरन्तर प्रवाहमयी बनी रहेगी, उनसे साहित्य जगत् को बहुत आशाएं है।

दिनांक :

प्रियंका शर्मा

शोधार्थी (RS/1410/13)

परिशिष्ट

सन्दर्भ – 241–245

(क) आधार ग्रंथ

(ख) सन्दर्भ ग्रंथ सूची

(ग) पत्र –पत्रिकाएं

(घ) शब्दकोष

परिशिष्ट

आधार ग्रन्थ सूची (डॉ. उदयवीर शर्मा द्वारा रचित एवं सम्पादित)

➢ आधार ग्रंथ –

1. डांफी(राजस्थानी प्रकृति काव्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1973
2. सूंटो(राजस्थानी प्रकृति काव्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1980
3. किरत्यां रो झूमको(राजस्थानी लधुकथा) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1982
4. श्री लाल शतक (राजस्थानी पद्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1983
5. गंगाधर शतक(राजस्थानी पद्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , संवत् 2004
6. मनोहर शतक(राजस्थानी पद्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1988
7. सुरजन सुजस(राजस्थानी दूहा शतक) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1992
8. मोलकै रा सोरठा(राजस्थानी संबोधन काव्य): डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1996
9. म्हारो गांव(राजस्थानी दूहा शतक) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1997
10. मरूधर शतक(राजस्थानी दूहा सोरठा) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 1999
11. गुरु महिमा शतक(राजस्थानी पद्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2000
12. मरूधरा री महक(राजस्थानी प्रकृति काव्य): डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2001
13. श्रद्धा शतक(राजस्थानी पद्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2003
14. मूमल(राजस्थानी कथा काव्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2004
15. गौङ बुलावै घाटव(राजस्थानी एकांकी) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2006
16. श्रद्धा सागर (राजस्थानी भक्ति काव्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2007
17. बामन बन्यो विराट(राजस्थानी पद्य) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2007
18. आवै फणी हुंसेर(संस्मरण) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2008

19. किरत्या रो झुमको भाग–2(लघुकथा) : डॉ. उदयवीर शर्मा , सन् 2008

20. तिरवेणी (लघु निबंध) : डॉ. उदयवीर शर्मा ,

21. डॉ. उदयवीर शर्मा समग्र(प्रथम खण्ड पद्य) – सं. डॉ. गोरधन सिंह शेखावत वर्ष 2011

22. डॉ. उदयवीर शर्मा समग्र (द्वितीय खण्ड पद्य) – सं. डॉ. गोरधन सिंह शेखावत वर्ष 2013

23. राजस्थानी चौपदी : डॉ. उदयवीर शर्मा

24. भावां री बानगी : डॉ. उदयवीर शर्मा

➢ **सहायक ग्रंथ–**

1. डॉ. उदयवीर शर्मा की रचना यात्रा : डॉ. गोरधन सिंह शेखावत सन् 2007

2. यादव वंश (अप्रकाशित) : बख्शी झूथालाल

3. हमारा राजस्थान : पृथ्वीसिंह मेहता

4. शेखावाटी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन : डॉ. कैलाश चन्द्र अग्रवाल

5. राजस्थानी भाषा और साहित्य : डॉ. हीरालाल महेश्वरी

6. शेखावाटी के साहित्य का इतिहास : डॉ. उदयवीर शर्मा

7. शेखावाटी का भूगोल : श्री नारायण मिश्र

8. राजस्थानी साहित्य का इतिहास : डॉ. पुरूषोत्तम मेनारिया

9. राजस्थानी भाषा एवं साहित्य दिग्दर्शन : रामकुमार शर्मा

10. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल

11. राजस्थानी वीर गीत : सं. सौभाग्य सिंह शेखावत

12. राजस्थानी साहित्य एक परिचय : नरोत्तम दत्त शर्मा

13. आधुनिक राजस्थानी साहित्य : श्रीलाल मिश्र

14. राजस्थानी : डॉ. सुनीता चाटुर्ज्या

15. शेखावाटी साहित्य का इतिहास : रतन लाल मिश्र

16. फतेहपुर परिचय : दिनमणी

17. सीकर का इतिहास : झाबर मल शर्मा

18. राजस्थानी भाषा और साहित्य : मोती लाल मेनारिया

19. आधुनिक राजस्थानी साहित्य : प्रेरणा और प्रवृत्तिया : डॉ. किरण नाहटा

20. महादेवी : प्रकृति और काव्य : डॉ. रघुवंश

21. राजस्थानी कविता : एक विश्लेषण : डॉ. श्याम शर्मा

22. स्वातंत्र्योत्तर राजस्थानी काव्य : लक्ष्मी कांत व्यास

23. राजस्थानी प्रेमाख्यान : परम्परा और प्रगतिः डॉ. रामगोपाल गोयल

24. सांस्कृतिक राजस्थान : प्रथम खण्ड : रतन शाह

25. राजस्थानी साहित्य री समीक्षा : डॉ. मनोहर शर्मा

26. राजस्थानी साहित्य सम्पदा : सौभाग्य सिंह

27. राजस्थानी शब्दकोष : श्री सीताराम लालस

28. राजस्थानी भाषा और साहित्य : डॉ. हीरालाल माहेश्वरी

29. शेखावाटी के साहित्य का इतिहास : डॉ. उदयवीर शर्मा

30. शेखावाटी का प्राचीन इतिहास : सुरजन सिंह शेखावत

31. राजस्थानी अंक : डॉ. तेजसिंह जोधा

➢ **पत्र–पत्रिकाएं –**

1. मरू भारती – पिलानी
2. बणजारो – पिलानी
3. वैचारिकी – बीकानेर
4. जागती जोत – बीकानेर
5. मरूवाणी – जयपुर

6. माणक – जोधपुर

7. नैणसी – कलकता

8. राजस्थली – श्री डूंगरगढ़

9. वरदा – बिसाऊ

10.मरू श्री – चूरू

11.परम्परा – जोधपुर

12.विश्वम्भरा – बीकानेर

13.साधना – डूंडलोद

14.शोध परिवेश – उदयपुर

15.राजस्थानी गंगा – बीकानेर

16.शेखावाटी गंध – नवलगढ़

➢ शब्दकोष –

1. राजस्थानी हिन्दी कोष – सं. सीताराम लालस
2. राजस्थानी–हिन्दी शब्दकोष – सं. आचार्य बद्रीप्रसाद सांकरिया

साक्षात्कार

डॉ. उदयवीर शर्मा हिन्दी एवं राजस्थानी के जाने–माने साहित्यकार, विद्वान् शोधकर्ता, इतिहासकार एवं लोक साहित्य के मर्मज्ञ हैं। अपने सृजन में मस्त रहने वाले डॉ. शर्मा पिछले साठ वर्ष से दोनों भाषाओं (हिन्दी–राजस्थानी) में समान गति से रचनात्मक एवं समीक्षात्मक साहित्य लिखते रहें हैं। उनके पास साहित्यिक क्षेत्र की गतिविधियों का गहरा अनुभव हैं। सुलझे हुए चिंतक, स्पष्टवादी और विचार–विमर्श में गहरी रूचि रखने वाले हैं, ऐसी स्थिति में उनसे संवाद की योजना बनाई गई।

प्रियंका : सबसे पहला सवाल तो यह है कि आपको सृजन की प्रेरणा कहाँ से मिली और फिर किस पत्रिका के माध्यम से आपकी रचनाएँ प्रकाश में आई ? आपने अपने लेखन की शुरूआत राजस्थानी में की या हिन्दी में?

डॉ. शर्मा : मेरा मानना है कि सर्वप्रथम बालक और विद्यार्थी को सृजन की प्रेरणा मुख्यतः घर और विद्यालय से मिलती है। तीसरा स्थान साहित्य–समाज को दिया जा सकता है। मुझे भली प्रकार स्मरण है कि जब में चौथी कक्षा में (सन् 1944 ई.) था तब विद्यालय में प्रत्येक शनिवार को आयोजित होने वाली 'बाल सभा' में मुझे एक कविता और एक कहानी सुनाने पर क्रमषः एक पुस्तक कविता की तथा एक पुस्तक कहानियों की तत्कालीन हेडमास्टरजी स्व. लालजी मिश्र ने मेरा उत्साहवर्द्धन करने की दृष्टि से पुरस्कार स्वरूप दी थी। यह मेरे लिए प्रेरणा का प्रथम दिन था। उनको लेकर जब मैं घर आया तो स्व. पू. दादाजी रामदयालजी शर्मा ने मेरा बहुत लाड किया । वे मुझे बहुत प्यार किया करते थे। उन्होंने ही मेरा वर्तमान नाम (उदयवीर) रखा। वैसे जन्म पत्रिका में मेरा नाम उमादत्त अंकित है। उनका मुझे समय–समय पर बहुत आशीर्वाद मिला। वे उर्दू और फारसी के जानकार थे। वे इनमें कविता भी किया करते थे। स्व पू. पिताजी चिमनलालजी भी अनेक भाषाओं के तत्कालीन व्यवस्थाओं के अनुसार अपने स्वाध्याय के बल अच्छे जानकार थे। इन दोनों का आशीर्वाद तथा पू. पं. श्री लालजी मिश्र का उत्साहवर्द्धन मुझे अप्रकट रूप में प्रेरित करते रहे हैं। आगे चलकर आर. एन. रूइया हाई स्कूल, रामगढ़ में भी (सन् 1948–50 ई.) मुझे पू. गुरुवर्य डॉ. मनोहरजी शर्मा से मार्गदर्शन मिला। उनकी साहित्यिक गरिमा के सम्मुख में सदैव नतमस्तक रहा। वे मेरे प्रेरणापुरुष बने रहे। रचना प्रकाशन के क्रम में

कहना चाहूँगा कि आर. एन. रुइया हाई स्कूल, रामगढ़ की विद्यालय पत्रिका 'शुभ्रा' में (सन् 1949–50) मेरा लेख सर्वप्रथम छपा। आनन्द आया, उत्साह बढ़ा प्रेरणा मिली। आगे चलकर बिसाऊ मिडिल स्कूल, बिसाऊ की हस्तलिखित पत्रिका 'सौरभ' में (सन् 1950–52) मेरे लेख–बिसाऊ का संक्षिप्त इतिहास तथा बिसाऊ का भूगोल क्रमशः प्रकाशित हुए। सन् 1950 में इस विद्यालय में मैं गुरु–पद (अध्यापक) पर नियुक्त हो गया था। श्री मनोहरजी शर्मा इस मिडिल स्कूल के प्रधानाध्यापक थे। इनके मार्गदर्शन में ही यह पत्रिका प्रकाशित होती रहीं। इसके बाद तो यह लेखन क्रम चालू रहा।

जहाँ तक सुस्थापित और सुख्यात साहित्यिक पत्रिका का प्रश्न है, 'वरदा' त्रैमासिक शोध पत्रिका का प्रकाशन सन् 1958 में (जनवरी–मार्च 58) प्रारम्भ हुआ। इसके प्रथम अंक से ही मेरे लेख, राजस्थानी व्रत कथाएं क्रमशः छपने लगी और मैं लेखकों की पंक्ति में आ खड़ा हुआ। इसके बाद तो राजस्थान भारती (बीकानेर), मरु भारती (पिलानी) आदि साहित्यिक पत्रिकाओं में मेरे लेख समय–समय पर छपने लगे। और मैं एक साहित्यकार के रूप में नामांकित हो गया। मेरे लेखन की शुरूआत हिन्दी से ही माननी चाहिए क्योंकि हिन्दी की रचनाएँ ही प्रथम प्रकाश में आईं। वैसे राजस्थानी में भी लेखन कार्य साथ–साथ चालू हो गया था। परन्तु राजस्थानी की रचनाएँ बाद में प्रकाशित होने लगीं। उस समय मरुवाणी (जयपुर)ही एकमात्र प्रख्यात पत्रिका थी। श्री रावतजी उसके संपादक थे। 'ओळमो' (रतनगढ़) और बिणजारो (पिलानी) क्रमशः प्रसिद्धि में आए। रावतजी के बुजुर्ग बिसाऊ के मूल निवासी थे। बिसाऊ से चूरू आए। फिर रावतजी चूरू से बीकानेर तथा बीकानेर से जयपुर में सुस्थापित हुए।

प्रियंका शर्मा : उस समय आपकी अग्रज पीढ़ी के रचनाकार कौन–कौन थे ?

डॉ.शर्मा : उस समय (सन् 1950–70) शेखावाटी अंचल तथा पूरे राजस्थान में साहित्यिक चेतना अपने प्रवाह पर थी। मेरी अग्रज पीढ़ी के साहित्यकारों की सूची बहुत लम्बी हो सकती है परन्तु उस समय मेरे आदर्श प्रेरणास्त्रोत और मार्गदर्शक रहे विद्वान साहित्यकारों की सूची में से कतिपय प्रमुख नामों का उल्लेख करना चाहूँगा। सर्वश्री श्रीलालजी मिश्र, डॉ. मनोहर शर्मा, पं. तुलाराम जोशी, किशनसिंह चौहान, निरंजनलाल जोशी, डॉ. कन्हैयालाल सहल, बनवारीलाल मिश्र 'सुमन', 'विमलेश जी' गणपति स्वामी, अगरचंद नाहटा, नरोत्तमदास स्वामी, मोहनलाल पुरोहित, मुरलीधर व्यास, श्रीलाल नथमल जोशी, दीनदयाल ओझा, मूलचंद 'प्राणेश', रावतजी सारस्वत, सुबोधजी अग्रवाल, गोविंदजी अग्रवाल, किशोर

कल्पनाकांत, झाबरमलजी शर्मा, सूर्यशंकर पारीक, गजानन वर्मा, बदरीप्रसाद साकरिया, ठा. सुरजनसिंह शेखावत, बजरंगलाल पारीक 'लाल', माधव शर्मा आदि।

प्रियंका : 'वरदा' राजस्थान की महत्त्वपूर्ण शोध पत्रिका है जो आज भी लगातार प्रकाशित हो रही है। 'वरदा' से आपका प्रारम्भिक जुड़ाव और संपादन सम्बन्धी घटना–प्रसंग या संस्मरण भी बताएँ जो उस समय की साहित्यिक स्थितियों पर प्रकाश डालती हो।

डॉ. शर्मा : 'वरदा' का प्रकाशन त्रैमासिक शोध पत्रिका के रूप में जनवरी 1958 से प्रारम्भ हुआ। इसमें अप्रकाशित, मौलिक और महत्त्वपूर्ण रचनाओं को प्राथमिकता दी गई। इसमें लोक साहित्य, प्राचीन काव्य, डिंगल गीत, मूर्तिकला, शिलालेख, प्राचीन वात साहित्य आदि से जुड़ी महत्त्वपूर्ण रचनाएँ प्रकाशित हुईं। तत्कालीन विद्वानों, शोध–प्रेमियों, इतिहासविदों आदि में यह विशेष लोकप्रिय हुई। वस्तुतः आपके कथन के अनुसार यह एक महत्त्वपूर्ण शोध पत्रिका के गौरव से अभिमंडित हुई है, और है। यह अद्यावधि निरंतर प्रकाशित होती आ रही है। इसके पास अपना कोई कोष नहीं है, संचित पूंजी नहीं है। तथा धन संग्रह–विधि में कोई स्थायी भाव नहीं है। फिर भी वरदा की कृपा से वरदा प्रकाशित हो रही है। प्रसन्नता की बात यह है कि इसका कोई अंक लोपित नहीं हुआ है। अपनी तीव्र व मंथर–गति से यह गतिशील है।

वरदा के प्रथम अंक से ही मेरा इससे जुड़ाव है। इसके लेखक, व्यवस्थापक तथा संपादक के रूप में अद्यावधि इससे जुड़ा हूँ। डॉ. मनोहर शर्मा कहा करते थे, 'वरदा साहित्य संजीवनी है, ख्याति है, शक्ति है, भक्ति है, मेरी गति–मति है। यह सुख का धाम है, कीर्ति का काम है और ज्ञान का थाम (स्तंभ) है। गाँव का गौरव है तो शोध की सीढ़ी है। साहित्य का सेवरा है तो मेरी सबकुछ है। इसकी सेवा–साधना मे बहुत आनन्द आता है'– इस भावना और तपस्या के बल पर ही वरदा अपने जीवन के 61 वे वर्ष (सन् 2018) में चल रही है। वरदा की सुदीर्घ जीवन यात्रा में अनेक रोचक प्रसंग जुड़े हैं। उनमें से दो–चार आपको संक्षेप में बात रहा हूँ।

––एक बार वरदा के दो बंडल आए। उनको कार्यालय में पहुँचाना था। सभी काम सेवा और समरपण के साथ होते थे। मैं और भाई श्री अमोलकचंदजी जांगिड़ उन बंडलों को अपने कंधों पर लिए कार्यालय पहुँच गए। वहाँ डॉ. मनोहरजी शर्मा, संपादक बैठे थे तो उन्होंने देखते ही कहा, जब दो गजेटेड ऑफिसर वरदा के लिए कुली बने हुए हैं, तो यह दीर्धजीवी क्यों नहीं होगी, अवश्य होगी। यह सुनकर सभी हँस पड़े और सोचने लगे। उस समय हम दोनों क्रमशः शिक्षा विभाग में प्रधानाचार्य और प्रधानाध्यापक थे।

––वरदा को निकलते हुए कई वर्ष हो गए थे। एक दिन हम सभी कार्यालय में बैठे अपना–अपना कार्य कर रहे थे। दो व्यक्ति मिलने आए। चर्चा के दौरान उन्होंने कहा, 'वरदा से आपको क्या कमाई हो जाती है ? कुछ लाभ हो रहा होगा?' वहाँ बैठे हम सब यह सुनकर आश्चर्यचकित हो गए। सोचा, इनकी वरदा तथा हमारी सेवा के लिए क्या सोच है ? डॉ. मनोहरजी शर्मा ने तत्काल प्रभावी ढ़ग से कहा, 'इससे कमाई नहीं होती, जेब से कुछ लगाया जाता है। यह सेवाभावी साधना है। आप क्या जानो, आप शुद्ध व्यापारी जो ठहरे।' वे दोनों, उत्तर सुनकर चुप हो गए।

––मैंने डॉ. मनोहरजी शर्मा से पूछा, 'आजकल शोधपूर्ण लेख मिलने कम हो गए हैं, वैसी मूल्यवान महत्त्वपूर्ण रचनाएँ भी वरदा के लिए नहीं मिल रही हैं। इसका क्या कारण है?' तो डॉ. शर्मा का उत्तर था, 'नियति को जो काम करवाना होता है, वही होता है। उसके लिए सहयोगीमंडल भी वह साथ ही भेजती है। भगवान राम के साथ वानर दल आंये और श्री कृष्ण के साथ भी अपना दल था। गाँधी जी कितने सहयोगियों के साथ जनमें ! आदि। इसी प्रकार वरदा के लिए भी 'लेखकमंडल' आया। अब वे धीरे–धीरे अपना–अपना कार्य कर चले गए। जो होना है, वह हो रहा है। चिंता की बात नहीं, निराशा का प्रश्न नहीं। अपनी लगन और निष्ठा से काम करते रहों।' यह सुनकर हम बड़े उत्साहित हुए और आज की शोधपरक दृष्टि के प्रति आश्वस्त हुए। वरदा में अब वैसे शोधपरक लेख नहीं आते हैं।

––एक बार एक शिष्य के घर मिलने गए। वह दिसावर से आया हुआ था। इसने एक सौ एक रुपये चरण स्पर्श करके दिए तो डॉ. मनोहरजी ने तत्काल कहा–'तू ग्यारह सौ रुपये वरदा के लिए दे। यह भेंट रहने दे। गुरु और सरस्वती, दोनों एक ही है। तू सरस्वती (वरदा) के लिए भेंट दे।' शिष्य ने तत्काल वरदा के लिए भेंट राशि ग्यारह सौ रुपये दिए। मैं डॉ. शर्मा के साथ ही था। सभी बड़े प्रसन्न हुए। उस शिष्य का नाम श्री रामावतार कसेरा (बिसाऊ) था। वह आज भी वरदा को आर्थिक सहयोग देते रहते हैं।

––डॉ. मनोहरजी शर्मा पूजा–अर्चना का प्रदर्शन नहीं करते थे। सरस्वती को मन–मन में मानते थे। शंका से भरा हुआ प्रश्न करने पर उनका उत्तर था। 'वरदा (सरस्वती) की साधना सब देवों की साधना है। ज्ञान में सब समाए हुए हैं। वरदा – प्रकाशन एकनिष्ठ साधना का ही फल है। वह साधना अद्यावधि उसी भाव के साथ संपन्न हो रही है।'

–– समय व परिस्थितियों के साथ वरदा मोटी–पतली निकलने लगी तो एक पाठक ने प्रश्न किया, 'आजकल 'वरदा' क्षीणकाय क्यों हो गई, पहले तो मोटी निकलती थी ?' इस पर उनका सटीक उत्तर सुनिए, बड़ा काम तो हम से होता नहीं, कर नहीं सकते और छोटा

काम हम करना नहीं चाहते, अपना हलकापन महसूस करते है। तो इसका प्रतिफल तो शून्य होगा। इसलिए मोटी या पतली वरदा निकलनी चाहिए। निरंतरता में विलोपन नहीं होना चाहिए। इसलिए जैसी सुविधा और परिस्थिति बने–मोटी या पतली–वरदा का अंक निकलना चाहिये। यह उत्तर सुनकर पाठक अति प्रसन्न और उत्साहित हुआ। वरदा अब इसी स्थिति में प्रकाशित हो रही है।

–– ढलती अवस्था में डॉ. मनोहरजी शर्मा लम्बे बीमार पड़े तो मुझे बीकानेर बुलाया। पहले भी उनके जब मोतियाबिंद हुआ था तब वरदा के प्रकाशन का भार मेरे ऊपर आया था, ठीक होने पर मैंने उनको सौंप दिया। इस बार उन्होंने वरदा का पूरा अभिलेख (रजिस्टर लेख आदि) मेरे हाथों में थमा दिया, कुछ बोले नहीं। मौन भाव से सबकुछ कह दिया। वे मेरी ओर देखते रहे। मैं भी कुछबोला नहीं। सारा अभिलेख ले लिया। मौन भाव से चुपचाप। इस प्रकार मौन भाव से उत्तराधिकर का दायित्व मेरे कंधों पर आ गया। यह एक बड़ा रोचक, करुण भाव का दृश्य था। कुछ दिनों बाद दि. 18.1.99 को डॉ. मनोहरजी शर्मा का स्वर्गवास हो गया। डॉ. अमोलकचंद जांगिड़ मेरे साथ थे। अब वे भी स्वर्गपथगामी हो गए। अब तो मैं अकेला और मेरी वरदा है। दिव्यलोक के रसानन्द की अनुभूति कर लेते हैं।

प्रियंका शर्मा : वरदा से पूर्व उस समय राजस्थानी साहित्य से सम्बन्धित कौन–सी पत्रिका थी?

डॉ. शर्मा : वरदा से पूर्व प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं में झुंझुनूं जिले के पिलानी नगर से प्रकाशित होने वाली त्रैमासिक शोध पत्रिका 'मरु भारती' अपने समय की महत्त्वपूर्ण पत्रिका थी। इसके संपादक विद्वान् डॉ. कन्हैयालालजी सहल थे। इसमें लोक साहित्य, झीड़े, वात साहित्य विश्लेषण–विवेचन, शिलालेख, कला, साहित्य, संस्कृति, इतिहास, प्राचीन काव्य आदि से जुड़ी सामग्री प्रकाशित होती थी।

प्रियंका शर्मा : साहित्यिक रचनाकर्म के साथ–साथ आपकी शेखावाटी के इतिहास में गहरी रुचि रही है और आपने इतिहास की पुस्तकें, भूमिकाएँ, आलेख वगैरह भी लिखे हैं तो इतिहास से जुड़ने की यह प्रेरणा आपको किससे मिली?

डॉ. शर्मा : इतिहास से जुड़ने की प्रेरणा घर से ही मिली, ऐसा मानना चाहिए। पिताजी इतिहास के अच्छे जानकार है। दादाजी इतिहास की बातें बताया करते थे। पहला, प्रथम लेख 'बिसाऊ का संक्षिप्त इतिहास' हस्तलिखित सौरभ पत्रिका के लिए पूज्य डॉ. मनोहरजी शर्मा की प्रेरणा से लिखा। उस समय इस विषय की सामग्री संचय के लिए मैं बिसाऊ

ठिकाने के रिकार्ड कीपर श्री राधा किशनलाल जी कायस्थ के पास गया। उन्होंने तत्काल कह दिया, आप इतिहास लिख ही नहीं सकते।' इस बात को मैंने चुनौती माना और उनको लिखकर दिखा दिया। वे मान गए, प्रसन्न हुए। तब से ही (1950–52) इस ओर झुकाव हो गया। मैंने इतिहास पहले लिखा, साहित्य रचनाएँ बाद में कीं। इसके बाद तो शेखावाटी का संक्षिप्त इतिहास, बिसाऊ दिग्दर्शन तथा वीरवर सलहदी सिंह शेखावत ग्रंथ लिखे। वर्तमान में बिसाऊ का वृहद इतिहास का लेखन भी किया है। परन्तु इतिहास ग्रंथों को छपवाने की सबसे बड़ी समस्या मेरे सामने आ खड़ी होती है। इसलिए साहित्य की ओर झुकाव हो गया। इसके प्रकाशन में सरलता रहीं।

ठा. सुरजनसिंहजी शेखावत (झाझड़, झुंझुनूं) एक सुख्यात इतिहास विज्ञ एवं सिद्धहस्त लेखक थे। उन्होंने अपने कई ग्रन्थों की भूमिकाएँ मेरे से लिखवाईं। श्री रघुनाथसिंह शेखावत के कई ग्रन्थों की भूमिकाएँ भी मैंने लिखीं। परन्तु अब प्राथमिकता साहित्य लेखन की ओर ही है। आनन्द इतिहास लिखने में भी खूब आया है और अब भी आता है।

प्रियंका शर्मा : आकी काव्य रचनाओं को पढ़ने पर प्रतीत होता है कि आपकी काव्य रचना की संवेदना प्रकृति है। डांफी, सूंटो, मरुधर री महक या अन्य फुटकर कविताएँ–यह सब कुछ प्रमाणित करता है कि आपका अपनी मिट्टी, गाँव, परम्परा, परिवेश, लोकरंग आदि से जुड़ाव–लगाव है। इसका क्या कारण है? आज तो गाँव बहुत बदल गए है।, पर्यावरण भी बदला है। गाँव के व्यक्ति की आस्था भी बदली है। इस बदलाव के बारे में आपके क्या विचार है?

डॉ. शर्मा : हाँ, मेरी काव्य–रचना की संवेदना प्रकृति है। साहित्य समाज से जुड़ा है और समाज का और समाज का प्रमुख अंग है, मनुष्य। मनुष्य संवेदनाओं से ही मनुष्य है। संवेदना रहित मनुष्य सामाजिक नहीं हो सकता। मेरी लगभग सभी रचनाएँ मनुष्य केद्रित हैं। समाज से उत्प्रेरित हैं। प्रकृति का मानवीकरण, साधारणीकरण मेरी रचनाओं में देखा जा सकता है। इसलिए मेरी काव्य रचनाओं की संवेदना प्रकृति है डांफी, सूंटो आदि में मानव की संवेदना ही बोल रही है। मैं बचपन से ही राष्ट्र भावना से प्रेरित रहा हूँ, राष्ट्र का मूल अंग है, गाँव। इसलिए मुझे सदा ग्रामीण परिवेश अच्छा लगता है। वहाँ की मिट्टी, परम्परा, लोकरंग आदि ने मुझे प्रभावित किया है। मुझे ग्रामीण परिवेश से अधिक प्यार है। यह कथन आपका सही है कि नवीन परिवर्तन तेजी से आ रहा है। सबकुछ बदला है। परिवर्तन प्रकृति का अटल नियम है। इसे स्वीकार करने में ही आनन्द है। परिवर्तन विकास से जुड़ा है।

इस बदलाव में विकास के तत्त्व ही खोजने चाहिए। इसमें से विनाश के बीजों को निकाल फेंकना चाहिए। तभी समाज का भला है। यही काव्य का प्रमुख उद्देश्य है।

प्रियंका शर्मा : आपको गाँव ही अधिक प्रिय है। ऐसा क्यों? क्या आपकी रचनाओं की प्रेरणा–शक्ति अपनी मिट्टी से जुड़े लोगों की आस्था, उनकी लोक संस्कृति या उनका इतिहास है ?

डॉ. शर्मा : हाँ, मेरी सभी काव्य–रचनाएँ गाँव में रहकर ही लिखी गई हैं। शिक्षा विभाग के आदेशानुसार विभिन्न पदों पर मेरा पदस्थापन गाँवों में ही हुआ। चालीस वर्षों तक ग्रामीण सेवा में ही मैं कार्यरत रहा। गाँव का वातावरण सदा शांत, रोचक तथा निर्दोष लगा। लेखनकार्य के लिए अच्छा समय मिला। काम प्रेरणादायक रहा। ग्रामीण आस्था, लोक संस्कृति, लोक इतिहास, लोक रंग आदि से मुझे कथ्य सुलभ होते रहे। प्राकृतिक परिवेश को निकट से देखने का सौभाग्य मिला। मेरी रचनाओं की प्रेरणा शक्ति वस्तुतः लोक जीवन ही है। आपका कथन सत्य है।

प्रियंक शर्मा : 'सूँटो' और डांफी 'आपके दो प्रमुख प्रकृति काव्य हैं। जिनके माध्यम से आपकी प्रगतिशील विचारधारा का पता चलता है। इन काव्यों के विचार–दर्शन को स्पष्ट कीजिए।

डॉ. शर्मा : अध्ययनकाल में कक्षा दस में आते–आते (1949–50) मन में विचार उभरे कि धरती पर यह विषमता क्यों है? भगवान ने तो कोइ भी असमानता नहीं की यह तो मानवनिर्मित है। यह मिटनी चाहिए। ये विचार मन में जमने लगे। उन दिनों कक्षा दस में एक नए गुरुजी हिन्दी पढ़ाने वाले आए। नाम तो उनका याद नहीं रहा, कोई 'नवीन' थे। उन्होंने एक कविता प्रगतिशीलता पर सुनाई, कवि थे। उसकी एक पंक्ति याद है–'घुमड़–घुमड़ कर बादल आए, सब धरती समतल हो जाए,' बड़ी अच्छी लगी। मन को प्रभावित करने लगी। मन में जम गई और मन ने ऐसी कविता बनाने का निश्चय कर लिया। ये ही विचार आगे चलकर 'काव्यरूप' में प्रकट हुए। मानवनिर्मित विषमताएँ तो आज भी मैं सोचता हूँ मिटनी ही चाहिए, परन्तु भाग्यवाद भी अब अपना प्रभाव जमाने लगा है। समानता का 'विचारदर्शन' ही इन काव्यों में अभिव्यक्त हुआ है।

प्रियंका शर्मा : साहित्य से जुड़े रहने के बावजूद भी आप साहित्यिक गुटबाजी या साहित्यिक राजनीति से सर्वथा दूर रहे हैं। आपके क्या विचार हैं?

डॉ. शर्मा : हाँ, आपका कथन सर्वथा सत्य है। मैं 'गुटबाजी या राजनीति' से सदा दूर रहा हूँ। मैंने तो साहित्य के माध्यम से सरस्वती की शुद्ध सात्त्विक भाव सेवा करने का प्रयास किया है। इसमें गुटबाजी या राजनीति का कोई लेना–देना नहीं है। सेवा करो, मेवा पाओ। सरस्वती की भौतिक साधना में गुटबाजी या राजनीति चलती है। दिव्य आध्यात्मिक साधना ही दिव्यानन्द प्रदान करने वाली है। साधना के फल के रूप में जो पद, प्रतिष्ठा, मान–सम्मान प्राप्त हुआ है उसे सरस्वती के प्रसाद रूप में स्वीकार किया है। इनको प्राप्त करने के लिए मैंने कभी भाग–दौड़ नहीं की, याचना नहीं की। ये स्वयं प्रसाद रूप में मेरे पास आए हैं। प्रसाद फलदायक होता है। गुटबाजी या राजनीति की जोड़–तोड़ में रत रहने पर साधना में बाधा आती है। एक समर्पित सरस्वती साधक के लिए, साधना ही सर्वोपरि है।

प्रियंका शर्मा : साहित्य के प्रति रुझान आज धीरे–धीरे कम होता जा रहा है। ऐसा क्यों है? क्या समाज को साहित्य की जरूरत नहीं है? साहित्य में इतनी आपा–धापी और टांग खिंचाई श्रेष्ठ लेखन में बाधक सिद्ध नहीं हो रही है क्या?

डॉ. शर्मा : यह सत्य है। साहित्य के प्रति रुझान कम होता जा रहा है। कारण सामने है। मन की भूख मिटाने के लिए अन्य साधन आ गए हैं। भौतिक भाग–दौड़ मच गई, साधन सुविधाओं के जुगाड़ में ही दिन उगने और छिपने लगा है तथा समाज के स्वाद में परिवर्तन आया है। फिर भी यह नहीं माना जा सकता कि समाज को साहित्य की जरूरत नहीं है। साहित्य के बिना समाज जड़वत् है, शून्य है। समाज में सरसता साहित्य से ही आती है। समय के साथ न्यूनाधिक परिवर्तन आते रहते हैं। साहित्य तो समाज की अमर साधना है। आपाधापी और टांग खिंचाई साहित्य में नीरसता उत्पन्न करती है। श्रेष्ठ लेखन में ये निश्चित ही बाधक हैं। दिव्य साधना में तो सहजानन्द ही समाया हुआ है। साधक को इन विकृतियों से बचना चाहिए, दूर रहना चाहिए, तभी साहित्य की दिव्य साधना सफल होगी। श्रेष्ठ लेखन होगा। इन विकृतियों में उलझा हुआ साहित्यकार सत्–चित–आनन्द को प्राप्त नहीं कर सकता।

प्रियंका शर्मा : आप हिन्दी व राजस्थानी, दोनों भाषाओं में लिखते हैं। इन दोनों में आपको अधिक प्रिय कौन–सी–भाषा है और क्यों?

डॉ. शर्मा : मैं दोनों भाषाओं में लिखता हूँ। हिन्दी राष्ट्रभाषा है। देश के लिए एकता की प्रतीक है तथा विशालता के शिखर पर है। राजस्थानी मेरी 'मायड़ भाषा' है। इसको सबल बनाना भी विकास के लिए आवश्यक है। देश के विकास रथ में दो पहिए हैं। इस दृष्टि से राजस्थानी अधिक प्रिय लगती है। मेरी मौलिक रचनाएँ राजस्थानी में है। इसको गतिशील

और सुदृढ़ बनाना प्रत्येक राजस्थानी लेखक का पावन कर्त्तव्य होना चाहिए। राजस्थानी सबलता के लिए तेज गति से अग्रसर है। इसको पोषण और संरक्षण मिलना चाहिए।

प्रियंका शर्मा : कतिपय लोगों की मान्यता है कि राजस्थानी का प्रयोग करते रहने से हिन्दी पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, आपकी क्या राय है?

डॉ. शर्मा : यह मान्यता गलत है। कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता। सभी देश वासी अपने—अपने प्रान्त की भाषा का प्रयोग करते आए हैं, कर रहे हैं। उनके प्रयोग से जब कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता तब राजस्थानी के सम्बन्ध में ऐसी धारणा क्यों? यह भावों का दुराग्रह है तथा पूर्वाग्रह भी। 'मायड़ भाषा' के प्रयोग को मनोविज्ञान भी सार्थक मानता है। सहज, सरल तथा स्वाभाविक अभिव्यक्ति का सभी समर्थन करते हैं। इस दृष्टि से राजस्थानी का प्रयोग सभी के लिए हितकर है, विपरीत प्रभावी नहीं है।

प्रियंका शर्मा : राजस्थानी भाषा के भविष्य के विषय में आपका क्या अनुमान है?

डॉ. शर्मा : अनुमान नहीं, पक्का विश्वास है कि राजस्थानी भाषा को निकट भविष्य में संवैधानिक मान्यता मिलेगी। इसको राजकीय संरक्षण प्राप्त होगा। साहित्य—समाज में इसका प्रचार—प्रसार और अधिक होगा तथा पूर्ण जन—समर्थन से इसका भविष्य उज्ज्वल तथा विकासमान होगा।

प्रियंका शर्मा : आप गद्य और पद्य, दोनों प्रकार की रचनाएँ करते हैं। आपके पद्य प्रायः राजस्थानी में ही क्यों होते हैं?

डॉ. शर्मा : मेरी गद्य और पद्य, दोनों प्रकार की मौलिक रचनाएँ, सभी राजस्थानी भाषा में लिखी हुई हैं। मैंने गद्य कम तथा पद्य अधिक लिखा है। राजस्थानी को भी हिन्दी की भांति पूर्ण विकसित भाषा बनाने में अपना पूर्ण योगदान करने के उद्देश्य से ही मैंने अपने पद्य को राजस्थानी में लिखना ठीक समझा। राजस्थानी को विकास की विशेष आवश्यकता है। राजस्थानी राजस्थान की जनवाणी है।

प्रियंका शर्मा : आपको अनेक पुरस्कार मिले हैं। आपकी इनके प्रति क्या धारणा है? क्या यह साहित्यकार के रचनाकर्म की सही कसौटी है?

डॉ. शर्मा : पुरस्कार से प्रोत्साहन मिलता है, आर्थिक सहयोग भी, यह ठीक है। परन्तु पुरस्कार को साहित्यकार के पास चल कर आना चाहिए, न कि साहित्यकार स्वंय चल कर पुरस्कार के पास जाये। यह प्रक्रिया गलत है, गरिमा के अनुकूल नहीं मानी जा सकती।

पुरस्कार को साहित्यकार के रचनाकर्म की कसौटी भी नहीं माना जा सकता। यह भाव–जगत् का खेल है। भावों का मूल्याकंन करना बड़ा कठिन कार्य है।

प्रियंका शर्मा : आपका रूझान लिखने में अधिक तथा प्रकाशन में कम रहा है। ऐसा क्यों है? आप प्रकाशन में पिछड़े अवश्य हैं। चालीस–पचास वर्ष पहले लिखी हुई आपकी रचनाएँ अब प्रकाश में आई हैं। इसे क्या कहा जावे – आपकी उदासीनता या आर्थिक संकोच?

डॉ. शर्मा : आपका कथन सत्य है। मैंने लिखने पर अधिक तथा प्रकाशन पर कम ध्यान दिया। यह भी सही है कि मैं प्रकाशन में पिछड़ा हूँ। मेरी प्रदर्शन से दूर रहने की भावना ने मुझे उदासीन बनाया है। मुझे संकोची बनाया है। आर्थिक संकोच भी सामने खड़ा रहा है। लिखने में मुझे आनन्द आया है, प्रदर्शन में नहीं, मुझे अंतर्मुखी बना दिया। अब यह मेरी मानवीय कमजोरी बन गई है। चालीस–पचास वर्ष पूर्व में जिस पंक्ति में खड़ा होता, उससे मैं पिछड़ गया हूँ। शायद नियति को यही स्वीकार था।

प्रियंका शर्मा : उमर खैयाम की रूबाइयों का राजस्थानी में अनुवाद करने के अनुभव से आपने क्या पाया?

डॉ. शर्मा : उमर खैयाम की रूबाइयों का राजस्थानी में अनुवाद करने में बड़ा आनन्द आया। इसमें अपना एक आध्यात्मिक चिंतन है। इसमें जीवन की असारता, लक्ष्य के प्रति समर्पण और मन–मस्ती के साथ जीवन जीने की रसात्मक अभिव्यक्ति है। शराब तो भावों के चित्रण का एक माध्यम मात्र है उमर खैयाम के लिए। रसात्मकता की अनुभूति को बल मिला, चिंतन में एक चेतना आई तथा सत्य को समझने के लिए दृष्टि मिली।

प्रियंका शर्मा : वस्तुतः आजादी के बाद का काव्य मोहभंग का काव्य कहा गया है क्योंकि आजादी की कल्पना आज भी देश में साकार नहीं हो पाई है, लोगों में निराशा की स्थिति छा गई है। आपने यथार्थ स्थिति का चित्रण 'मोलकै रा सोरठा' द्वारा किया है। इसके लिए आपने सोरठों को ही क्यों चुना?

डॉ. शर्मा : सोरठा, एक प्रभावी छंद है। '**गागर में सागर**' भरने का यथार्थ भाव इसमें ही दृष्टिगत होता है। राजस्थानी साहित्य में तो '**सोरठियो दूहों भलो**' कहा गया है और 'तारा छाई रात' के सौन्दर्य से इसको जोड़ कर चित्रित किया है। इसमें भावों की कसावट–मँजावट, तीखापन, प्रभावी चित्रण, अभिव्यक्ति की आभा गुण सहजता से समाए रहते हैं। यह सबसे छोटा और मणि–माणक्य तुल्य चमकता हुआ रोचक छंद है। इसीलिए राजस्थानी के सभी संबोधन काव्य सोरठा छंद में ही लिखे गए हैं और उन्होंने लोकप्रियता

प्राप्त की है। राजिये रा सोरठा इसका ठोस प्रमाण है। इसलिए मैंने भी सोरठा छंद में समाज दर्शन को अभिव्यक्त किया है। यह एक प्यारा छंद है।

प्रियंका शर्मा : आप एक लेखक भी है और साथ ही साथ एक परम्परा का भी निर्वाह कर रहे है। क्या आप आज के लेखन की नई परम्परा या उत्तर – आधुनिकता के विचारों से सहमत है।

डॉ. शर्मा : उत्तर–आधुनिकता नवीनतम परिवर्तन का ही दूसरा नाम है। परिवर्तन होना एक अनिवार्य क्रम है। जो परिवर्तन मंथर गति से होता है, उसमे स्थायित्व होता है। जो तेज रफ्तार से होता है,उसमे स्थायित्व कम होता है। वह परिवर्तन अच्छा तो लगता है परन्तु क्षणिक भावों के साथ । एक झोंके की भांति आया परिवर्तन अच्छा भले ही लगे, उससे वैसा लगाव जुड़ाव नहीं होता।

परम्परा में आनन्द का एक प्रवाह होता है। उत्तर–आधुनिकता में नए प्रयोग,नई अभिव्यक्ति, नया सोच, नवीन कथ्य और शिल्प आदि सब कुछ है, चमक दमक भी है परन्तु जन जुड़ाव होनें के अवसर नहीं है। एक एक्सप्रेस ट्रेन की भांति आई और निकल गई। जन मन का जुड़ाव कहाँ ? और आनन्द के बिना साहित्य कहाँ ? बौद्धिक कसरत कह सकते है उसको। बुद्धि विलास तो है इसमें परन्तु आत्मा का आनन्द नहीं मिल सकता । अभी इसमें सहमत असहमत का निर्णय लेना जल्दबाजी होगी।

प्रियंका शर्मा : साहित्यकार की असली शक्ति क्या है ? जिसके बलबूते पर वह शताब्दियों तक जीवित रहता है ?

डॉ. शर्मा : समाज की संवेदनाओं से परिपूर्ण जन–मन के मर्म को स्पर्ष करने वाली अभिव्यक्ति तथा समाज के स्पन्दन को समझने वाली रचनाएँ ही साहित्यकार की असली शक्ति है। कालजयी रचनाएँ लेखक को अमर बनाती है। कबीर, सूर, तुलसी आदि की अमर रचनाओं की गहराई में गोता लगाने पर साहित्यकार की असली षक्ति का पता स्वतः लग सकता है। समाज से जुड़कर लिखी गई रचना साहित्यकार की असली शक्ति है। आदर्श और यथार्थ के समन्वय को सरस,सहज और सरल अभिव्यक्ति के साथ प्रस्तुत करने वाली रचना साहित्यकार की असली शक्ति है। उसी के बल पर वह समाज का अपना प्यारा बनता है।

विद्वानों के विचार

डॉ. उदयवीर शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे मे अनेक विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किये है जिनमें से कुछ विद्वानों के विचारों को यहाँ आपके समक्ष रखना चाहूगीं।

''एक साहित्कार में अपनी दुनिया मे रहने के कारण, व्यवहारिक पक्ष कमजोर नजर आता है। लेकिन उदयवीर जी के बारे मे यह स्थिति भिन्न है। उनकी सोच व्यवहारिक विमर्श से शूरू होती है, फिर उनके अनुभव का लाभ हम सभी को मिलता रहता है।

डॉ. गोरधन सिंह शेखावत

(निदेशक, कृष्णा सत्संग बालिका महाविद्यालय, सीकर)

——————

''डॉ. उदयवीर शर्मा को हिन्दी व राजस्थानी भाषा मे समान रूप से काव्य करने वाले श्रेष्ठ कवि है। डॉ. शर्मा को प्रकृति प्रेमी कवि है। आपके काव्य में राजस्थान की प्रकृति का सहज वर्णन है।''

डॉ. बद्री प्रसाद पंचोली

(शिक्षाविद्, साहित्यकार)

——————

''डॉ. उदयवीर को एक समर्थ रचनाकार है। जिन्होने अपनी लेखनी के माध्यम से अपनी सभ्यता ,संस्कृति आदि को जीवित रखा है। आप और आपके हमारे लिए प्रेरणादायी है।''

डॉ. कंचना सक्सेना

(शिक्षाविद्, हिन्दी विभागाध्यक्ष,)

——————

''आपके एकांकी संग्रह राजस्थानी संस्कृति चारु चरित्र उदात्त और उजली परम्परा के प्रत्यक्ष प्रमाण है। आपके साहित्य मे समाज और संस्कृति के भावों की त्रिवेणी प्रेरणा दायी है।''

गिरधर दान रतनू

(साहित्यकार)

——————

'' डॉ. शर्मा एक सुलझे हुए चिंतक है। आप सहजता, सरलता, विद्वता, निश्छलता, आत्मीयता, व्यवहार कुशलता आदि गुणों से युक्त है, इसलिए आप हम सभी के लिए देव तुल्य है।''

पं. सीताराम महर्षि

रतनगढ (कवि,साहित्यकार)

———————

'' डॉ. उदयवीर सजग कवि एवं संवेदनशील मनीषी है। वे मातृ भाषा व माटी की महक पर समर्पित परम्परागत संस्कृति के प्रबल हिमायती है। अपनी काव्य कथा में उन्होंने बेजोड़ मुहावरों और लोकोक्तियों के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्यों को इस रूप में उजागर किया है कि पाठक अभिभूत हुए बिना नहीं रह सकता ।''

डॉ. मोहन सिंह

(साहित्यकार)

———————

'' डॉ. शर्मा की लघुकथाएं कथ्य, शिल्प एवं संवेदना की दृष्टि से अनूठी एवं सरस है। इनमे मानव जीवन में व्याप्त दुःख दर्द उत्पीड़न और समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और शोषण आदि का सांगोपांग चित्रण है।

डॉ. बैजनाथ पंवार

(कथाकार)

———————

'' डॉ. शर्मा सरस्वती के सच्चे आराधक है। आपका जीवन सांस्कृतिक मूल्यों मानवीय सरोकारों एवं प्रगतिशील चेतना से संपन्न रहा है। आपने साहित्य की विविध विधाओं मे साधिकार कलम चलाई है।''

डॉ. प्रताप सिंह राठौड

(साहित्यकार)

———————

'' डॉ. शर्मा सभी विधाओं में लिखने वाले एक सिद्धहस्त साहित्यकार है। आपको काव्य एवं इतिहास की भी अच्छी जानकारी है।''

रामनिरजंन शर्मा

(कवि व साहित्यकार)

———————————

'' पुरुष प्रधान युग मे डॉ. उदयवीर शर्मा ने भारतीय एवं विशेषतः राजस्थानी नारियों के चरित्र–चित्रण पर विशेष ध्यान दिया है, और उनकी गौरव गाथाओं को चुना है। यह स्वयं में सराहनीय कार्य है।

डॉ. विनोद सोमानी 'हंस'

(साहित्यकार)

राष्ट्रीय संगोष्ठी शोध–पत्र वाचन

राष्ट्रीय संगोष्ठी, सादुलपुर(चूरू)
1–2 सितम्बर, 2012
'भारतेन्दु युगीन नाटक' विषय पर शोध–पत्र वाचन

राष्ट्रीय संगोष्ठी

ज्ञान - विज्ञानं विमुक्तये

MOHTA PG COLLEGE, SADULPUR (Raj.)

प्रायोजक
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग
केन्द्रीय क्षेत्रीय कार्यालय
भोपाल

1 व 2 सितम्बर 2012

प्रमाण–पत्र

आयोजक
हिन्दी विभाग
मोहता स्नातकोत्तर महाविद्यालय
सादुलपुर (चूरू)

प्रमाणित किया जाता है कि श्री/श्रीमती/सुश्री प्रियंका शर्मा पद व्याख्याता
महाविद्यालय / विश्वविद्यालय / संस्थान सोनादेवी सेठिया कॉलेज, सुजानगढ़
ने राष्ट्रीय संगोष्ठी "हिन्दी नाटक: तब और अब" में सहभागिता/ "भारतेन्दु युगीन नाटक"
विषय पर पत्र वाचन किया ।

सादुलपुर
2 सितम्बर 2012

PRINCIPAL
MOHTA COLLEGE
SADULPUR (CHURU)
प्रो. [illegible] राठौड
प्राचार्य

डॉ. संजू शर्मा
समन्वयक

राष्ट्रीय वेद सम्मेलन अजमेर (राज.)
9–10 फरवरी, 2013
‘जन्मभूमि का महत्त्व’ विषय पर शोध–आलेख वाचन

॥ मनुर्भव जनया दैव्यं जनम् ॥

राष्ट्रीय वेद सम्मेलन

वेद की विश्वमानवता को देन

(वेदमूर्ति डॉ. फतहसिंह जन्मशती महोत्सव)

९ – १० फरवरी २०१३, ऋषि–उद्यान, अजमेर

प्रमाण–पत्र

~~श्री~~ / ~~श्रीमती~~ / ~~सुश्री~~ प्रियंका शर्मा

पद शोध-छात्रा संस्था सोना देवी सेठिया कन्या महाविद्यालय, सुजानगढ़

इस द्वि–दिवसीय राष्ट्रीय सम्मेलन में संभागी रहे एवम् ‘जन्मभूमि का महत्त्व’

विषय पर शोध आलेख प्रस्तुत किया।

(डॉ. सुषमा सिंघवी)
अध्यक्षा, राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर

(डॉ. श्रद्धा शेखावत)
अध्यक्षा, ग्लोबल सिनर्जी समिति, जयपुर

(डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली)
समारोह–संयोजक, अजमेर

राष्ट्रीय सम्मेलन सरदारशहर (राज.)
21—22 जनवरी, 2015
'नारी सशक्तिकरण का एक पहलू यह भी' विषय पर शोध—आलेख वाचन

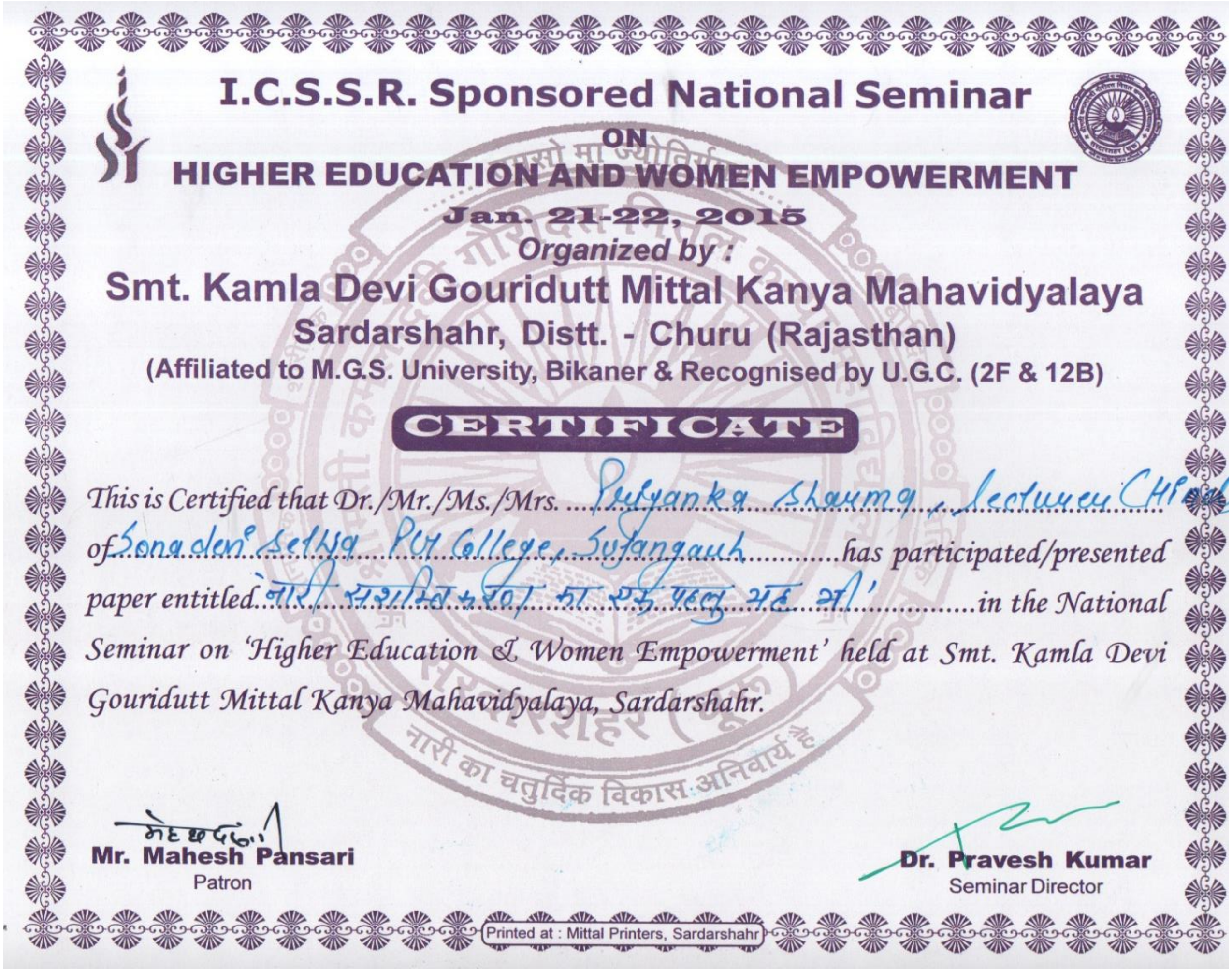

I.C.S.S.R. Sponsored National Seminar

ON

HIGHER EDUCATION AND WOMEN EMPOWERMENT

Jan. 21-22, 2015

Organized by :

Smt. Kamla Devi Gouridutt Mittal Kanya Mahavidyalaya

Sardarshahr, Distt. - Churu (Rajasthan)

(Affiliated to M.G.S. University, Bikaner & Recognised by U.G.C. (2F & 12B)

CERTIFICATE

This is Certified that Dr./Mr./Ms./Mrs. Priyanka Sharma, Lecturer CHI... *of* Sonadevi Sethia PG College, Sujangarh *has participated/presented paper entitled* 'नारी सशक्तिकरण का एक पहलू यह भी' *in the National Seminar on 'Higher Education & Women Empowerment' held at Smt. Kamla Devi Gouridutt Mittal Kanya Mahavidyalaya, Sardarshahr.*

नारी का चतुर्दिक विकास अनिवार्य है

Mr. Mahesh Pansari
Patron

Dr. Pravesh Kumar
Seminar Director

Printed at : Mittal Printers, Sardarshahr

राष्ट्रीय संगोष्ठी हिन्दी विभाग, चूरू (राज.)

19–20 अक्टूबर, 2013

'मनु स्मृति में स्त्री संरक्षण' विषय पर शोध–आलेख वाचन

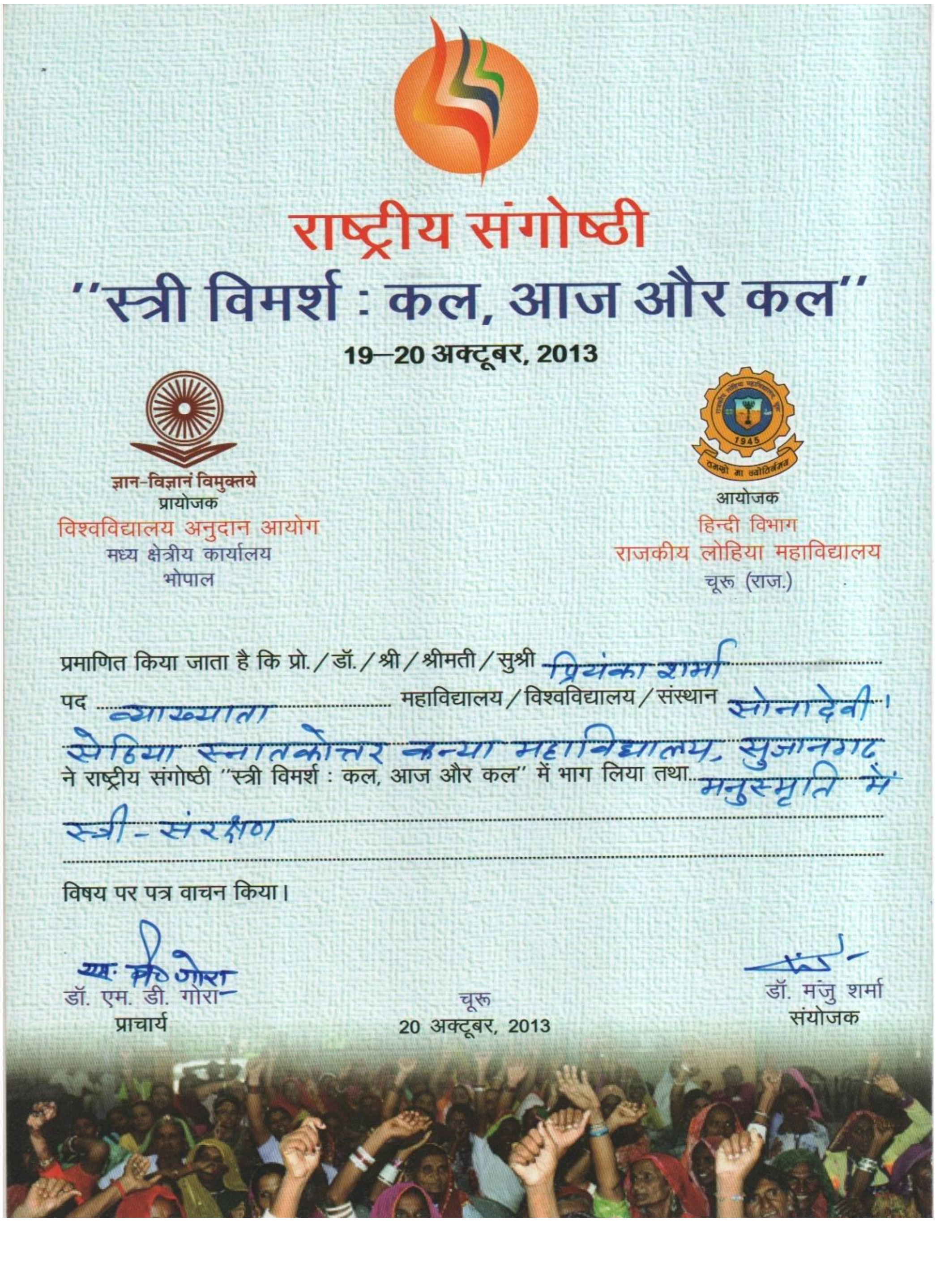

राष्ट्रीय संगोष्ठी

''स्त्री विमर्श : कल, आज और कल''

19–20 अक्टूबर, 2013

ज्ञान–विज्ञानं विमुक्तये
प्रायोजक
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग
मध्य क्षेत्रीय कार्यालय
भोपाल

आयोजक
हिन्दी विभाग
राजकीय लोहिया महाविद्यालय
चूरू (राज.)

प्रमाणित किया जाता है कि प्रो./डॉ./श्री/श्रीमती/सुश्री प्रियंका शर्मा
पद व्याख्याता महाविद्यालय/विश्वविद्यालय/संस्थान सोनादेवी सेठिया स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, सुजानगढ़
ने राष्ट्रीय संगोष्ठी ''स्त्री विमर्श : कल, आज और कल'' में भाग लिया तथा मनुस्मृति में स्त्री-संरक्षण
विषय पर पत्र वाचन किया।

डॉ. एम. डी. गोरा
प्राचार्य

चूरू
20 अक्टूबर, 2013

डॉ. मंजु शर्मा
संयोजक

राष्ट्रीय संगोष्ठी, हिन्दी विभाग राज.वि.वि. जयपुर (राज.)

6–7 अक्टूबर, 2012

शोध–आलेख वाचन

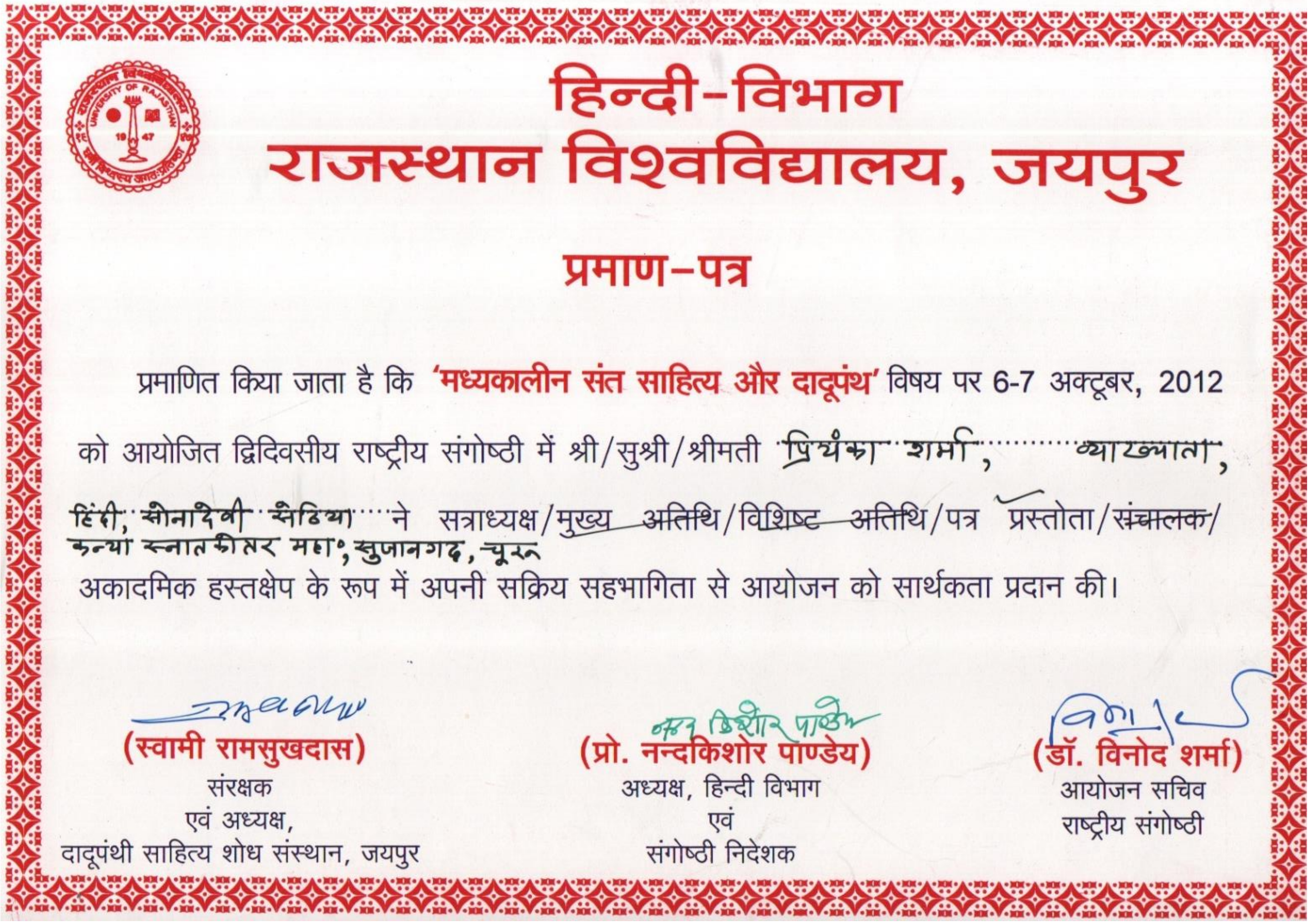

हिन्दी-विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **'मध्यकालीन संत साहित्य और दादूपंथ'** विषय पर 6-7 अक्टूबर, 2012 को आयोजित द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में श्री/सुश्री/श्रीमती प्रियंका शर्मा, व्याख्याता, हिंदी, सोनादेवी सेठिया कन्या स्नातकोत्तर महा०, सुजानगढ़, चूरू ने सत्राध्यक्ष/मुख्य अतिथि/विशिष्ट अतिथि/पत्र प्रस्तोता/संचालक/अकादमिक हस्तक्षेप के रूप में अपनी सक्रिय सहभागिता से आयोजन को सार्थकता प्रदान की।

(स्वामी रामसुखदास)
संरक्षक
एवं अध्यक्ष,
दादूपंथी साहित्य शोध संस्थान, जयपुर

(प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय)
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
एवं
संगोष्ठी निदेशक

(डॉ. विनोद शर्मा)
आयोजन सचिव
राष्ट्रीय संगोष्ठी

प्रियंका शर्मा,
सोनादेवी सेठिया कन्या महाविद्यालय,
सुजानगढ़ (चूरू)।

राष्ट्रीय वेद सम्मेलन 9–10 फरवरी, 2013 अजमेर (राज.),
'जन्मभूमि का महत्त्व' विषय पर शोध–आलेख वाचन

जन्मभूमि का महत्त्व

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरियसि

वेद ईश्वर की ओर से हमें प्राप्त हुए है। इसें अनेक प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है। वेद शब्द का अर्थ ज्ञान से अभिभूत करवाना है, वह ज्ञान ईश्वरीय ज्ञान है। वेद मन्त्रों को श्रुति कहा जाता है, जिसका अर्थ सुनने से है। मनुष्य अनादि काल से नित्य ज्ञान प्राप्ति के लिए वेद श्रुतियों का श्रवण करते रहें है ।

मनुष्य हमेशा से ही कष्टों से घिरा हुआ है। मनुष्य जीवन में, समाज में, और राष्ट्र में, जब भी कोई समस्या आई है, जिसका समाधान लौकिक उपायों द्वारा नहीं हो तो उसके निवारणार्थ वेदों को ही आधार बनाया जाता है। वेद ही हमें वास्तविक ज्ञान प्रदान करता है। आज समाज के मानवों में मानवता, इंसानों में इंसानियत की कमी हो रही है। इसके मुख्य कारणों मे से एक युवाओं की पलायनवादी सोच है। आज के युवा विदेशों मे जाकर रच–बस रहे है, जिस कारण से भारतीय सभ्यता संस्कृति पर पश्चिमी चादर छा गई है। आज युवाओं के मन में मातृभूमि के प्रति अलगाव की भावना पनप रही है। युवा अपना आधारभूत ज्ञान यहां से अर्जन करते है, लेकिन अपने तुच्छ स्वार्थ धन प्राप्ति के लिए वे अपनी मातृमना राष्ट्रधरा छोङ विदेश चले जाते है। हम जिस भूमि पर जन्म लेते है, उस भूमि का हमारे ऊपर ऋण रहता है। उसका हमारे जीवन में विशेष महत्त्व होता है।

जन्मभूमि का महत्त्व अथर्ववेद के बारहवें काण्ड के प्रथम सूक्त जिसे पृथ्वी सूक्त कहते हैं, मे देखने को मिलता है। अथर्ववेद में पृथ्वी सूक्त(12/1/45) भारत भूमि, भारतवर्ष की संस्कृति, भारतीयजन तथा भारतीय राष्ट्रीयता इन सबका अति पुरातन महत्त्वपूर्ण आधार है। इस सूक्त में कुल 63 मन्त्र हैं, इन मन्त्रों में मातृभूमि के प्रति अपनी प्रगाढ़ भक्ति का परिचय दिया है। अथर्वा ऋषिने इस सूक्त में पृथ्वी के आधिभौतिक और आधिदैविक दोनों रूपो का स्तवन किया है। कहीं भौगोलिक दृष्टि से इसके नैसर्गिक सौन्दर्य का चित्रण है, और कहीं पौराणिक वर्णन का बीज भी उपलब्ध होता है। यहाँ सम्पूर्ण

पृथ्वी ही माता के रूप में दिखाई देती है, और उसने बड़ी भक्ति से इस रत्नगर्भा वसुधा का गुण गान किया है ।

यह सूक्त उन युवाओं के लिए प्रेरणास्पद है, जो इस वसुधा पर विश्वास नही करते है। पृथ्वी सूक्त में कहा गया है, कि भूमि हम सब की माता है, हम सब इसके पुत्र हैं–

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्यां ।

यह भूदेवी अपने सच्चे सेवक के लिए श्री एवं विभूति के रूप में परिणत हो जाती है। उसके ही द्वारा सबका पालन पोषण होता है।

विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा ,हिरण्यवक्षा जगतो निवशानी ।

अर्थात विश्व का भरण पोषण करने वाली, धन को धारण करने वाली, गृहरूपा, सोने की खान रूप वक्षस्थल वाली नश्वर संसार का आधारभूत जो भूमि है, वो हम सब का कल्याण करें। इस मन्त्र में भूमि के लिए आया हिरण्यवक्षा संज्ञा इस पवित्र भारत भूमि के लिए ही है, जो आज भी सोने की चिड़िया के रूप मे प्रचलित है। इसलिए सभी युवाओं को अपनी जन्मभूमि को ही कर्मभूमि बनाना चाहिए, जिससे वे अपने ऊपर ऋण का कुछ अंश तो सेवा के रूप में चुका सके ।

सायणाचार्य ने इस सूक्त के मन्त्रों का अनेक लौकिक लाभों के लिए भी महत्त्व बताया है। इस पृथ्वी सूक्त में मातृभूमि की सेवा का संकल्प किया गया है। –

यस्या पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे, यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन् ।
ग्वामश्वानां वयसश्च विष्ठा, भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु ।।

अर्थात जिस पृथ्वी पर हमारे पूर्वजों ने विशिष्ट कर्म किया, जिस पर देवताओं ने असुरों को पराजित कर दिया था, जो गायों, घोड़ों और पक्षियों का निवास स्थान है। वह पृथ्वी हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । इस मन्त्र के द्वारा यही कामना कि गई है कि जिस पृथ्वी की हमारे पूर्वजों ने सेवा की हम भी वहीं रहकर उसकी सेवा से ही सब कुछ प्राप्त करें इसके लिए हमें कही अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं है ।

असबाधम् मध्यतो मानवानाम्,यस्या उद्वतः प्रवृतः समंबहु ।
नानावीर्या औषधिर्या विभर्ति पृथिवी नः प्रथतां राध्यताम् नः।।

इसकी व्याख्या में सायणाचार्य ने कहा है –

उन्नत प्रदेश, उतंग शिखर अति सुंदर, नीचे वसुन्धरा, नीचे बहते निर्झर
वे हरे भरे मैदान मनोरम समतल, मानव के समुख सावकाश अगणित थल,
जिस पर शोभित है, जो भारत की धरती बहुशक्तिभरी ओषधियाँ धारण करती,
वह भूमि हमारे लिए परम विस्तृत हो, उसके आराधन से हम सबका हित हो ।।

इस भारत भूमि की हम सब आराधना करतें है, यह हम सब का कल्याण करने वाली है अतः हमें यहां से कहीं अन्य जाने की आवश्यकता नहीं है ।

जनं विभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम् ।
सहस्त्र धारा द्रविणस्य मे दुहा, ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ।।

अर्थात यह भारत भूमि अनेक धर्मों को पालन करने वाली है यहां अनेक विद्वान निवास करते है। यह कामधेनु के समान सभी की कामना को पोषित करने वाली है। यही हमें स्थायी धन संपदा प्रदान करने वाली है। भगवान राम ने भी जन्मभूमि का महत्त्व बताया है –

अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते, जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरियसी

अर्थात हे लक्ष्मण सोने की लंका भी मेरे लिए महत्त्वहीन है, क्योंकि जननी और जन्मभूमि का महत्त्व स्वर्ग से भी ज्यादा है। हम सब के जीवन में प्रेम का अधिक महत्त्व होना चाहिए न कि धन दौलत का। अथर्ववेद का संज्ञान सूक्त ५/१६ में भी हमें राष्ट्रीय मानवतावाद की शिक्षा दी गई है –

येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः ।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्य ।।

अर्थात जिस प्रेम से देवगण एक दूसरे से पृथक् नहीं होते और नहीं आपस में द्वेष करते है, उसी ज्ञानको तुम्हारे परिवारमें स्थापित करता हूँ। सब पुरुषोंमें परस्पर मेल हों ।

जयय स्वन्तः चित्तिनो मा वियौष्ट, संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः ।
अन्योन्यस्मै वल्गु वदन्तो यात, समग्रास्थ सध्रीचीनान् ।।

अर्थात श्रेष्ठता प्राप्त करते हुए सब लोग ह्रदयसे एक साथ मिलकर रहें, कभी भी अलग नहीं हो । एक दूसरे को प्रसन्न रखते हुए हम सभी एक दूसरे का भार

वहन करें। भारतीय वैदिक सभ्यता में तो अपने–पराये, मित्र–शत्रु, ऊँच–नीच, जाति–वर्ग, आदि का भेद किये बिना सभी के कल्याण की कामना की गई है –

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, माकश्चिद दुःख भाग्भवेत ।।

सन्दर्भ –

1. कल्याण – हिन्दू सांस्कृतिक अंक
2. ऋृक् सूक्त–संग्रह – तारिणीश झा
3. ऋृक् सूक्त–समुच्चय – डॉ. रामकृष्ण आचार्य
4. भारतीय दर्शन की रूपरेखा – प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा

श्रीमती प्रियंका शर्मा
व्याख्याता(हिन्दी)
सोनादेवीसेठियाकन्यामहाविद्यालय,सुजानगढ

राष्ट्रीय संगोष्ठी19–20 अक्टूबर, 2013 हिन्दी विभाग, चूरू (राज.)
'मनु स्मृति में स्त्री संरक्षण' विषय पर शोध–आलेख वाचन

मनुस्मृति में स्त्री संरक्षण

पिता रक्षति कौमारे, भर्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्राः, न स्त्री स्वातन्त्रयमर्हति।।
(मनुस्मृति)[1]

अर्थात् मनुस्मृति के अनुसार स्त्री को कभी स्वतन्त्र रूप से जीवन यापन नहीं करना चाहिए, किषौरावस्था उसे पिता के संरक्षण में, युवावस्था पति के संरक्षण में और वृद्धावस्था उसे पुत्रों के संरक्षण मे जीवन व्यतित करना चाहिए। हमारे मनिषियों ने यह मत स्त्रियों की सुरक्षा के लिए दिया था, इसलिए स्त्रियों की सुरक्षा के लिए दायित्वों का विभाजन तीन स्तर पर स्त्री सुरक्षा की व्यवस्था की गई–

1. किषोरावस्था –पिता द्वारा / भाईयों द्वारा
2. युवावस्था –पतिद्वारा
3. वृद्धावस्था –पुत्रों द्वारा

वर्तमान समय में स्त्रियाँ दूसरों के साथ–साथ अपनों से ज्यादा असुरक्षित है। स्त्री सुरक्षा की प्रथम कड़ी के रुप में पिता का दायित्व लेकिन समाचार पत्रों आदि से रोजाना पढने को मिलता है, कलयुगी पिता ने रिस्तों को तार–तार किया।[2] बेटी जिन माता–पिता की छाया में सर्वाधिक सुरक्षित समझि जाति है वही माता–पिता अपने स्वार्थों के चलते बेटियों को बेचते नजर आते है।

जिस भाई की कलाई पर रक्षासुत्र बांधकर बहिन भाई से अपनी रक्षा की कामना करती है वही कलियुगी भाई बहिनों को अपनी हवस का शिकार बनाते नजर आते है।

रामायण काल में सीता ने लंका मे निवास करते हुए रावण व अन्य राक्षसों से अपनी सुरक्षा के लिए तिनके का सहारा लिया था–

'....तृण धरी ओट कहत वैदेही ।

(सुन्दरकाण्ड)[3]

अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित रावण को सीता मात्र तिनके से भयभीत देती है और वह तिनका उसकी रक्षा करता है इसका कारण सीता और उस तिनके में भाई–बहिन का रिस्ता था। सीता का एक नाम भूमिजा भूमि से जन्म लेने के कारण था, वहीं तिनके को भूमि से उत्पन है भूमिज कहा जाता है। वह निर्जीव तत्व भी अपना कर्तव्य निर्वाह करता नजर आता है लेकिन वर्तमान समय में भाई इस रिस्ते को नकारते नजर आते है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में निर्देश है, कि पुत्री में पुत्रों की अपेक्षा माता के शरीर का अंश अधिक रहता है। इसलिए माता के धन की असली उत्तराधिकारी पुत्री होती है। लेकिन वर्तमान समय में पुत्रियों का यह अधिकार ही उसे अपने भाइयों से असुरक्षित बना रहा है।

दुसरा सुरक्षा का दायित्व पति का है। जीवन का सर्वाधिक भाग व अपने पति के घर में व्यतित करती है। जिस पति के लिए वह अपना सर्वस्व त्याग कर पति का प्रेम व सास ष्वसूर के स्नेह की कामना करती है,उसी गृह में स्त्री को अनेक यातनाए सहनी पड़ती है,लेकिन वह अपने पिता को किसी प्रकार का दुख ना हो इसलिए वह अपना दुख भी किसी को नहीं बताती है। अपने पिता की इज्जत के लिए वह ससुराल पक्ष की यातनाओं के खिलाफ भी कुछ नहीं बोलती हैं। वर्तमान समय में स्त्री जाति पर ससुराल पक्ष के अत्याचार घटने के बजाय बढते जा रहें है वो चाहे दहेज के लिए हो या अन्य किसी कारण सें हो। जिनमें दहेज के लिए अत्याचार सर्वाधिक देखने को मिलते है याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि स्त्री को प्राप्त धन पर स्त्री का ही अधिकार होता है–

पितृ मातृ भ्रातृदत्त, मध्यग्न्युपागतम्।
अधिवेदनिकाद्यं च, स्त्रीधनं परिकीर्तितम्।।

(याज्ञवल्क्यस्मृति)[4]

याज्ञवल्क्य के अनुसार विवाह होने उपरान्त ससुराल पक्ष, पीहर पक्ष आदि से मिले धन पर वधू का ही अधिकार होता है लेकिन वही धन उसके लिए असुरक्षा का कारण बन जाता है।

तीसरा महत्वपूर्ण सुरक्षा का स्तर वृद्धावस्था है। माता अपने पुत्रों के सभी प्रकार के कष्ट सहने को तैयार रहती है, लेकिन संतान के लिए माता की वृद्धावस्था समस्या बन जाती है। एक पुत्र अपने मॉ का कलेजा भी निकाल लेजा रहा होता है, और उसके गिरने पर उस मॉ के कलेजे से भी आवाज आती है – ''तुम्हे चोट तो नहीं आई बेटे।'' इसलिए कहा गया है कि –

''कुपुत्रो जायते क्वचिदपि कुमाता न भवती''

(दुर्गासप्तशती)[5]

यहा तक की ज्यादा संतान होने पर पुत्रों में माता–पिता के दायित्वों का झगड़ा भी देखने को मिलता है। इस विषय को रजतपट के माध्यम से भी कई बार दर्शाया गया है।

सन्दर्भ–

1. मनुस्मृति
2. समाचार पत्र : राजस्थान पत्रिका 27सितम्बर 2013
3. सुन्दर काण्ड
4. याज्ञवल्क्यस्मृति
5. दुर्गासप्तशती

पत्रिकाओं में प्रकाशित

शोध आलेख

International Refereed
Impact Factor : 4.012
'चिन्तन' अन्तरराष्ट्रीय रिसर्च जर्नल (ISSN : 2229-7227)
वर्ष 8, अंक 29 (पृ.सं. 204-209)
विक्रमी सम्वत्: 2074 (जनवरी-मार्च 2018)

प्रकृति के कवि – उदयवीर शर्मा

प्रियंका शर्मा
शोधार्थी
कोटा विश्वविद्यालय

शोध आलेख सार

डॉ. उदयवीर शर्मा का प्रकृति वर्णन अपने आप में अनूठा है। इनके काव्य मानवतावादी दृष्टिकोण व जीवन मूल्यों की गहरी भाव–भंगिमाओं से जुड़े हुए है। इनके माध्यम से समाज के क्रांतिकारी स्वरूप को भी उभारा गया है। इनकी रचनाएं छन्दोंबद्ध व व्यवस्थित है। कवि ने यथा स्थान स्वभाविक रूप से अनुप्रास, यमक, अन्योक्ति ,रूपक, मानवीकरण आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। इनके काव्यों में रसानुभूति सराहनीय है। इनकी रचनाएं सरसता के साथ–साथ दिशा प्रदान करने वाली है।

मुख्य शब्द : मनुष्य और प्रकृति, प्रकृति काव्य ।

प्रकृति भावों की सृष्टि है। वह सभी मनुष्यों को अपने–अपने हृदय के भावों के अनुरूप जोड़ती है, ताकि सभी उसके सौन्दर्य को अन्तर्मन की गहराई से जान सके। उसके सरस आनन्द की अनुभूति से सभी अपने आप को नौ रसों से परिपूर्ण मान सकते है। प्रकृति का सौन्दर्य बड़ा ही अनुपम है। वह एक तरफ तो सृष्टि की सर्जनता को दिखाता है, जैसे वृक्षों, लताओं का पुष्पों से श्रृंगार करना और सुन्दर दृष्य का अभिव्यक्त होना, वहीं सृष्टि के विनाश में प्रकृति में बाढ़, अकाल, तेज शीत, ग्रीष्म का प्रभाव भी दर्शाता है।

प्रकृति हमेशा से मनुष्य के साथ रही है। प्रकृति ही एक ऐसा वरदान है जिसका कोई विकल्प नहीं होता। मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्ध ऋतुओं के अनुसार बदलते हुए नजर आते है। इस परिवर्तन को हम देख सकतें है, और महसूस भी कर सकते है। कुदरत की इस बदलती व्यवस्था में सूरज चाँद का उदित होना और उनका अस्त होता,. ऋतु परिवर्तन के आधार पर सर्दी, गर्मी, वर्शा का आना जाना आदि इसी के उदाहरण है।

डॉ. उदयवीर शर्मा प्रकृति के कवियों की अग्रणी श्रेणी मे रहने वाले कवियों में सें एक है। कवि ने अपने साहित्य के माध्यम से प्रकृति काव्य मे ऋतुकाव्य का बड़ा ही मनोरम चित्रण किया है। कवि की सहज काव्य चेतना का आधार प्रकृति ही रही है। कवि ने स्वयं स्वीकार किया है ' मेरी काव्य चेतना की संवेदना प्रकृति है........ डांफी, सूंटो, मरुधरा री महक आदि रचनाओं मे मानव की संवेदना ही बोल रही है।' कवि उदयवीर ने प्रकृति के दो रूप स्वीकार कियें है– एक निर्माणक और दूसरा विनाशक । चाहे प्रकृति का कोई भी रूप रहा हो लेकिन उन सभी में प्रकृति हमेशा मनुष्य के साथ रही है।

राजस्थानी काव्य परम्परा मे तो प्रकृति ऋतु वर्णन पर्याप्त दिखाई देता है। जिनमे फाग, चौमासा, बारहमासा आदि का वर्णन प्रमुख है। कवि डॉ. उदयवीर शर्मा ने प्रकृति का सहज, सरल और मार्मिक वर्णन किया है। काव्य में प्रकृति का वर्णन करना हमेशा से ही कवियों के रूचि का विषय रहा है। राजस्थान मे इस परम्परा का निर्वाह बार–बार

होता रहा है। कवि डॉ. उदयवीर ने अपने काव्य के माध्यम से इस परम्परा को अक्षुण्ण आगे बढाया है। कवि ने अपने काव्य के माध्यम से रेतीलें धोरे, खेजडी, सर्दी, गर्मी आदि का स्वभाविक वर्णन किया है।

प्रकृति जहाँ सभी के लिए वरदान के रूप में दिखाई देती वहीं कभी–कभी विकराल होकर अभिशाप के रूप मे भी दिखाई देती है। कवि ने माना है कि प्रकृति का चाहे विनाशक रूप ही क्यों न हो लेकिन वह सौन्दर्यगत आकर्षण, भावना से जुड़ा हुआ जरूर है। इनकी मानवीकरण की भावना प्रकृति के साथ–साथ चेतन–सत्ता के साथ सम्बंध जोड़कर कहीं दार्शनिक रूप से उभरी तो कहीं अपनी समता व विषमता को लेकर विद्रोही रूप में प्रकट हुई है।

प्रकृति अपना रूप मौसम के अनुकूल परिवर्तन कर लेती है। गर्मी में जहाँ विकराल 'लू' का रूप धारण करती है तो वहीं वह सर्दियों मे कंपकंपाने वाली शीत लहर मे परिवर्तित हो जाती है। जिसका प्रभाव मानव, पशु–पक्षियों वनस्पति आदि सभी पर पड़ता है। इनके प्रकृति काव्य में पहली रचना है 'डॉफी' ।

डॉफी – डॉफी से तात्पर्य "उस कंपकंपाने तेज थपेड़ों सा प्रहार करने वाली पवन से है, जो सर्दी बढाने के साथ–साथ आम जन पर कहर ढाने वाली होती है।" डॉ. उदयवीर ने डॉफी के असहनीय शीत ऋतु के असहनीय प्रकोप का प्रभावी चित्रण किया है। डॉफी कवि का श्रेष्ठ ऋतु काव्य है, जिसके माध्यम से "कवि ने अपनी अनुभूतियों को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है।" प्रकृति अपनी अबाध गति से चलती रहती है। सर्दी, गर्मी, वर्षा, आँधी ,तूफान आदि अपने प्रभाव से जन जीवन को प्रभावित करते रहते है। जब शीत लहर (डॉफी) चलती है, तो वह गरीबों के लिए तो काल का रूप दिखाई देती है। सम्पूर्ण प्रकृति के वनस्पति, वृक्ष, लताएं डॉफी के क्रोध से भयभीत होकर मौन रहते हुए से प्रतीत होते है। डॉफी का प्रभाव सभी जीव जन्तुओं मनुष्यों पर भी समान रूप से दिखाई देता है, क्योकि इस ऋतु में कोई भी प्राणी स्वच्छन्द होकर कार्य नहीं कर सकता है। कवि डॉ. उदयवीर शर्मा ने अपने काव्य 'डॉफी' मे शीत लहर (डॉफी) का विभिन्न रूपों में चित्रण किया है।

'डॉफी' का मानवीकरण करना कवि की प्रतिभा का प्रमाण है। 'डॉफी' 'डाँचळी' मारती हुई फूल व कलियों को चर जाती है–

"डॉफी' मारै डाँचळी, फूल कळी चर फाल।
पीळा पड़िया पानड़ा, कळिया भेंटी काळ" ।।3।।

'डॉफी' के स्वरूप का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वह प्रकृति की रंगषाला में सफेद पर्दा तानकर अपना नया रूप दिखाने आती है–

"कुदरत री रंगसाळ में, तूं घोळो पट तांण।
डाकै डूँगर डूँगरी, नूओं रूप दिखण" ।।4।।

'डॉफी' कान के माध्यम से शरीर में प्रवेश करती है और नाक द्वारा बाहर आती है। यहाँ सर्दी–जुकाम लगने का चित्रण द्रष्टव्य है। 'डॉफी' के वेग का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं–

खुरड़ पगी खाथी घणी, ज्यूं घोड़े असवार।
फिरगी जिन्नै बोइया, ज्यूँ कुलक्खणी नार"।।19।।

'डॉफी' रूपहीन एवं नैणहीन होने के साथ–साथ हृदयहीन भी है–

"धूळ उड़ाती धाड़ती, धाड़ी री ज्यूं धाय।
रोळ गिदोळै रूंखडा, हिय हीणी तूं हाय" ।।63।।

'डॉफी' के आगमन पर कवि कहता है–

"कातिक मंगसिर काटिया आयो जद सूं पोह।
नागी नांचण लागगी खालड़ियां री खोह" ।।127।।

'डॉफी' का विकास क्रम–

अनदिखणी बेरो पड़ै, कातिक बाळक रूप ।
पो–माह छळकै, जोवनों गरणावै ज्यूं भूप ।।128।।
'डॉफी' अणरूपी होने पर भी खाने को दौड़ती है तो रूपवती होने पर तो क्या गति करती होगी ?
''अणरूपी नूं खावती रूप मिल्यां के हाल।
कुण सो तेरो ठांयचों, बता–बता दया बाळ''।।163।।
'डॉफी' बिना शरीर वाली है, पर सुबह चोर की भाँति भागती हुई नजर आती है–
डील डोळ ना डाकणी, ठैरण नै नां ढोरा ।
भाजै तू भाखवटै, चंचळ घण ज्यूं चोर।।166।।
'डॉफी' बिना शरीर की होते हुए भी मारक है–
'अणरूपी अमरयो, बणै रूपाळी मर जाय।
डॉफी नै कुण में गिणां आवै पळकै धाय'' ।।167।।
'डॉफी' क्षण में धीरे क्षण में तेज हो जाती है। वह छिप–छिप कर खाल को फाड़ती है–
''छिण हळवाँ छिन तावळी, छिन में नौ नौ ताळ।
छिण में अन्तरधान हो, ल्हुक–ल्हुक फाड़ै खाल।।240।।
'डॉफी' की विविध क्रियाओं में उल्लेख अलंकार द्रष्टव्य है–
''हिरणां ज्यूं भाजणी, पैनी ज्यूं तरवार।
चरचा री ज्यूं फैलणी, डांफी माला मार।।258।।
चैत्र मास आते–आते 'डॉफी' यौवनावस्था से वृद्धावस्था में आ जाती है–
''कैर कंकेड़ो खेजड़ो, मरू रोही सिणगार।
आभो सगळो उणमणो, मुळकी सैनै मार''।।28।।
कवि ने बागों व खेतों को गट करने वाली 'डॉफी' को चिड़चिड़े एवं खराब स्वभाव वाली कहा है–
''मोद भारया मुळकावता, बाग खेत बणराय।
इकल खोडली चाँदड़ी, गिटगी गट गट आय''।।14।।

कवि ने 'डॉफी' को विविध उपमानों से सम्बोधित किया है– डाकिनी, चाँदड़ी, धाड़वी, खुरड़पगी, कुलखणी बाँझ आदि। समाहार के रूप में कवि ने अपनी अभिलाषा प्रकट की है।

सूँटों – कवि उदयवीर शर्मा का दूसरा प्रमुख प्रकृति ऋतुकाव्य सूँटो प्रगतिशील समाजवादी दृष्टिकोण को लेकर रचा गया है। इसके माध्यम से कवि ने क्रांति का आह्वान किया है। जिस प्रकार प्रकृति मे जब सूँटों का आगमन होता है, तो चारों तरफ शांत वातावरण में भी हलचल मच जाती है और कुछ न कुछ परिवर्तन अवश्य होता है। परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है। तेज अंधड ही सूँटो है, इसमें चारों तरफ का वातावरण धूल से भरा हुआ होता है, और अपने तेज बल से पेड़ों को भी जड़ से उखाड़ने का सामर्थ्य रखता है। इसके पष्चात ही वर्षा का आगमन होता है, चारों तरफ प्रकृति मे ग्रीष्म का असहनीय प्रभाव समाप्त होकर वातावरण को सरसता से भरकर प्रकृति को सुन्दर बनाने में सहायक होता है।

उसी प्रकार जब पुरानी परम्पराएं जड़वत अपने पांव जमा लेती है तथा इन रूढ़ि परम्पराओं के कारण समाज मे कई बुराईयां अपना आकार विशाल करने लगती जो सभी के लिए अहितकारी होती है, इन परम्पराओं को जड़ से उखाड़ फेंकने हेतु परिवर्तन आवश्यक है, ताकि स्वच्छ सोच का निर्माण कर समाज मे कुछ नव निर्माण हो सके जो सभी मनुष्यों के हित मे हो उसके लिए परिवर्तन आवश्यक है।

'सूँटो' राजस्थानी प्रकृति का मूलभूत परिचायक शब्द है, जिसका अर्थ आँधी के साथ बरसात का आना है। सामान्यतः 'सूँटो' का तात्पर्य उसी तरह है जिस प्रकार से संस्कृत में झंझा या सवृष्टिक वात, अंग्रेजी में 'स्टोर्म' तथा उर्दू में 'तूफान' से है। इन सबका अर्थ लगभग एक ही है जो हवा अपने तेज वेग के साथ पानी को लेकर आगे की ओर वर्ष का ताण्डव नृत्य करती हुई निकल जाती है।

भूगोल शास्त्र के अनुसार 'सूँटो' के शास्त्रीय तात्विक शब्द 'चक्रवात' जो अंग्रेजी के साइक्लोन का पारिभाषिक शब्द माना जाता है। बवण्डर, ताइफून, प्रभंजन आदि शब्द चक्रवात का ही समदृष्टि शब्द माना है।

राष्ट्रीय कवि स्व. मैथिली शरण गुप्त ने जिस प्रकार अपने खण्ड काव्य 'पंचवटी' मे प्रकृति का वर्णन किया है, वैसा ही वर्णन उदयवीर जी ने अपने काव्य मे अपने छन्द में किया है। छायावादी कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने जिस तरह बादलों को क्रांति का अग्रदूत माना है, तथा समाज और देष मे परिवर्तन का प्रतीक माना है। उसी प्रकार कवि उदयवीर ने सूँटों को भी प्रकृति व समाज मे परिवर्तन लाने वाला माना है। सूँटो के आगमन से सभी जगह हलचल मच जाती है।

'सूँटो' प्रकृति के प्रकोप के रूप में कवि के भाव द्रष्टव्य है–

''सूँटो रो सरूप कुण बरनै, कुण माँडे ईरो चितराम।
सूंसाणो सरणाटै जाणौ , रूपहीन निरभीक निकाम"।। 7।।

जिस तरह मनुष्य के जीवन में दुःख–सुख, हर्ष, शोक, काम, क्रोध, लोभ आदि प्रवृत्तियाँ हल–चल मचाती हैं, उसी तरह प्रकृति में भी गर्मी सर्दी, आँधी, वर्षा, लू, डॉफी, सूँटों, बवण्डर आदि अपना प्रभाव डालती हैं। यह परिवर्तन ही प्रकृति एवं मानव का जीवन क्रम है।

इसलिए कवि ने मानव एवं प्रकृति को समदृष्टि बताया है–

"मिनखै रै मन में भी सूँटो क्रोध भाव रो सही प्रतीक।
दोनू बगणा एक पंथ सूं, पण स सूँटे री माटी लीक"।।121।।.
मिनखाँ रै मन में सागीडों, भवाँ रो आवै भूचाळ।
नासाँ फूलै डोरा तणज्या, माथो चकरी, तन बेहाल"।।122।।

कवि ने भौगोलिक स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा है कि जब सूँटों आता है, तो सबको काल की तरह निगलने लगता है।

"बिरखा ओला घणै बेगसूं, चढ़ चालै जद पून बिवाण।
रोही कापै खेती धूजै आवै, फॉफा बे परवाण"।। 2।।

'सूँटों' की पहचान का वर्णन कवि ने इस प्रकार से किया है–

"पून वेग यो सूँटोबाजै, भागै दोड़े बे परवाण।
ढूँढा गेरै, खेती भेळै, तोड़–फोड़ री सही पिदाण"।। 4।।

'सूँटो' के काल रूपी स्वरूप का वर्णन –

"घोर अँधेरों, बिजळी चिमकै, ढोल गुडे ज्यूं हो अरडाट।
धरती रो कण–कण थर्रावै, सूंसाटो माचै घर्राट"।। 5।।

सूँटो के जन्म की स्थिति का चित्रण –

"पून गोट जद बंधै जोर सूं, सूं–सावै उपड़ै सरनाट।
उन घड़िया में सूँटो जामै, चाल पड़ै करतो बरनाट"।। 6।।

कवि ने सूँटो के तीन गुण बताए हैं –

"मधनी सीतळ, गंध पून कद, सूँटो बाजै जोस विहीन।
तेज चालणो, ,खेत भेळणो, सूंसाणो मोटा गुण तीन"।। 10।।

पून (पवन) गोत्र में जन्म लेने वाला 'सूँटो' सीधी चाल कभी नहीं चलता ऐसा समय भी नहीं आता वह अपने कुकर्म को छोड़ दे।

"सूँटो कदे न सीधो चाल्यो, इसी घड़ी रो जलम कठै।
खुरड़ पगो, डॉफा मारणियों, पाट मिलाया गयो जठै"।।11।।

मरुधरा री महक – राजस्थान से राजस्थानी समाज का जीवन जुड़ा हुआ है। मातृभूमि से जुड़कर यहाँ की सभ्यता संस्कृति का हृदय स्पर्षी वर्णन करना लेखक की श्रेशठता को प्रकट करता है। डॉ. उदयवीर शर्मा ने भी अपनी श्रेष्ठता का प्रमाण अपनी रचनाओं के माध्यम से किया है।

कवि ने 'मरुधर री महक' काव्य के माध्यम से मरुभूमि का गुणगान किया है। मरुभूमि की प्रत्येक गतिविधि को विशेषता के रूप मे चित्रित किया है। राजस्थान मे हवा का बवन्डर तो साल भर ही रहता है जिसको यहाँ की लोक भाषा मे भतूळियों या भंभूळियों पुकारते है। जब इसका आगमन होता है तो यह अपने प्रभाव से कच्चे मकानों, पेड़–पौधों को तहस नहस कर देता है। इस के प्रभाव से व्यक्ति को कुछ भी दिखाई नहीं देता।

गिरणी खातो नभ नै चाल्यो, दोपार्‌या चढ़ पून विमाण।
जाणैं तपसी तप सागीड़ो, चाल पड्ये मुगति रै ठाण ।।

इसलिए इसके माध्यम से कवि ने व्यक्तियों को सही दिशा निर्देश दिया है।

''निशानो राखर दुनिया में आगे बढो घूमों''।

मरुधरा री महक मे मरुभूमि के महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है। मरुभूमि का उत्तम चित्रण करते हुए यहाँ की विषेशताओं सुख शान्ति और आनन्ददायक कार्यों के साथ राजस्थान की गौरव गरिमा का वर्णन उल्लेखनीय है।

सूरज सोनो ऊगळै, चंदों रंग सूरंग।
इमरत रमर्‌यो टीबड़ा, कण–कण नई उमंग ।।

खेजड़ी को राजस्थान का कल्पवृक्ष माना जाता है। यह वर्ष भर हरा भरा रहता है। वर्षा के अभाव मे भी इसका विकास अवरुध नहीं होता है। इसकी पतियां जहाँ पशुओं का आहार है, वही इसका फल (सांगरी) मनुष्यों की सूखी साक सब्जी मे सबसे महंगी सब्जियों मे राजस्थान का मान बढ़ा रही है। जेठ के महीने में धरा को धधकाने वाली लू की लपटे भी इसका कुछ नहीं बिगाड़ पाती। यह वृक्ष राहगीरों को विश्राम देकर उनकी थकान को मिटाता है। इसलिए इस वृक्ष का शुभ मांगलिक कार्यों मे पूजन का विधान भी बताया गया है।

मरु री गौरव गाथा जाणै, वेदां रो तू अमरो रूंख।
वीर बण्यों अर वीर बणाया काढ–काढ के करड़ी भूख।।

मरुस्थली के स्वर्णिम रेतीले धोरों की महिमा निराली है। दूर से देखने पर विशाल पर्वताकार रूप दिखाई देता है। ये गर्मी मे शीघ्र गर्म और सर्दी में शीघ्र ठंडे हो जाते है। इसी कारण यहाँ का वातावरण सुहाना होता है। इन धोरों के कण–कण मे तपस्वियों के तप और वीरों के शोर्य की गाथा समाहित है।

टीबै रै कण–कण में जोती, आण–बाण री वीरो ढेर।
इण कण सूं बणगा घण जोधा, जग नामी जंगलधर सेर।।

मरुभूमि का संध्या वर्णन तो अति रूचिकर और हृदय स्पर्शी बन पड़ा है। सायंकाल का' मनभावन वर्णन कवि ने सांझड़ली के रूप मे किया है।

आभो सागर रतन अपार, जड़–जड़ चूनड़ करदी त्यार।
सांझड़ली ओढी मुळकावै सरमावै, ढळकावै प्यार ।।

म्हारों गाँव – इस काव्य मे कवि ने गाँव की सभ्यता और संस्कृति का सजीव चित्रण किया है। गाँव के घर, गुवाड़,बाड़, खेत आदि का वर्णन उल्लेखनीय है। गाँव के तीज त्योहारों का वर्णन भी देखते ही बनता है।

इस प्रकार डॉ. उदयवीर शर्मा का प्रकृति वर्णन अपने आप में अनूठा है। इनके काव्य मानवतावादी दृष्टिकोण व जीवन मूल्यों की गहरी भाव–भंगिमाओं से जुड़े हुए है। इनके माध्यम से समाज के क्रांतिकारी स्वरूप को भी उभारा गया है। इनकी रचनाएं छन्दोंबद्ध व व्यवस्थित है। कवि ने यथा स्थान स्वभाविक रूप से अनुप्रास, यमक, अन्योक्ति ,रूपक, मानवीकरण आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। इनके काव्यों में रसानुभूति सराहनीय है। इनकी रचनाएं सरसता के साथ–साथ दिशा प्रदान करने वाली है।

संदर्भ---

1. डॉफी (1973 राजस्थानी ऋतु काव्य)
2. सूँटो (1980, राजस्थानी ऋतु काव्य पुरस्कृत)
3. म्हारों गाँव, (राजस्थानी दोहा शतक)
4. मरुधर री महक (राजस्थानी ऋतु काव्य)

पत्र–पत्रिकाएँ

1. वरदा – बिसाऊ (राजस्थानी)
2. मरुभारती – पिलानी
3. मरु श्री – चूरू
4. राजस्थानी भारती – बीकानेर

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
website : www.chintanresearchjournal.com

यतेमहि स्वराज्ये
ISSN : 2348 – 876X
Impact Factor 3.707

International Refereed

आर्य

अंतरराष्ट्रीय मूल्यांकित रिसर्च जर्नल
(कला, साहित्य, मानविकी, समाज-विज्ञान, विधि, प्रबंधन, वाणिज्य एवं विज्ञान विषयों पर केंद्रित)
(Indexed & Listed at : Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest. U.S.A.)
(Indexed & Listed at : Copernicus Poland)
(Indexed & Listed at : Research Bib., Japan)
(Indexed & Listed at : Indian Journal Index (IJIND EX))
(Indexed & Listed at : UGC Journal List No.45522)

वर्ष : 4 अंक : 16
विक्रमी सम्वत् : 2074
सृष्टि सम्वत् : 1960853118
दिसम्बर 2017 – फरवरी 2018

संपादक
आचार्य (डॉ०) शीलक राम

यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्

आचार्य अकादमी, भारत
ISO : 9001-2008

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द
बबीता देवी **524-527**
राष्ट्रीय एकता के विकास में भारतीय भाषाओं का योगदान
चाँद कँवर **528-531**
भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी की बढ़ती उपयोगिता
अमनदीप कौर **532-535**
रामदरश मिश्र के उपन्यासों में नारी चेतना
सुनीता **536-539**
वैश्विक स्तर पर हिन्दी की पहचान
अंजू रानी **540-543**
सूचना प्रौद्योगिकी का हिन्दी प्रचार में योगदान
मंजु 544-547
Weather Changes in India Arising Out Warming Atmosphere
Dr. Archana Chauhan 548-550
Hybrid System Architecture: A novel approach for Decision-Support System
Dr. Pankaj Kumar Jain 551-554
दलित साहित्य के विविध आयाम व अनेकशः सरोकार
डॉ॰ लीमचन्द 555-561
डॉ. उदयवीर शर्मा की सम्बोधन काव्य परम्परा
प्रियंका शर्मा 562-569
संगीत एवं रस का पारस्परिक संबंध
Dr. Priya 570-573
ਅਰਥ ਤੇ ਅਨੁਭਵਾਂ ਦਾ ਸੰਗ੍ਰਹਿ 'ਮਾਲਾ-ਮਣਕੇ'
ਡਾ. ਗੁਰਜਿੰਦਰ ਕੌਰ 574-578
ਸੁਖਬੀਰ ਦੇ ਨਾਵਲਾਂ ਵਿੱਚ ਸ਼ਹਿਰੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ
ਡਾ. ਗੁਰਮੇਜ ਸਿੰਘ 579-584
ਨਾਰੀਵਾਦੀ ਸਾਹਿਤ ਸਮੀਖਿਆ : ਇਕ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ
ਡਾ. ਸਿਮਰਤ ਪਾਲ 585-588

आर्य रिसर्च जर्नल
International Refereed वर्ष:4, अंक: 16, (दिसम्बर 2017-फरवरी 2018) (पृ.सं. 562-569)
(ISSN : 2348 – 876X)
Impact Factor 3.707

डॉ. उदयवीर शर्मा की सम्बोधन काव्य परम्परा

प्रियंका शर्मा
शोधार्थी
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा
(राजस्थान)

शोध-आलेख सार

कवि डॉ. उदयवीर शर्मा सम्बोधन काव्य परम्परा के शीर्शस्थ कवियों की पंक्ति मे विराजमान है। कवि की श्रेश्ठ रचना 'मोलकै रा सोरठा' कुल 886 सोरठे अपने आत्मीय बंधु डॉ. अमोलक चन्द जांगिड (प्रेम-भरा इतर नाम मोलका) को संबोधित किये है। राजस्थानी कवियों मे ऐसे अन्य कोई कवि नहीं है, जिन्होंने इतने सोरठे लिखे हो। यह अपने आप में विशिश्टता है।

मुख्य-शब्द : प्रगतिवाद, कर्मयोगी, निष्काम भाव, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण ।

भारतीय वाड्मय में सम्बोधन काव्य परम्परा समृद्ध एवं सुदृढ़ है। इसके प्राचीनतम उदाहरण तो ऋग्वेद की ऋचाओं में उपलब्ध हैं। इन्द्र, अग्नि, सोम, वरुण आदि देवताओं को बारम्बार सम्बोधित किया गया है। उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत तो सम्बोधन शैली से भरपूर हैं।

काव्य मे सम्बोधन की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। भाशा के विकास के साथ ही सम्बोधन की परम्परा शुरू हुई जो आज तक अनवरत चल रही है। वेदों व पुराणों मे दी गई शिक्षा भी सम्बोधन के ही माध्यम से हुई है। प्राकृत, पाली और अपभ्रंश आदि में सम्बोधन के पुष्ट प्रमाण है तथा डिंगल गीत, दोहों एवं सोरठों में भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। राजस्थानी लोक साहित्य में भी इसके अनुपम उदाहरण मिलते हैं। ऋशि मुनियों ने अपना सम्पूर्ण ज्ञान भी किसी न किसी को सम्बोधित करके ही कहा है। गुरुओं द्वारा राजा महाराजों व राजकुमारों को शिक्षित करने का कार्य भी सम्बोधन के माध्यम से किया है। इसी परिपाटी में राजस्थानी काव्य परम्परा लम्बे समय से चली आ रही है।

सम्बोधन काव्य की हमारी राजस्थानी भाशा में अतीव दीर्घ व प्राचीन परम्परा रही है। संस्कृत, पाली, प्राकृत एवं अपभ्रंश का सम्बोधन काव्य राजस्थानी का उत्प्रेरक रहा है। राजस्थानी महिला गीतों मे भी इसकी अनुगूंज सुनाई देती है। राजस्थानी में सम्बोधन शैली के लिए दोहा व सोरठा छन्द को ही श्रेश्ठ समझ के चुना गया है। सम्बोधन काव्य मे इस अनुपम छन्द के चतुर्थ चरणांत मे इन निश्णात नीतिकारों ने अपनत्व का अमृत उडेलते हुए अपने प्रिय-पात्र को स्नेह सम्बोधन से सम्बोधित कर सुंदर नीति की नींव डाली जो कालांतर से आज तक चली आ रही है।

राजस्थानी काव्य में संबोधन काव्य की परम्परा नीति काव्य से शुरू हुई । राजस्थानी काव्य मे तो प्राय: किसी न किसी को सम्बोधन करके ही अपनी बात कहने की परम्परा रही है। कवि ने किसी को माध्यम बनाकर दोहे व सोरठे छन्द मे अपनी नीति विषयक उपदेशों को अभिव्यक्त किया है। इसी श्रृंखला मे कवि उदयवीर शर्मा भी अपना विशिष्ट स्थान रखते है। राजस्थानी लोक गीतों में भी राजस्थानी सम्बोधन काव्य की परम्परा अबोध रूप से उपलब्ध है।

राजस्थानी साहित्य का सम्बोधन काव्य वि.सं. 1530 में ईलिया को सम्बोधित करके लाखणसी के दोहे के बाद किसनिया, राजिया, रामला, नोपला, रेखला, मगनिया, मोतिया, दानिया, फूसिया, छोटिया, नानिया, हीरिया, कानिया, खानिया, केलिय, चतरसी, तुळसिया, मानिया, काळिया, चकरिया, आदिया, दूदिया, रमणिया(वि.सं. 1997), बैणिया, शैखरा, भायला, मालिया (वि.सं. 2028) शयला, इन्द्रवा (1990 ई.) साँवरा (1993 ई.) कीरत बावनी (1995 ई.) रामजी (1995 ई.) आदि सम्बोधन काव्यों के लोकप्रिय सोरठों का संक्षेप मे उल्लेख किया जाये तो एक सुदीर्घ परम्परा की महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है।" इसी परम्परा में 'मोलकै रा सोरठा' (1996 ई.) अपनी अहम भूमिका अदा कर रहे हैं। इनमें वंदना सहित 886 सोरठे हैं जो अब तक प्रकाशित ग्रन्थों में सबसे अधिक संख्या में है।

स्वतंत्रता प्राप्ति से कुछ समय पूर्व तक तो इस सम्बोधन काव्य परम्परा में आचरण विशयक परंपरित विशय ही इसे विभूशित करते रहे है, परन्तु इसके पश्चात यकायक उभरी भौतिकता एवं तज्जन्य स्वार्थपरायण उच्छृंखल आचरणता तथा परिवेश की विकृतियों ने कवियों के आक्रोशी स्वरों में इस सम्बोधान काव्य परम्परा में स्थान पाया है।

कवि डॉ. उदयवीर शर्मा सम्बोधन काव्य परम्परा के शीर्शस्थ कवियों की पंक्ति मे विराजमान है। कवि की श्रेश्ठ रचना **'मोलकै रा सोरठा'** कुल 886 सोरठे अपने आत्मीय बंधु **डॉ. अमोलक चन्द जांगिड** (प्रेम-भरा इतर नाम मोलका) को संबोधित किये है। राजस्थानी कवियों मे ऐसे अन्य कोई कवि नहीं है, जिन्होंने इतने सोरठे लिखे हो। यह अपने आप में विशिश्टता है।

डॉ. उदयवीर शर्मा की प्रस्तुत कृति **'मोलकै रा सोरठा'** मे सात शतक है, जिनका विवरण निम्न प्रकार है-

1. पहला शतक - जय जवान जय किसान : 182 सोरठे
2. दूसरा शतक - पर्यावरण (ऋतुओं की रंगोली - सर्दी, गर्मी आदि):114 सोरठे
3. तीसरा शतक - पर्यावरण (प्राकृतिक-सांस्कृतिक स्वरूप) : 120 सोरठे
4. चौथा शतक - परदूशण (सामाजिक और सांस्कृतिक) : 123 सोरठे
5. पांचवा शतक - भावा री बानगी : 112 सोरठे
6. छठा शतक - अन्योक्तियां (व्यंग्योक्तियां) : 112 सोरठे
7. सातवां शतक - सुरंगी सीख : 123 सोरठे

इस काव्य मे इन सात शतकों से सम्बोधन काव्य - परम्परा में निम्नलिखित विशेशताएं दिखाई देती है। -

1. कवि डॉ. शर्मा ने परम्परित विशयों के अतिरिक्त प्रकृति, संस्कृति, पर्यावरण आदि नवीन विशयों से जुड़ी अपनी मौलिक भावनाओं का समावेश कर इसे मौलिक व युगापेक्षी बनाया है।
2. यह 886 सोरठों का विशद् काव्य है, इतने छन्द अन्य किसी सम्बोधन काव्य मे प्राप्त नहीं होते। अत: यह काव्य सहज ही प्रथम स्थान का अधिकारी है।
3. कविश्रेश्ठ डॉ. शर्मा ने प्रत्येक शतक के प्रारम्भ में मंगलाचरण प्रस्तुत कर विशय का प्रतिपादन किया है।
4. इसमें परम्परा एवं नवीनता का सर्वत्र शैलीगत समन्वय भी दृश्टिगोचर होता है।

(1) पहला शतक : (जय-जवान-जय किसान, कुल 182 सोरठे)

हमारे देश के प्रधानमंत्री स्व. लाल बहादुर शास्त्री जी अपना जीवन राष्ट्र को समर्पित कर, विजय-किरण का प्रकाश देश को देकर 'विजयघाट' की समाधि में चिर-निद्रा में विलीन हो गये । इनके विजय घोष 'जय जवान-जय किसान' से प्रेरित होकर कवि ने इस शतक की रचना की है। राष्ट्र जीवन में 'जवान' और 'किसान' दोनों का ही समान महत्त्व है। जवान से राष्ट्र की सुरक्षा है तो किसान से राष्ट्र का विकास और समृद्धि सम्भव है। शास्त्री जी के साथ-साथ कवि भी इस बात को जानता है-

1. जय-जवान

वीर के रूप में जवानों का वर्णन राजस्थानी वीर काव्य में पर्याप्त मात्रा में मिलता है। पूरा डिंगल साहित्य वीरों के बलिदान और शौर्य सें बेजोड़ भी है। डिंगल का वीर रस संसार के साहित्य में अजर-अमर है और बेजोड़ भी है। राजस्थान का इतिहास और राजस्थानी का साहित्य 'कागद पर कलम अर स्याही सूँ नहीं लिखा गया है, बल्कि 'धोरां री रेत में तलवार सूं खून में' लिखा हुआ है। इनके साक्षी कर्नल टाड और टैसीटोरी आदि विदेशी विद्वान हैं। इस शतक पर भी इस परम्परागत इतिहास और साहित्य की छाप स्पष्ट झलकती है। भले ही परिवेश आज के सीमान्त क्षेत्र और आधुनिक वैज्ञानिक युद्धों पर हो।

कवि की परम्परागत युद्ध-वर्णन के साथ निजी मौलिकता भी काफी दिखाई पड़ती है। कवि का युद्ध वर्णन भी अनुपम है-

धूं-धां उठै धमीड़, औळा-सा गोळा पड़ै।
मुड़-मुड पड़ै गदीड़ वीर झूझरयो, मोलका।।113।।
तूंतावै ज्यूं तात, सरणबट्ट हो गोळियाँ ।
अरि री काढै आंत, मौत विचरगी, मोलका।।114।।
हुँसर-हुँसर कै वार घुमड़ कै घेरणो।
लपक-लपक दे मार, बीर मांचरयो, मोलका।।115।।
सूंसावै सरणांट, सरणट्ट गोल्यां चलै।
गोळां रो गरणाट, वीर उपाडै, मोलका।।126।।

भारत वीरों की खान है। भारत के वीरों में आज भी बुजुर्गों की सहनाणी कायम है, और इस बात को संसार जानता है। भारत का नाम स्वर्ग तक प्रसिद्ध है। ऐसी कवि की मान्यता है। कवि प्रेम भाव से समर्पित है।

भारत भट री खाण, जग जाणै जोधा जबर।
पुरखा तणी पिछाण, इब लग गूँजै, मोलका ।।119।।
जग-जाहिर झूंझार, संतरी सौरभ सूरसों।
अरपूँ प्रेम अपार, मनड़ों वारूँ, मोलका।।131।।

जयकिसान

परम्परागत राजस्थानी साहित्य में जवानों (वीरों) की तुलना में किसानों का महत्त्व कम ही वर्णन में आया है। इस सत्य को कौन नकार सकता है फिर अर्थ प्रधान युग और कृषि प्रधान देश में किसान के महत्त्व को कौन नहीं जानता है ? अब प्रगतिवाद के नाम पर सभी कलम के धनी किसानों का वर्णन करना ही अपना कर्त्तव्य समझते है। आधुनिक राजस्थानी साहित्य किसानों के वर्णन से अछूता नहीं है। कवि भी इस बात को जानता और समझता है -

करसै रा सुभ काम जीवण जोत जगावणां।
थरपै कीरत थाम, मनरी मोजा, मोलका।।132।।

किसान का जीवन त्याग-तपस्या का जीवन है। किसान कर्मयोगी एवं निष्काम भाव से जीवन बिताता है। किसान का महत्त्व कवि ने **'बेमुकुट रै गौपाल'** जैसा बतलाया है। कवि आगे बतलाता है कि किसान संसार का अन्नदाता और समृद्धिदाता है। ये सभी राग-रंग, ठाठ-बाट, राज-काज, हाट-व्यापार, किसान की मेहनत और खून-पसीने के बल पर ही फलते-फूलते हैं। किसान के जीवन की झाँकी कवि ने इस प्रकार प्रस्तुत की है।

तपै झेल संताप, मस्ती बाँटै मुळकतो ।
अणथक रीजै धाप, मौजी करसो, मोलका।।134

गाय चरातां ग्वाळ, खेतां माँही खेलरया।
बिना मुकट गोपाल, मुळकै गावै, मोलका।।136

एक लड़ाई सीमा पर लड़ी जाती है तो दूसरी लड़ाई खेत में लड़ी जाती है। किसान की लड़ाई 'भूख' के खिलाफ है जो सबकी बैरण है। इस लड़ाई को जीतने वाला वीर यौद्धा किसान ही है।

अरी भगावै वीर, भूख भगावै कृसक भट।
दोन्यूं मिल तकदीर, लिखै देस री मोलका।।177।।

इसीलिए कवि किसान को सचेत करता है कि-

चेत -चेत तू चेत, चिड़ियाँ चौफेरी चुगै।
खड़यो लकड़ खेत, मत खो प्यारा, मोलका।।133।।

(2) **दूसरा शतक-पर्यावरण** (रितुवाँ री रंगोळी, कुल-114 सोरठा) -

इस शतक में कवि ने पर्यावरण के अन्तर्गत ऋतुओं का साँगोपाँग वर्णन किया है। गर्मी, वर्षा एवं सर्दी आदि को उपादानों के रूप में काम लिया है। षड् ऋतुओं में कवि तीन ऋतुओं को राजस्थान के सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण मानता है। इनका विशुद्ध वर्णन कवि ने अपने काव्य में इस प्रकार किया है -

1. उन्याळों -

होगो एकोकर, अंधड़ आशो जोर सं।
बाळू रो संसार, मरु रो जीवन, मोलका।। 5।।
चिड़ी, कागला, मोर, चील, कमेड़ी गुरसळी।
चढ़ लूआ रै लोर, मर-मर जीवै मोलका।। 9।।

2. बिरखा -

चौमासै रो चाव, च्यारु कानी चिमरायो।
खेत-गुवाड़ी गाँव, मस्ती छावै, मोलका।। 30।।
रिम-झिम रिमझिम रोज, सावण बरसै सोवणो।
मन मुळक्यो ले मोज, मदरी रागाँ, मोलका।। 45।।
मैं रोई के जोर तूं क्यूं रोई बादळी।
हिवड़ै उठै हिलोर, बिरहन दिख्या, मोलका।। 73।।

3. स्याळो -

ठंडी चालै भाळ, काँपा पळ-पळ काळजो।
जाणै आगो काळ, मावठ रै मिस, मोलका।।101।।
हीटर मोला साथ, डील ढक्यों सुख-सोड सूं।
इब भी ठिरगा हाथ, पीसो नाचै, मोलका।।102।।

(3) **तीसरा शतक-पर्यावरण** (प्राकृतिक-सांस्कृतिक स्वरूप, कुल 120 सोरठे) -

दूसरे शतक की तरह ही कवि का तीसरा शतक भी पर्यावरण को ही अर्पित है परन्तु इसका रंगरूप बदल दिया है। प्रकृति का उपादान संस्कृति को समर्पित किया है। प्राकृतिक भौतिकवाद सांस्कृतिक, आध्यात्मिक आदि तत्त्वों की तरफ कवि ने संकेत किया है। टीबड़ा एवं खेजड़ी को भी त्यौहार और महापुरुषों के रूप में बदल दिया है। कवि की यही करामात इस काव्य में स्पष्ट झलकती है। -

1. टीबड़ा -

के टीबो के ढेर, सोनैरो यो सोवणो।
मन सूं दियो बंखेर, मरु धरपणियों, मोलका।।1।।
टीबा तीरी ढाळ, जाँटी ओपै झाड़की।

बिना मुकट गोपाल गुड़-गुड़ खेलै, मोलका।। 37।।

2. खेजड़ो -

दग्गड़ लाठी ढीम, खाऊँ बोल्यों खेजड़ों।
खडयों रुखळू सीम तपूँ तावडै मोलका।। 44।।
मींजर मीठी दाख, सोनै बरणी खेजड़ा।
मरुरी याही साख, साँगर-खोखा, मोलका।। 45।।

3. त्योंहार -

(क) तीज -

तिज्या रो त्युंहार, प्यार भरी रस पोटळी।
तीजिणया हो त्योर मद छक पीसै, मोलका।।86।।

(ख) गणगौर -

गौरी पूजै गोर, साजन देखै दूर सूं।
चंचंळ धण उण ओर, देख मुळक ले मोलका।।10।।

4. महापुरुष -

(क) भगवान राम -

राम, थारलो राज, सुमरयाँ सूं सुख संचरै।
सज बै सगळा साज, मन घुटरयो इब मोलका।।105।।

(ख) महात्मा गाँधी -

सुगणो सपूत, सत्य अहिंसा साधली।
पुतली बाई पूत, मोहन, मोहन मोलका।।108।।

(4) **चौथा शतक-प्रदूषण** (सामाजिक और सांस्कृतिक के कुल-123 सोरठे) -

इस काव्य का मूल आधार पर्यावरण है तो इसको भौतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रदूषण से भी खतरा है। पश्चिम के 'मास मीडिया' और यूरोप की 'अपसंस्कृति' से तो अपनी सदाबहार, सनातन संस्कृति को भी बड़ा खतरा है यह बात उदारीकरण और उधारीकरण की नीति पर चलने वाले राजनेताओं के बेटे राजनीतिक दलगत भावना को छोड़कर समझे तब ना। आज के इस समय में स्वदेश की भावना तो एक स्वप्न मात्र बन चुका है।

कवि प्रदूषण के भौतिक स्वरूप से कम और सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूप से अधिक चिंतित एवं भयभीत है। भौतिक प्रदूषण पर तो फिर भी 'हाय-तोबा' मची हुई है पर सामाजिक और सांस्कृतिक प्रदूषण पर बहुत कम लागों का ध्यान आकर्षित है। अपना 'इलेक्ट्रोनिक मीडिया' प्रदूषण के भौतिक रूप-भय पर ही प्रचार-प्रसार में एडी से चोटी तक का जोर लगाए हुए हैं, किन्तु सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप को स्वयं बढ़ावा दे रहा है, यह विडम्बना की बात है। "गुड़ तो खाय अर गुलगुलां रा पच करै है।" कवि का मूल उधेश्य इस तथ्य को उजागर करना है। दहेज-दानव, भ्रष्ट राजनीति, आर्थिक शोषण, मंहगाई की मार, भेदभाव, अभाव-अभियोग आदि पर कवि की नजर है तो कटते वन, नष्ट होते पशु-पक्षी, बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिक अभिशाप सिड़ते शहर और गंदलाते गाँव पर भी कवि ने लेखनी चलाई है। -

1. दहेज-दानव -

डाकी बण्यो दहेज, मोसी भोळी चिड़कल्यां।
उजड़ी सुख री सेज नरक बण्यो घर मोलका।। 6।।

2. आजादी रो अपरूप -

आभै अड़या अभाव, भरया पेट फिर-फिर श्रै।

आजादी रो चाव माड़ो पड़गो, मोलका।। 24।।

3. वोटांरी राजनीति -

आप लगावै आग, दमकळ ल्यावै दबड़कै।
घणो गंभीरो घाग, बोट बटोरै, मोलका।। 28।।

4. गन्दगी -

स्हैरां बीच सड़ाध, गावाँ माही गन्दगी।
बदबोई रो बाँध मचळै-उझळे, मोलका।। 92।।

5. औद्योगिक-अभिशाप -

धूं-धूं धूंवाँधार, कळ रो मळ फैल्यो घणो।
भस्मासुर रो वार, मुसकल बचणो, मोलका।। 93।।

6. जनसंख्या विस्फोट -

आवै कद ओसाण, देख देश री दीवळी।
खाण-पाण अर ठाण, मिलणा मुसकल मोलका।।100।।

7. सर्वनाश -

अजड्यो जीव-समाज, वन उजड़या उजडी धरा।
परदूसण री गाज, पडगह से पर, मोलका।।110।।

(5) पाँचवाँ शतक (भावों की बानगी, कुल 112 सोरठे) -

इस शतक में कवि ने इस काव्य के कथ्य एवं तथ्य का ही मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है। जनजीवन में मनुष्य की विविध भावनाओं की बानगी बतलाई है। लोगों के मन के क्षण-क्षण बदलते भाव और मनोविकृतियों का चित्रण किया है। इस मानसिक विकृतियों का प्रमाण एवं परिणाम आज के समाज में किस प्रकार से खेल-खिलाये जाते है, उसको कवि ने उद्घाटित किया है। -

पगा चालतो पाप, पुन्या में सै देखल्यो।
धामक धड़ियों धाप मौत नाचरी, मोलका।। 1।।
राजनीति रो धान, पोट बाँधियो धरम-पट।
ठावण दे कुण, मान सत पथ् चालो, मोलका।। 5।।
राजनीति रा खेत चरया ढ़ाढ़ा राजरा।
चिड़िया खायो खेत, ऊलैकिस विध, मोलका।।13।।

(6) छठा शतक (अन्योक्तियाँ-व्यंग्योक्तियाँ, कुल 112 सोरठे)

इस शतक में कवि ने आज के जन-जीवन पर अन्योक्तियों और व्यंग्योक्तियों के माध्यम से व्यंग्य बाण कसे हैं, और आज के मानव की समालोचनात्मक खाल खींची हैं। समाज को तीखी बातें सुनायी हैं।

फूल गयो झट फूल, स्वास्थ् अपणो साधकै।
दुनिया गैरै घूळ, मत बलियाँ पर मालका।। 8।।
बाजै दीन-दयाल कै मैं आयो काम कद।
खेलै तू भी ख्याल, माया मालिक मोलका।। 42।।
बाती डूबी तेल, कमर लुळी ज्यूं कामणी।
अन्त बळी यो खेल, प्रेमी खेलै, मोलका।। 63।।

(7) सातवाँ शतक (सुरंगी सीख, कुल 123 सोरठे) -

इस शतक में कवि ने समाज को 'सुरंगी सीख' देकर काव्य का समापन किया है।कवि ने समाज में जो भी देखा सुना और अनुभव किया उसके अनुरूप ही समाज के लिए सीख देकर कर्त्तव्य का

पालन किया है। संस्कृत नाटकों में 'भरत वाक्य' कहने की रीति रही है और इस परम्परा का निर्वाह करते हुए सीख देकर शुभ कामना करता है। यह रचना समाज को समर्पित करता है।

1. सीख -

राजै जनता-राज, तगड़ो ओपै त्याग सू।
त्याग रुल्यां के ताज, मच्छ गला गळ मोलका।। 7।।
मै झगडै री मूळ, रूँख बणै झट राड़ रो।
फळ खारा अर फूल, मन मिचळावै, मोलका।। 9।।
खोटो दाणो खाय, उन्नति चावै आपरी।
जड़ा मूळ सूं जाय, म्हैनत मोटी, मोलका।। 24।।

2. समरपण -

कीन्यां सबद वणाव, मन रस सूं उजळा करया।
जग सूं लीन्या भाव, जग नै अरप्या, मोलका।। 118।।

इस राष्ट्रीय पर्यावरण के सम्बोधन काव्य की साँगोपाँग विवेचना के बाद कवि डॉ. उदयवीर जी शर्मा की भाषा-शैली पर विचार करें तो वह राजस्थानी के पुनर्जागरण के लेखक श्री शिवचन्द भरतिया के ज्यादा नजदीक है। भावों के अनुसार ही भाषा-शैली है। काव्य पर आंचलिकता की छाप स्पष्ट रूप से झलकती है। कवि का काव्य शेखावाटी क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। इसी अंचल की प्रकृति लोक जीवन, भाव और भाषा कवि की लेखनी में स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ती है 'ठेठ राजस्थानी शब्दों का तो ठाठ ही है तत्सम शब्द कम और तद्‌भव शब्द अधिक अपनाये हैं। पारिभाषिक शब्दों के भी कवि ने तदभव रूप अपनाये हैं। काव्य में अनुप्रास, यमक, अन्योक्ति, अलंकारों के साथ परम्परागत वैण सगाई का भी प्रयोग हुआ है। रूपक एवं उपमाओं की छटा भी अनोखी है। शब्दों का चुनाव, जुड़ाव और संगठन प्रभावशाली, तथा मनमोहक हैं।

विचारों में पूर्णतया मौलिकता, राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति समसामयिक सजगता सीधी प्रभावकारी है। परम्परागत 'सोरठा' छन्द और सम्बोधन काव्य से कवि ने इस रचना को सज्जित मंडित कर इस काव्य ग्रन्थ को एक नया आयाम दिया है जो प्रशंसनीय है। कवि की रचना में परम्परा और प्रगति दोनों का समन्वय है, सोने और सुहागे के मेल जैसा है। यह रचना लोकप्रिय काव्य विधाएँ बावनी, बहत्तरी, सतसई आदि से आगे बढ़कर 'सात शतकावळी' के रूप में संजोयी गई है जिस में 886 सम्बोधन-सोरठे गूँथे गये हैं। आधुनिक राजस्थानी साहित्य में सम्बोधन काव्य की दृष्टि से यह एक मात्र सबसे बड़ी और प्रथम काव्य रचना है। **श्री दामोदर प्रसाद शर्मा** ने इस काव्य के विषय में लिखा है जो अवलोकनीय है-

"ओ काव्य ग्रन्थ विचारां रो बाग, भावाँ रो भण्डार अर अनुभूतियाँ रो आगार है। इन में विचारां री मौलिकता, राष्ट्रीय समस्यावाँ रै प्रति सम सामयिक सजगता सीधी प्रभावकारी है।

निश्कर्श : विशय वैविध्य से विभूशित एवं प्रभूत छन्द परिमाण युक्त कवि डॉ. शर्मा की रचना 'मोलकै रा सोरठा' कवि की कारयित्री व भावयित्री प्रतिभा का कीर्ति स्तंभ है। सोरठा छन्द मे अनुप्रास, यमक, अन्योक्ति आदि अलंकारो का प्रयोग, वैण सगाई (वर्ण साम्यता) की मनमोहक चित्त्ााकर्शक प्रस्तुति है। सभी की जबान पर कालजयी बनकर सभी का मार्गदर्शन करते रहेंगे। यह काव्य नीति, प्रकृति, पर्यावरण, राजनीति सम्बन्धी पद्यों से युक्त मधुर भाशा मे रचित है। ये शिक्षाप्रद होने के साथ ही रस पूर्ण भी है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ--------------------------------------

1. डॉफी (1973 राजस्थानी ऋतु काव्य) : डॉ. उदयवीर जी शर्मा
2. सूँटों (1980, राजस्थानी ऋतु काव्य पुरस्क5त) : डॉ. उदयवीर जी शर्मा

3. श्रीलाल शतक (1983, राजस्थानी पद्य पशस्ति काव्य) : डॉ. उदयवीर जी शर्मा
4. मनोहर शतक (1988 राजस्थानी पद्य पशस्ति काव्य) : डॉ. उदयवीर जी शर्मा
5. गंगाधर शतक (वि. सं. 2044, राजस्थानी पद्य पशस्ति काव्य) : डॉ. उदयवीर जी शर्मा
6. सुरजन सुजस (1992, राजस्थानी पद्य पशस्ति काव्य): डॉ. उदयवीर जी शर्मा
7. मौलके रा सौरठा (1996, राजस्थानी सम्बोधन काव्य) : डॉ. उदयवीर जी शर्मा
8. मेघदूत - श्री डॉ. मनोहर शर्मा

पत्र-पत्रिकाएँ

1. वरदा - बिसाऊ (राजस्थानी)
2. मरुभारती - पिलानी
3. मरु श्री - चूरू
4. राजस्थानी भारती - बीकानेर

राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, बीकानेर द्वारा राजस्थानी भाषा सेवा सम्मान 2003 से माननीय मुख्ययमंत्री श्री अशोक जी गहलोत द्वारा सम्मानित एवं अलंकृत होते हुए डॉ. उदयवीर शर्मा

सरस्वती सेवा पुरस्कार 2005 फतेहपुर शेखावाटी श्री नरेन्द्र कुमार धानुका, फतेहपुर शेखावाटी द्वारा सम्मानित एवं अलंकृत डॉ. उदयवीर शर्मा

जिला ब्राह्मण महासभा, झुन्झुनूं द्वारा डॉ. उदयवीर शर्मा को विप्र शिरोमणि उपाधि से सम्मानित करते हुए पुलिस महानिदेशक जे.पी. मिश्रा

गणतन्त्र–दिवस (2005) पर नगरपालिका अध्यक्ष (बिसाऊ श्री रामावतार चेजारा द्वारा डॉ. उदयवीर शर्मा का नागरिक अभिनन्दन

डॉ. उदयवीर शर्मा